संस्कृत साहित्य — परिचय

संशोधित संस्करण

विद्यया ऽमृतमश्नुते

एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
फ़रवरी 1985 फ़ाल्गुन 1906

संशोधित संस्करण
मई 2003 ज्येष्ठ 1925
अगस्त 2016 श्रावण 1938

PD 1T RA

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 1985
© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2016

₹ 90.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा डी.के. प्रिंटर्स, 5/16, कीर्ति नगर औद्योगिक क्षेत्र, नयी दिल्ली 110015 द्वारा मुद्रित।

ISBN 978-93-5007-805-1

- ❑ प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुन: प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- ❑ इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- ❑ इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टीकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 **फोन : 011-26562708**

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेट
बेंगलुरु 560 085 **फोन : 080-26725740**

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 **फोन : 079-27541446**

सी.डब्ल्यू.सी.कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 **फोन : 033-25530454**

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 **फोन : 011-26562708**

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	: *दिनेश कुमार*
मुख्य संपादक	: *श्वेता उप्पल*
मुख्य व्यापार प्रबंधक	: *गौतम गांगुली*
मुख्य उत्पादन अधिकारी (प्रभारी)	: *अरूण चितकारा*
संपादक	: *रेखा अग्रवाल*
उत्पादन सहायक	: *प्रकाश वीर सिंह*

आवरण
अमित श्रीवास्तव

पुरोवाक्

राष्ट्रिय-पाठ्यचर्या-रूपरेखायाम् अनुशंसितं यत् छात्राणां विद्यालयजीवनं विद्यालयेतर-जीवनेन सह योजनीयम्। सिद्धान्तोऽयं पुस्तकीय- ज्ञानस्य परम्परायाः पृथक् वर्तते, यस्याः प्रभावात् अस्माकं शिक्षाव्यवस्था इदानीं यावत् विद्यालयस्य परिवारस्य समुदायस्य च मध्ये अन्तरालं पोषयति। **प्रयासेऽस्मिन् विषयाणां मध्ये स्थितायाः भित्तेः** निवारणं, ज्ञानार्थं रटनप्रवृत्तेश्च शिथिलीकरणमपि सम्मिलितं वर्तते।

प्रक्रमस्यास्य साफल्ये शिक्षकाणां तथाभूताः प्रयासा अपेक्ष्यन्ते यत्र ते सर्वानपि छात्रान् स्वानुभूत्या ज्ञानमर्जयितुं, कल्पनाशीलक्रियां विधातुं, प्रश्नान् प्रष्टुं च प्रोत्साहयन्ति। इदमवश्यं स्वीकरणीयं यत् स्थानं, समयः, स्वातन्त्र्यं दीयते चेत्, शिशवः वयस्कैः प्रदत्तेन ज्ञानेन संयुज्य स्वयं नूतनं ज्ञानं सृजन्ति। किन्तु शिशुषु सर्जनशक्तेः कार्यारम्भप्रवृत्तेश्च आधानं तदैव सम्भवेत् यदा वयं तान् शिशून् शिक्षणप्रक्रियायाः प्रतिभागित्वेन स्वीकुर्याम, तदेतान्युद्देश्यानि पूरयितुं विद्यालयस्य दैनिककार्यक्रमे कार्यपद्धतौ च परिवर्तनमभिलक्ष्य नवीनानि पाठ्यपुस्तकानि प्रतिविषयं विकसितानि छात्राणां अध्ययनं आनन्दानुभूत्या भवेत् इत्येदर्थं शिक्षकाणां स्वशिक्षणपद्धतिपरिवर्तनमपि अपेक्षितं भवति संस्कृतसाहित्यस्य इतिहासः अतिविशालत्वेन समयबाहुल्यं (धैर्यमविहतां) जिज्ञासां च अपेक्षते। बहूनि पुस्तकानि अमुं (विषयमधिकृत्य) विद्वद्भिः विरचितानि। तानि च कायाकल्पविस्तारेण सुकुमारमतिच्छात्रेभ्यः स्वल्पसमयेन पठितुं विषयान् अवगन्तुं च क्लेशं जनयन्ति। राष्ट्रियशैक्षिकानुसन्धानप्रशिक्षणपरिषद्द्वारा संस्कृतसाहित्यपरिचयाभिधेयः ग्रन्थः पूर्वमपि प्रकाशितः, यत्र संस्कृतसाहित्येतिहासः संक्षिप्तरूपेण अध्येतॄणां कृते सुगमतया परिपोषित आसीत्।

प्रक्रमेऽस्मिन् तस्य ग्रन्थस्य नवकलेवरेण वेदेभ्य आरभ्य संस्कृतस्य अद्यतनीं स्थितिं यावत् सिंहावलोकनेन विषयाः प्रतिपादिताः। संस्कृतसाहित्यस्य कवयित्र्यः आधुनिकसंस्कृतसाहित्यं संस्कृतपत्राणि इत्यादिविषयैः पुस्तकमिदं नावीन्यमावहति। कालक्रमं संस्कृतस्योद्भवविकासादिविषयम् अतिरिच्य ग्रन्थेऽस्मिन् साहित्यानां साहित्यिकानाञ्च प्रवृत्तिविषयेऽपि यथेष्टं पर्यालोचनं कृतमस्ति। अनेन ग्रन्थेन संस्कृतभाषासाहित्यस्य नैरन्तर्येण अद्यावधिप्रवाहः सरसतया छात्रैः जिज्ञासुभिश्च अवलोकयितुं शक्यते।

पुस्तकस्यास्य विकासे नैके विशेषज्ञा: शिक्षकाश्च महद् योगदानं कृतवन्त:। तान् तेषां संस्थाश्च प्रति कृतज्ञता प्रदर्श्यते। पाठ्यपुस्तकविकासक्रमे उन्नतस्तराय निरन्तरप्रयत्नशीला परिषदियं पुस्तकमिदं छात्राणां कृते उपयुक्ततरं कर्तुं विशेषज्ञै: अनुभविभि: शिक्षकैश्च प्रेषितानां सत्परामर्शानां सदैव स्वागतं विधास्यति।

हृषिकेश सेनापति

नवदेहली

निदेशक

अगस्त, 2016

राष्ट्रियशैक्षिकानुसन्धानप्रशिक्षणपरिषद्

Prelims and Content.indd iv 26-08-2016 12:47:25 PM

भूमिका

संस्कृत विश्व की प्राचीन एवं महत्त्वपूर्ण भाषा है। इसमें ऋग्वेद-काल से लेकर आज तक साहित्य रचनाएँ की जा रहीं हैं। ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न क्षेत्र में जितने ग्रन्थ संस्कृत में लिखे गए हैं उतने किसी भी प्राचीन भाषा में प्राप्त नहीं होते। भारतीयों ने इस भाषा के प्रति इतना आदरभाव व्यक्त किया कि उन्होंने इसे देवताओं की भाषा भी कहा। जो लोग अपनी रचनाएँ पालि, प्राकृत आदि भाषाओं में करते थे, संस्कृत भाषा का स्थायित्व देखकर वे भी संस्कृत में लिखने लगे। इसी कारण जैन और बौद्ध धर्म का परवर्ती साहित्य संस्कृत भाषा में लिखा गया।

संस्कृत वाङ्मय बहुत विशाल है। यहाँ प्रत्येक विषय से सम्बद्ध ग्रन्थों की संख्या इतनी अधिक है कि उनका सम्यक् ज्ञान करना आजीवन अध्ययन करने वाले व्यक्ति के लिए भी कठिन है। संस्कृत भाषा ने भारत की आधुनिक भाषाओं को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से प्रभावित किया है। मध्यकाल के प्राकृत तथा अपभ्रंश-साहित्य को संस्कृत की सहायता के बिना समझना भी कठिन है। आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य का अधिकांश भाग संस्कृत साहित्य की देन है। भारतीय भाषाओं ने संस्कृत से बहुत से शब्दों को लिया है। इन शब्दों की व्युत्पत्ति जानने के लिए संस्कृत भाषा का अनुशीलन अपेक्षित है।

संस्कृत का महत्त्व भारत के अतिरिक्त विदेशों में भी स्वीकार किया गया है। जिस व्यक्ति को भारतीय ज्ञान-विज्ञान में तनिक भी रुचि है, वह संस्कृत की उपेक्षा नहीं कर सकता। विदेशों में विभिन्न विश्वविद्यालय संस्कृत भाषा तथा इतिहास के विषय में वर्षों से अनुसन्धान में लगे हुए हैं। ब्रिटेन के विश्वविद्यालयों में शायद ही कोई ऐसा विश्वविद्यालय होगा जहाँ संस्कृत भाषा का अनुशीलन न होता हो। वहाँ किए गए संस्कृत वाङ्मय संबंधी कार्य आज भी अनुसन्धान के क्षेत्र में मानदण्ड माने जाते हैं। मैक्समूलर, मैक्डोनल, कीथ इत्यादि विद्वानों ने ब्रिटेन के विश्वविद्यालयों में रहकर संस्कृत साहित्य के विविध क्षेत्रों में अनुसंधान कार्य किया था। इस दृष्टि से जर्मनी का योगदान शेष महत्त्वपूर्ण है। वहाँ विगत 150 वर्षों में संस्कृत भाषा और साहित्य से संबद्ध बहुत उपयोगी कार्य हुए हैं। संस्कृत भाषा की तुलना अन्य यूरोपीय भाषाओं से करके उन सभी भाषाओं को एक ही भारत-यूरोपीय परिवार का सिद्ध किया है। इस अध्ययन का सबसे बड़ा परिणाम है कि यूरोपीय

विश्वविद्यालयों में संस्कृत का अध्ययन भारत-यूरोपीय परिवार की प्राचीनतम भाषा के रूप में किया जाता है।

विश्व के अनेक देशों में संस्कृत भाषा और साहित्य का अनुशीलन किया जाता है। अमेरिका के कई विश्वविद्यालय भारतीय दर्शन, संस्कृत व्याकरण तथा साहित्य आदि विषयों के अनुशीलन तथा अनुसंधान के क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं। इसी प्रकार जापान, थाइलैण्ड, श्रीलंका इत्यादि एशियाई देशों में भी भारतवर्ष के साथ प्राचीन सांस्कृतिक सम्बन्ध होने के कारण संस्कृत का महत्त्व समझा जाता है और इस दिशा में अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था की जाती है। विदेशों में कई संस्कृत ग्रन्थों के प्रामाणिक संस्करण तथा उनके अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। स्पष्ट है कि संस्कृत का महत्त्व भारत से बाहर भी कम नहीं हैं।

संस्कृत भाषा और साहित्य का राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से भी बहुत महत्त्व है। संस्कृत साहित्य की मूल चेतना भारतवर्ष को एक राष्ट्र के रूप में देखने की है। भारतवर्ष में क्षेत्रीय विषमताओं के होने पर भी जिन तत्त्वों ने इस देश को एक सूत्र में बाँध रखा है, उनमें संस्कृत भाषा तथा इसका साहित्य प्रमुख है। पुराणों ने भारत के भूगोल को इस रूप में प्रस्तुत किया है कि प्रत्येक नागरिक के मन में सम्पूर्ण देश के प्रति आस्था उत्पन्न हो जाती है। वह अपनी क्षेत्रीय भावना को राष्ट्र के प्रति प्रेम के बृहत्तर आदर्श में विस्तृत कर देता है। संस्कृत साहित्य ने उत्तर-दक्षिण या पूर्व-पश्चिम का भेदभाव मिटाकर प्रत्येक नागरिक को भारतीय होने का स्वाभिमान प्रदान किया है। यही नहीं, 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' (समस्त जगत् को हम आर्य बनाएँ), 'वसुधैव कुटुम्बकम्' (सारी पृथ्वी ही हमारा परिवार है) इत्यादि सुन्दर उक्तियों में मानव मात्र के प्रति आत्मीयता के भाव व्यक्त किए गए हैं।

इसी उद्देश्य से संस्कृत-अध्ययन की अनुभूति की जाती रही है। संस्कृत-अध्ययन से हम अपने देश की प्राचीन संस्कृति को समझ सकते हैं। पूर्वजों ने संस्कृत वाङ्मय के रूप में हमें ऐसी संपत्ति दी है, जिसका लाभ अनंत काल तक मिलता रहेगा। वैदिक वाङ्मय, काव्य, दर्शन, धर्मशास्त्र, राजनीति, ज्योतिष, आयुर्वेद तथा अन्य क्षेत्रों में प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान को समझने एवं संस्कृत भाषा की अभिव्यक्ति की सुंदरता का आनंद उठाने के लिए हमें संस्कृत अध्ययन करना चाहिए।

संस्कृत भाषा और साहित्य के अध्ययन की दिशा में संस्कृत साहित्य के इतिहास का अत्यधिक महत्त्व है। हम कितने ही साधन-संपन्न क्यों न हों, किंतु इस भाषा के विशाल

Prelims and Content.indd vi 26-08-2016 12:47:25 PM

वाङ्मय के प्रधान ग्रन्थरत्नों के अनुशीलन में समर्थ नहीं हो सकते। साहित्य के इतिहास के अनुशीलन द्वारा हम प्रमुख ग्रन्थों का परिचय पा सकते हैं। प्रत्येक भाषा के साहित्यिक-ग्रन्थों का परिचय पाने के लिए साहित्य के इतिहास की आवश्यकता होती है। यही बात संस्कृत साहित्य के साथ भी है।

प्रस्तुत पुस्तक

पिछले 30 वर्षों में विभिन्न भाषाओं में संस्कृत साहित्य के इतिहास लिखे गए हैं। कुछ इतिहास केवल वैदिक साहित्य का विवेचन करते हैं, तो कुछ केवल लौकिक संस्कृत साहित्य का। कुछ ग्रन्थों में केवल शास्त्रीय साहित्य का परिचय दिया गया है। इन इतिहास ग्रन्थों में वेबर, मैक्समूलर, मैक्डोनल, विण्टरनिट्ज, ए.बी. कीथ इत्यादि पाश्चात्त्य विद्वानों के द्वारा लिखे गए ग्रन्थों के अतिरिक्त कृष्णमाचार्य, पं. बलदेव उपाध्याय, कृष्णचैतन्य, वाचस्पति गैरोला, उमाशंकर शर्मा 'ऋषि' इत्यादि भारतीय विद्वानों द्वारा लिखे गए ग्रन्थ भी हैं। इन सभी ग्रन्थों का कलेवर इतना विशाल है कि विद्यालय के छात्रों को उनसे घबराहट होती है। आज भी साधारण छात्रों के लिए संस्कृत साहित्य के संक्षिप्त इतिहास की आवश्यकता बनी हुई है। इसी उद्देश्य से राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली की ओर से स्वर्गीय प्रो.टी.जी. माईणकर द्वारा रचित *संस्कृत भाषा और साहित्य का संक्षिप्त इतिहास* नामक पुस्तक 1978 ई. में प्रकाशित की गई थी। उसके पश्चात् *संस्कृत साहित्य—परिचय* नामक पुस्तक का प्रणयन एवं संशोधित संस्करण प्रकाशित किए गए। विगत वर्षों के अनुभव एवं विशेषज्ञों से प्राप्त परामर्शों के आलोक में यह निश्चय किया गया कि छात्रों की वर्तमान अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए इस पुस्तक के स्थान पर एक नई पुस्तक लिखी जाए जो उनके स्तर के अधिक अनुरूप हो तथा उन्हें सरल भाषा में संस्कृत साहित्य के प्रमुख ग्रन्थों का परिचय दे सके। प्रारंभिक छात्रों को विवादास्पद विषयों से दूर रखते हुए उनका संस्कृत विषय में सीधा प्रवेश हो, इसी उद्देश्य से इस पुस्तक की रचना की गई है। इस पुस्तक की कतिपय विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा के आलोक में बनी संस्कृत पाठ्यपुस्तकों में आए नूतन कवि एवं नवीन साहित्य को समाहित करने की दृष्टि से पुस्तक में अधिकाधिक संशोधन एवं नूतन विषयों का संयोजन आवश्यक समझा गया।

1. पुस्तक में विषय का चयन मुख्यत: उच्चतर माध्यमिक कक्षा के संस्कृत पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर किया गया है। संस्कृत वाङ्मय के उन पक्षों के अनावश्यक

Prelims and Content.indd vii 26-08-2016 12:47:25 PM

विस्तार से यथासम्भव बचने का प्रयास हुआ है जिनकी आवश्यकता इस स्तर के छात्रों को नहीं होती है।

2. काल-निर्धारण-संबंधी जटिल समस्याओं के विवादों से बचते हुए यथा संभव निर्विवाद तथ्यों को समाविष्ट किया गया है।
3. विषयवस्तु के प्रतिपादन में विषय का महत्त्व, राष्ट्रीय मूल्य तथा उसके परवर्ती प्रभाव का यथास्थान उल्लेख किया गया है।
4. वैदिक साहित्य का परिचय प्रस्तुत करते हुए इस साहित्य की गरिमा एवं उसके सांस्कृतिक महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है।
5. आधुनिक संस्कृत साहित्य एवं संस्कृत कवयित्रियों का परिचय व लेखादि को प्रथम बार समाविष्ट किया गया है।
6. विभिन्न विधाओं के वर्णन में आधुनिक विशिष्ट रचनाओं को यथास्थान समाविष्ट किया गया है, जिसका इस विषय के अन्य ग्रन्थों में प्राय: अभाव पाया जाता है।
7. पाठों की विषय-वस्तु छात्रों को सरलता से हृदयंगम हो सके इस उद्देश्य से अध्यायों के अन्त में सारांश तथा पर्याप्त अभ्यास-प्रश्न दिए गए हैं, जो इस पुस्तक की अपनी मौलिक विशेषता है।
8. अभ्यास-प्रश्नों के निर्माण में ध्यान रखा गया है कि पाठ में कोई भी महत्त्वपूर्ण तथ्य न छूटें। अधिकांश प्रश्न वस्तुनिष्ठ हैं।
9. तथ्यों की प्रामाणिकता पर पूर्ण ध्यान दिया गया है।
10. पुस्तक को अधिक-से-अधिक उपयोगी बनाने के उद्देश्य से इसमें परिशिष्ट के रूप में लेखकानुक्रमणिका, ग्रन्थानुक्रमणिका, ग्रन्थ एवं ग्रन्थकारों की कालक्रमसारणी,पत्र-पत्रिकाओं की सूची तथा विशेष अध्ययन के लिए अनुशंसित पुस्तकों की सूची को समाविष्ट किया गया है। ये परिशिष्ट न केवल छात्रों के लिए,अपितु शिक्षकों एवं सामान्य संस्कृत जिज्ञासुओं के लिए भी विशेष महत्त्व के हैं।

प्रस्तुत संस्करण पूर्व प्रकाशित *संस्कृत साहित्य—परिचय* पुस्तक का संशोधित रूप है। इसमें 12 अध्याय हैं, जिनमें क्रमश: संस्कृत भाषा, उद्भव एवं विकास, वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत तथा पुराण, महाकाव्य, ऐतिहासिक महाकाव्य, काव्य की अन्य विधाएँ, गद्यकाव्य एवं चम्पू काव्य, कथा साहित्य, नाट्य साहित्य, आधुनिक संस्कृत साहित्य, संस्कृत कवयित्रियाँ तथा शास्त्रीय साहित्य का विवेचन हुआ है। प्रत्येक अध्याय

Prelims and Content.indd viii 26-08-2016 12:47:25 PM

की समाप्ति पर अभ्यास के लिए विषयनिष्ठ और वस्तुपरक दोनों प्रकार के प्रश्न दिए गए हैं, जो विषय को समझने में सहायक होंगे। वस्तुपरक प्रश्न संदेह की स्थिति उत्पन्न करके बुद्धि को शीघ्र निर्णय करने की क्षमता प्रदान करते हैं। ऐसे प्रश्नों की अधिकाधिक विधाओं का निवेश पूरी पुस्तक में हुआ है। विषयवस्तु का प्रतिपादन सरल रूप में करने का प्रयास किया गया है। आधुनिक संस्कृत साहित्य पर अलग से दृष्टिपात कर संस्कृत साहित्य की जीवंत गतिशील स्थिति को स्पष्ट किया गया है। इस प्रकार यह पुस्तक न केवल कक्षा 12 के लिए ही वरदान सिद्ध होगी, अपितु विश्वविद्यालयीय अध्येताओं के लिए भी उपयोगी होगी।

संशोधित संस्करण की विशेषताएँ

- प्रस्तुत संस्करण में परिषद् द्वारा सन् 2005 में विकसित राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा के आलोक में विकसित संस्कृत के नवीन पाठ्यक्रम कक्षा 11-12 में निर्धारित पाठ्यांशों का समुचित समावेश किया गया है।
- संस्कृत के इतिहास में प्रथम बार विभिन्न काल खण्डों में की गई संस्कृत रचनाओं में स्पष्टतया विद्यमान विभिन्न प्रवृत्तियों को भी उजागर किया गया है।

आशा है, सुकुमारमति विद्यालयीय छात्रों को विशाल संस्कृत साहित्य की समृद्धि से परिचित कराने तथा उनमें संस्कृत साहित्य के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करने में यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी। इस पुस्तक के निर्माण में जिन ग्रन्थों, ग्रन्थकारों एवं विद्वानों से सहायता मिली है, लेखक उनके प्रति हृदय से कृतज्ञ है।

Prelims and Content.indd ix 26-08-2016 12:47:25 PM

पुस्तक-निर्माण में योगदान करने वाले विशेषज्ञ

उमाशंकर शर्मा ऋषि, *प्रोफ़ेसर* एवं *अध्यक्ष* (सेवानिवृत्त), संस्कृत विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।

कमलाकान्त मिश्र, *प्रोफ़ेसर* (सेवानिवृत्त), संस्कृत, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

जर्नादन, 'मणि' राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, इलाहाबाद कैम्पस, इलाहाबाद।

पंकज मिश्र, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, सेंट स्टीफन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

पुरूषोत्तम मिश्र, *पी.जी.टी.* (संस्कृत), रा.व.मा.बा. विद्यालय नं. 1, मॉडल टाउन, दिल्ली।

प्रभुनाथ द्विवेदी, *आचार्य* एवं *अध्यक्ष* (सेवानिवृत्त), संस्कृत विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

बनमाली बिश्वाल, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, इलाहाबाद कैम्पस, इलाहाबाद।

मीरा द्विवेदी, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

रणजित् बेहेरा, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

राजेन्द्र मिश्र,*पूर्व कुलपति*, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।

राधावल्लभ त्रिपाठी, *कुलपति*, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, जनकपुरी, नयी दिल्ली।

राम सुमेर यादव, *प्रोफ़ेसर*, संस्कृत विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

वीरेन्द्र कुमार, *टी.जी.टी.* (संस्कृत), केन्द्रीय विद्यालय नं.-2, दिल्ली कैण्ट, नयी दिल्ली।

श्रीधर वशिष्ठ, *पूर्व कुलपति*, श्री लाल बहादुर राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, कटवारिया सराय, नयी दिल्ली।

श्रेयांश द्विवेदी, *असिस्टैंट प्रोफ़ेसर*, एस.सी.ई.आर.टी., सोहना रोड, गुड़गांव, हरियाणा।

हरि ओम शर्मा, *टी.जी.टी.* (संस्कृत), प्रायोगिक विद्यालय, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर, राजस्थान।

हरिदत्त शर्मा, *पूर्व प्रोफ़ेसर* एवं *अध्यक्ष*, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

समन्वयक एवं संपादक

कृष्ण चन्द्र त्रिपाठी, *प्रोफ़ेसर*, (संस्कृत), संपादक।

जतीन्द्र मोहन मिश्र, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, (संस्कृत), सह संपादक।

विषयानुक्रमणिका

पुरोवाक्		*iii*
भूमिका		*v*
प्रथम अध्याय	संस्कृत भाषा—उद्भव एवं विकास	1-10
द्वितीय अध्याय	वैदिक साहित्य	11-26
तृतीय अध्याय	रामायण, महाभारत एवं पुराण	27-36
चतुर्थ अध्याय	महाकाव्य	37-48
पञ्चम अध्याय	ऐतिहासिक महाकाव्य	49-54
षष्ठ अध्याय	काव्य की अन्य विधाएँ	55-64
सप्तम अध्याय	गद्यकाव्य एवं चम्पूकाव्य	65-76
अष्टम अध्याय	कथा साहित्य	77-84
नवम अध्याय	नाट्य–साहित्य	85-98
दशम अध्याय	आधुनिक संस्कृत साहित्य	99-110
एकादश अध्याय	संस्कृत कवयित्रियाँ	111-114
द्वादश अध्याय	शास्त्रीय साहित्य	115-130
परिशिष्ट	I लेखकानुक्रमणिका	131-134
	II ग्रन्थानुक्रमणिका	135-142
	III ग्रन्थ एवं ग्रन्थकारों की कालक्रमसारिणी	143-150
	IV संस्कृतपत्रिकाणाम् अनुक्रमणिका	151-156
	V अनुशंसित पुस्तकों की सूची	157-158

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1]**[संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य]** बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2]**[राष्ट्र की एकता**

और अखंडता] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''राष्ट्र की एकता'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।

प्रथम अध्याय

संस्कृत भाषा—उद्भव एवं विकास

संसार की उपलब्ध भाषाओं में संस्कृत प्राचीनतम है। इस भाषा में प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति का बहुत बड़ा भण्डार है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक इस भाषा में रचनाएँ होती रही हैं, साहित्य लिखा जाता रहा है। जिन दिनों लिखने के साधन विकसित नहीं थे, उन दिनों भी इस भाषा की रचनाएँ मौखिक परम्परा से चल रही थीं। उस परम्परा की रचनाएँ जो आज बची हैं, अक्षरश: सुरक्षित हैं। यही नहीं, उनके उच्चारण की विधि भी पूर्ववत् है, उसमें कोई मौलिक परिवर्तन नहीं हुआ है।

संस्कृत भाषा को देववाणी या सुरभारती कहा जाता है। इस भाषा में साहित्य की धारा कभी नहीं सूखी, यह बात इसकी अमरता को प्रमाणित करती है। मानवजीवन के सभी पक्षों पर समान रूप से प्रकाश डालने वाली इस भाषा की रचनाएँ हमारे देश की प्राचीन दृष्टि की व्यापकता सिद्ध करती हैं। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' (सम्पूर्ण पृथ्वी ही हमारा परिवार है) का उद्घोष संस्कृत भाषा साहित्य की ही देन है।

संस्कृत भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से भारोपीय परिवार की भाषा है। ग्रीक, लैटिन, अंग्रेजी, रूसी, फ्रांसीसी, स्पेनी आदि यूरोपीय भाषाएँ भी इसी परिवार की भाषाएँ कही गई हैं। यही कारण है कि इन भाषाओं में संस्कृत शब्दों जैसी ही ध्वनि और अर्थ वाले अनेक शब्द मिलते हैं।[1] ईरानी भाषा तो संस्कृत से बहुत अधिक मिलती है। पिछले दो-सौ वर्षों में यूरोपीय विद्वानों ने संस्कृत का पर्याप्त अध्ययन इन भाषाओं से तुलना के आधार पर किया है। इस दृष्टि से संस्कृत भाषा विदेशों में अत्यधिक आदर पा चुकी है। आज भी यूरोपीय भाषाओं का ऐतिहासिक अध्ययन करने के लिए संस्कृत का अनुशीलन विदेशी शिक्षा-संस्थाओं में भी अनिवार्य रूप से किया जाता है।

हमारे देश की प्राय: सभी आधुनिक भाषाएँ संस्कृत से जुड़ी हैं। हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगला, ओड़िआ, असमिया, पंजाबी, सिन्धी आदि भाषाएँ भी इससे विकसित

1 तुलनीय–संस्कृत-अस्ति, लैटिन-एस्त, फारसी-अस्त। ये सभी समानार्थक हैं।

हुई हैं। दक्षिण भारत की तमिल, तेलुगु, कन्नड़ तथा मलयालम में भी संस्कृत के बहुत से शब्द मिलते हैं जिन्हें उन भाषाओं ने अपने ढंग से अपनाया है। इसी प्रकार दक्षिण भारत की इन द्रविड-भाषाओं से संस्कृत ने भी समय-समय पर अनेक शब्द लिए हैं तथा उन्हें अपने रूप में ढाल लिया है। यही कारण है कि पृथक् भाषा परिवारों की होने पर भी दोनों का परस्पर सामञ्जस्य है। संस्कृत भाषा ने राष्ट्र की एकता के लिए बहुत बड़ा कार्य किया है। विष्णुपुराण की उक्ति है —

> उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
> वर्षं तद् भारतं प्राहुर्भारती यत्र सन्ततिः।।

जो देश (वर्ष) समुद्र (हिन्द महासागर) के उत्तर और हिमालय के दक्षिण में अवस्थित है उसे पहले के लोगों ने *'भारत'* कहा है। वहाँ की प्रजा *'भारती' (भारतीय)* कहलाती है।

संस्कृत भाषा सहस्रों वर्षों से चली आ रही है। इस अवधि में इसका रूप परिवर्तित होता रहा है। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार आधुनिक भाषाओं तक इसके विकास की प्रक्रिया इस प्रकार रही है —

1. **प्राचीन आर्य भाषा काल** (6000 ई. पू. – 800 ई. पू.)– इस काल में वैदिक भाषा और प्राचीन संस्कृत भाषा के विकास की प्रक्रिया चलती रही।
2. **मध्यकालीन आर्य भाषा काल (**800 ई. पू. –1000 ई.)– इस काल में पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं का विकास हुआ। शिक्षित समाज में संस्कृत का प्रयोग होता रहा तथा अधिकांश प्रामाणिक ग्रन्थ इसी समय में लिखे गए। इस काल में जन-सामान्य में संस्कृत भाषा का प्रयोग बहुत अधिक नहीं रहा, किन्तु इसके प्रति सम्मान का भाव पूर्ववत् बना रहा।
3. **आधुनिक आर्य भाषा काल** (1000 ई. – अब तक)– इस काल में विभिन्न प्रदेशों में बोली जाने वाली अपभ्रंश-भाषाओं से आधुनिक आर्य भाषाओं का विकास हुआ। द्रविड परिवार की भाषाओं को छोड़कर हिन्दी, मराठी आदि उपर्युक्त सभी भाषाएँ इसके अंतर्गत हैं। इन सभी भाषाओं में पर्याप्त साहित्य रचा गया। इस काल में भी संस्कृत भाषा द्वितीय युग के समान शिक्षित जनसमुदाय में प्रचलित रही, इसमें रचनाएँ भी होती रहीं। प्रादेशिक भाषाओं में भी मुख्यत: ग्रन्थ-लेखन का कार्य उन्हीं लोगों ने किया, जो संस्कृत के पण्डित थे, क्योंकि संस्कृत भाषा के अभाव में शिक्षा की कल्पना ही नहीं हो सकती थी। इस काल में विदेशी शासन का आरम्भ हुआ, जिससे तुर्की, अरबी और फारसी भाषाएँ भारत में शासकों द्वारा लाई गईं। इनका

Chapter-1.indd 2 12-08-2016 2:02:20 PM

प्रभाव आधुनिक आर्य भाषाओं के शब्दकोश पर पड़ा, जिससे बहुत से नए शब्द इन भाषाओं से आर्य भाषाओं में आ गए। संस्कृत भाषा इस आदान-प्रदान से अधिक प्रभावित नहीं हुई।

भाषा के रूप

किसी भी भाषा के दो रूप होते हैं — व्यावहारिक अर्थात् बोलचाल में आने वाली भाषा तथा स्थिरता पाने वाली साहित्यिक भाषा। बोलचाल की संस्कृत भाषा का प्राचीन रूप भास, कालिदास, शूद्रक आदि के नाटकों में प्राप्त होता है। सामान्यत: संस्कृत में जो साहित्य सुरक्षित है वह उसके साहित्यिक रूप का प्रतिनिधि है।

निश्चित रूप से बोलचाल की भाषा सरल तथा रूढ़िमुक्त रहती है। दूसरी ओर, साहित्यिक भाषा परिष्कृत तथा अलंकृत होने लगती है। बोली जाने वाली संस्कृत भाषा व्याकरण और उच्चारण के अनुशासन से मुक्त होकर धीरे-धीरे पालि, प्राकृत आदि परवर्ती भाषाओं के रूप में बदल गई, जबकि इसका साहित्यिक रूप क्रमश: कठिनाई की ओर बढ़ा।

संस्कृत का साहित्यिक विकास

प्राचीन आर्य भाषा काल में संस्कृत के अनेक रूप मिलते हैं, किन्तु इस काल के अन्त में जब पाणिनि (700 ई. पू.) के व्याकरण से इसे परिनिष्ठित रूप मिला, तब रूपों की अस्थिरता समाप्त हो गई और भाषा एक ही रूप में स्थिर हो गई। इस काल के बाद सभी संस्कृत ग्रन्थ इसी नियत भाषा में लिखे गए। इसका परिणाम यह हुआ कि संस्कृत की वाचिक धारा पालि, प्राकृत आदि भाषाओं के रूप में परिवर्तित हो गई। संस्कृत का रूप तो आज तक पाणिनि के व्याकरण पर ही आश्रित है परन्तु इसमें अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों का आगमन होता रहा। पाणिनीय व्याकरण का अनुसरण करने वाले संस्कृत साहित्य को **लौकिक** साहित्य कहते हैं। वस्तुत: इस शब्द का प्रयोग वैदिक साहित्य से भिन्न समस्त संस्कृत साहित्य के लिए किया जाता है। इस अर्थ में लौकिक संस्कृत साहित्य, रामायण, महाभारत और पुराणों को भी समाविष्ट कर लेता है, भले ही इनमें पाणिनि के नियमों का यत्र-तत्र उल्लंघन भी है।

संस्कृत में साहित्यिक भाषा की क्रमश: दो धाराएँ मिलती हैं— वैदिक संस्कृत की धारा तथा लौकिक संस्कृत की धारा। वैदिक संस्कृत की धारा भी अनेक रूपों में है। प्राचीनतम वेद ऋग्वेद की भाषा अन्य सर्वत्र एक समान नहीं है। अन्य वेदों में जो भाषा का

Chapter-1.indd 3 12-08-2016 2:02:20 PM

रूप प्राप्त होता है, उसमें सरलीकरण की प्रवृत्ति दिखाई देती है। शब्दरूपों और धातुरूपों की अनियमितता तथा अनेकता क्रमश: दूर होती जाती है। अन्य वेदों में हमें गद्य भी मिलता है, जबकि पूरी ऋग्वेद-संहिता पद्यात्मक है। संहिताओं के बाद उनकी व्याख्याओं के रूप में ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद् ग्रन्थ प्राप्त होते हैं। यद्यपि इन सब में सामान्य रूप से वैदिक संस्कृत ही प्रयुक्त है, किन्तु वह संस्कृत लौकिक संस्कृत की ओर अभिमुख दिखाई पड़ती है।

वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत के सन्धिकाल में हमें रामायण तथा महाभारत जैसे ग्रन्थ मिलते हैं। इन ग्रन्थों की भाषा में वैदिक वाक्यों जैसी सरलता है तथा जटिल शब्दरूपों का अभाव है। इन ग्रन्थों की भाषा ने लौकिक संस्कृत साहित्य को विकास का मार्ग दिखाया। इसी काल में संस्कृत व्याकरण के सुप्रसिद्ध लेखक पाणिनि का आविर्भाव हुआ, जिन्होंने अपने समय में प्रचलित संस्कृत भाषा का व्यापक अनुशीलन करके *अष्टाध्यायी* नामक ग्रन्थ में भाषा-सम्बधी नियम बनाए। उन्होंने तुलना के लिए वैदिक भाषा के विषय में भी अपने निष्कर्ष को सूत्र-रूप में उपस्थित किया। पाणिनि ने वेदों की भाषा को सामान्य रूप से *छन्दस्* और लौकिक संस्कृत को केवल *भाषा* कहा है। पाणिनि के बाद विकसित संस्कृत साहित्य में उसी भाषा का उपयोग होने लगा। कवियों और लेखकों की शैली में जो भी अन्तर रहा हो, भाषा वही रही। अन्य वैयाकरणों ने भी पाणिनि के द्वारा स्थापित भाषा को ही मानक स्वीकार कर अपने-अपने व्याकरण लिखे।

संस्कृत के साहित्यिक विकास को चार चरणों में देख सकते हैं – (1) वैदिक साहित्य (2) रामायण व महाभारत (3) मध्यवर्ती संस्कृत साहित्य तथा (4) आधुनिक संस्कृत साहित्य। शास्त्र-ग्रन्थों की रचना सभी चरणों में होती रही थी। भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से इन चरणों का काल इस प्रकार माना जा सकता है–

(1) वैदिक साहित्य (6000 ई.पू. से 800 ई. पू.), (2) रामायण व महाभारत (800 ई.पू. से 300 ई. पू.), (3) मध्यवर्ती संस्कृत साहित्य (300 ई.पू. से 1784 ई. जिसमें महाकाव्य, नाटक, खण्डकाव्य आदि विधाओं के सरल तथा अलंकृत ग्रन्थ लिखे गए) एवं (4) आधुनिक काल (1784 ई. से आज तक)।

वैदिक और लौकिक संस्कृत में भेद

संस्कृत भाषा के वैदिक रूप में सभी वेदों की संहिताएँ, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद्-ग्रन्थ लिखे गए हैं। इसके लौकिक रूप में वेदों का उपयोग बतलाने वाले वेदांग-ग्रन्थ,

Chapter-1.indd 4 12-08-2016 2:02:21 PM

रामायण, महाभारत, नाटक, काव्य, कथा-साहित्य, आयुर्वेद आदि से संबद्ध ग्रन्थों की रचना विभिन्न युगों में हुई। वैदिक संस्कृत में मुख्यत: धर्मप्रधान साहित्य की रचना हुई, जिसका उपयोग यज्ञ आदि में होता था। लौकिक संस्कृत में जीवन के अन्य अनेक पक्ष भी मिलते हैं। वैदिक संस्कृत का आरम्भ तो पद्य से ही हुआ, किन्तु धीरे-धीरे गद्य का भी साम्राज्य छा गया। लौकिक संस्कृत में पुन: पद्य की प्रतिष्ठा हुई और गद्यरचना का क्षेत्र सीमित हो गया। गद्य लिखना कठिन माना जाने लगा। वैदिक भाषा के छन्दों से लौकिक संस्कृत के छन्दों में भी भिन्नता आई। इस प्रकार संस्कृत के छन्दों में अधिक विविधता आ गई।

भाषा की दृष्टि से वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत से बहुत भिन्न है, किन्तु यह भिन्नता ऐसी नहीं, जैसी संस्कृत और प्राकृत में है। संस्कृत और प्राकृत में ध्वनिगत अन्तर का प्राचुर्य है, जबकि वैदिक और लौकिक संस्कृत में ध्वनिगत अन्तर शून्यप्राय है, विशेष रूप से शब्दगत भेद ही अधिक है। दोनों एक ही भाषा की दो शैलियाँ हैं। वैदिक संस्कृत में शब्द-रूप संख्या में अधिक थे, लौकिक संस्कृत में कम, जैसे— संस्कृत शब्दरूप गन्तुम् (जाने के लिए) है। वैदिक भाषा में इसके अतिरिक्त इसी अर्थ में गन्तवे, गमध्यै, गन्तो: इत्यादि कई रूपों के प्रयोग थे। अकारान्त शब्दों के प्रथमा-बहुवचन में प्रिया:, प्रियास: जैसे दो रूप वैदिक संस्कृत में थे, तृतीया बहुवचन में भी प्रियै: प्रियेभि: जैसे दो रूप यहाँ थे, लौकिक संस्कृत में ये कम होकर, केवल प्रिया: और प्रियै: ही रह गए। इस प्रकार दोनों भाषाओं में मुख्य अन्तर वैदिक भाषा में शब्दों के वैकल्पिक रूपों की अधिकता और लौकिक संस्कृत भाषा में शब्दों के वैकल्पिक रूपों की न्यूनता है।

आधुनिक आर्य भाषाओं से संस्कृत का घनिष्ठ सम्बन्ध है। ऊपर कहा गया है कि संस्कृत भाषा से ही प्राकृत भाषाओं का विकास हुआ। ये भाषाएँ जनसामान्य में प्रचलित हुईं। संस्कृत नाटकों में भी इनका प्रयोग कुछ पात्रों के संवाद के रूप में होने लगा। इसमें स्वतन्त्र ग्रन्थ भी लिखे गए जिनमें काव्यों की संख्या अधिक थी। उधर आरम्भिक बौद्ध साहित्य पालि भाषा में लिखा गया। जैन धर्म के ग्रन्थ अर्धमागधी (प्राकृत का एक भेद) में लिखे गए। प्रथम शताब्दी ई. के बाद से इन धर्मों के ग्रन्थ संस्कृत में भी लिखे जाने लगे। प्राकृत का विकास उत्तरी और मध्य भारत के विविध क्षेत्रों में विभिन्न रूपों में हुआ। इसलिए प्राकृत के महाराष्ट्री (महाराष्ट्र में), शौरसेनी (पश्चिमी उत्तर प्रदेश में), मागधी (पूर्वी भारत में), अर्धमागधी (पूर्वी उत्तर प्रदेश में) तथा पैशाची (सिन्ध और पश्चिमोत्तर भारत में)। ये मुख्य भेद हैं, जबकि उपभेदों की संख्या अधिक है।

Chapter-1.indd 5 12-08-2016 2:02:21 PM

इन प्राकृतों से उन-उन नामों वाली अपभ्रंश भाषाओं का विकास हुआ। ये भी विभिन्न क्षेत्रों से सम्बद्ध हुईं। इस काल में संस्कृत शब्द-रूपों की विभक्तियों को मूल शब्द से पृथक् किया गया तथा नये-नये विभक्ति-चिह्नों का विकास हुआ। क्षेत्रीय अपभ्रंश भाषाओं ने पृथक्-पृथक् आधुनिक आर्य भाषाओं को जन्म दिया। महाराष्ट्री अपभ्रंश से मराठी, शौरसेनी से हिन्दी, खस अपभ्रंश से पहाड़ी, ब्राचड़ से गुजराती और सिन्धी, मागधी से बिहार की भोजपुरी, मैथिली और मगही के अतिरिक्त बंगला, ओड़िआ और असमिया तथा अर्धमागधी से पूर्वी उत्तर प्रदेश की बोलियाँ निकलीं। इस प्रकार, आधुनिक आर्य भाषाएँ संस्कृत से विकसित हैं। संस्कृत का व्यापक प्रभाव इन सब पर है।

संस्कृत साहित्य के इतिहास का उद्देश्य

संस्कृत भाषा और साहित्य के विकास का ज्ञान उसके इतिहास से मिलता है। युगों से विभिन्न प्रवृत्तियों के कारण जो साहित्य-प्रकार विकसित हुए हैं, उनका आकलन इतिहास में होता है। हजारों ग्रन्थों की राशि में गुण और महत्त्व की दृष्टि से चुने हुए ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय इतिहास दे देता है तथा पूरे वाङ्मय में उस ग्रन्थ की स्थिति भी बताता है। अकेले पाठक को सम्पूर्ण वाङ्मय का कम समय में परिचय देना इतिहास का काम है। संस्कृत भाषा न जानने वाले लोग भी साहित्य के इतिहास से ग्रन्थों तथा ग्रन्थकारों के विषय में एवं उनके उद्भव की स्थितियों को जान सकते हैं। यह संस्कृत साहित्य के इतिहास की उपयोगिता है।

संस्कृत साहित्य एवं समकालीन प्रवृत्तियाँ

विभिन्न युगों में जो संस्कृत साहित्य का विकास हुआ, वह तात्कालिक परिस्थितियों के अनुरूप था। साहित्य के अनुशीलन से उन परिस्थितियों का अनुमान होता है। वस्तुत: जनसामान्य को ध्यान में रखकर ही साहित्य-प्रवृत्तियाँ पनपती हैं। वैदिक साहित्य के विकास में तात्कालिक धार्मिक जीवन का आभास मिलता है। उस युग में यह भाषा लोकव्यवहार में भी थी, किन्तु यज्ञानुष्ठान, नैतिक नियमों का अनुपालन तथा प्रकृति के उपादानों के प्रति श्रद्धा की भावना का मूल्य अधिक होने से इन पर बल देने वाला वैदिक साहित्य ही सुरक्षित रह सका है। लौकिक साहित्य में लौकिक भावनाओं का प्रकाशन करने वाली सामग्री अत्यल्प है।

लौकिक संस्कृत साहित्य के आरम्भ काल में रामायण में सुन्दर भाषा में आदर्श की स्थापना की गई, जबकि महाभारत में इतिहास के बहाने राजनीति, धर्म, समाज और संस्कृति का यथार्थ प्रकाशित हुआ। पुराणों में सम्पूर्ण भारत के तीर्थस्थलों, आख्यानों एवं

Chapter-1.indd 6 12-08-2016 2:02:21 PM

इतिहास के अतिरिक्त ज्ञान के अन्यान्य क्षेत्रों को आलोकित करने की प्रवृत्ति है। इन तीनों का अवगाहन जन-जन की अनौपचारिक शिक्षा का स्वरूप था।

परवर्ती साहित्य के विकास में विविध प्रवृत्तियाँ काम करती हैं। आरम्भिक नाटकों तथा काव्यों में भाषा की सरलता यह प्रकट करती है कि सरल संस्कृत व्यापक रूप से प्रचलित थी। अनेक क्षेत्रों में जनता संस्कृत और प्राकृत दोनों समझती और बोलती भी थी। आगे चलकर संस्कृत का भाषिक अनुशासन कठोर हो जाने पर साधारण जनता संस्कृत छोड़कर प्राकृत (तथा अपभ्रंश) की ओर प्रवृत्त होने लगी। किन्तु परिनिष्ठित शिक्षा संस्कृत माध्यम से होने के कारण, शिक्षितों के अनुरूप, संस्कृत साहित्य क्रमश: कठिन होता गया। इस स्थिति में पाण्डित्यपूर्ण काव्य-नाटक-गद्य,पद्य आदि रचे गए। अधिसंख्य साहित्यिक रचनाएँ राजाश्रय में लिखी गईं जिनमें यथार्थ से अधिक अलंकृत अभिव्यक्ति पर बल दिया गया। जनरुचि ऐसी रचनाओं के प्रति हो गई।

भारतवर्ष पर विदेशी आक्रमणों के बाद संस्कृत की धारा पारम्परिक काव्य शैली में नाटक, चम्पू, गद्य-काव्य द्वारा देशी राजाओं की विजय अथवा व्यक्ति-विशेष के वर्णन में प्रवृत्त हुई। दूसरी ओर कुछ काव्यों में विदेशियों के साथ युद्धों का भी निरूपण हुआ।

आधुनिक काल में सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं की ओर संस्कृत साहित्यकारों का ध्यान गया। स्वाधीनता-संग्राम में साहित्य की सर्जना कहीं प्रतीकात्मक, कहीं प्रत्यक्ष रूप से हुई। आज का संस्कृत साहित्य (काव्य, नाटक, लघुकथा, उपन्यास आदि) विधवा-विवाह, दहेज-प्रथा, भ्रष्टाचार, राजनीति, शिक्षा का क्षरण इत्यादि विविध विषयों को रेखांकित करते हुए लिखा गया है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में उतना वैविध्य नहीं था जितना आधुनिक संस्कृत में मिलता है। विभिन्न युगों की प्रवृत्तियों को संस्कृत साहित्य की परम्परा ने आत्मसात् किया है।

लोकव्यवहार

पिछले चार हजार वर्षों में संस्कृत का लोक-व्यवहार विभिन्न रूपों में हो रहा है। वैदिक युग तथा वेदाङ्गों के समय तक जनसामान्य में संस्कृत का व्यापक प्रयोग था। यास्क (800 ई.पू.) ने भाषा शब्द का प्रयोग लोकप्रचलित संस्कृत के अर्थ में किया है। पतञ्जलि ने भाषा की प्रवृत्तियों को लोकाश्रय कहा, उसी का विवेचन (अन्वाख्यान) व्याकरण करता है। वाल्मीकि ने शिष्टजनों में परिष्कृत तथा शेषजनों में साधारण संस्कृत के प्रयोग का संकेत किया है। अपने धर्मप्रचार में जैनों ने प्राकृत तथा बौद्धों ने पालि का भले ही प्रयोग

Chapter-1.indd 7 12-08-2016 2:02:21 PM

आरम्भ किया था, किन्तु ईसवी सन् के प्रारम्भ से दोनों को शास्त्रीय विचार-विमर्श के लिए संस्कृत का आश्रय लेना पड़ा। पाषाणों, ताम्रपत्रों आदि में अंकित अभिलेख (कुछ अपवादों को छोड़कर), संस्कृत में ही हैं। चीनी यात्री हुएनत्सांग (629 ई.– 643 ई. के बीच भारत भ्रमण करने वाला) के अनुसार बौद्ध लोग सामान्य वाद-विवाद में संस्कृत का प्रयोग करते थे। रामायण और महाभारत का सामान्य जनता में पाठ होता था, जो संस्कृत के सर्वजनगम्य होने का प्रमाण है। कश्मीरी कवि बिल्हण कहते हैं कि उनके प्रदेश में स्त्रियाँ भी संस्कृत-प्राकृत दोनों भाषाएँ समझती हैं, दूसरों का क्या कहना?

यत्र स्त्रीणामपि किमपरं मातृभाषावदेव।
प्रत्यावासं विलसति वच: प्राकृतं संस्कृतं च।।

(विक्रमाङ्कदेवचरित, 18.6)

यह भी ज्ञातव्य है कि दिल्ली सल्तनत के समय (1206 ई. – 1526 ई.) भी अनेक संस्कृत अभिलेख किसी लोक-कल्याण-कार्य के स्मारक के रूप में लिखे गए। भारत के दक्षिण-पूर्वी उपनिवेशों (इंडोनेशिया, थाइलैंड इत्यादि) में चौदहवीं शताब्दी ई. तक राजभाषा के रूप में संस्कृत का प्रचलन था। वहाँ के संस्कृत अभिलेख इसे प्रमाणित करते हैं।

ऐसी स्थिति में यह कहा जा सकता है कि आरम्भ में प्राय: ईसवी सन् की कुछ शताब्दियों तक जनसामान्य में संस्कृत भाषा का प्रयोग होता था। कालक्रम से यह शिष्टजनों तक शिक्षा ग्रन्थ-रचना, वाद-विवाद, शास्त्रार्थ आदि के क्षेत्र में सीमित हो गई। साहित्य-रचना के क्षेत्र में वर्तमान युग तो संस्कृत का वास्तविक स्वर्ण युग है।

ध्यातव्य बिन्दु

- संस्कृत संसार की प्राचीनतम भाषा है।
- संस्कृत भाषा की रचना-धारा निरन्तर प्रवाहशील है।
- 'वसुधैव कुटुम्बकम्' यह उद्घोष संस्कृत भाषा की ही देन है।
- संस्कृत भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से भारोपीय परिवार की भाषा है। ग्रीक, लैटिन, अंग्रेजी, रूसी, फ्रांसीसी, स्पेनी आदि यूरोपीय भाषाएँ इसी परिवार की भाषाएँ हैं।
- सभी आधुनिक भारतीय भाषाएँ संस्कृत से निकली हैं, जैसे—हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगला, ओड़िया, असमिया, पंजाबी, सिन्धी आदि।
- आधुनिक भाषाओं की विकास प्रक्रिया इस प्रकार है—

Chapter-1.indd 8 12-08-2016 2:02:21 PM

(i) प्राचीन आर्य भाषा काल —इस काल में वैदिक भाषा और प्राचीन संस्कृत भाषा के विकास की प्रक्रिया चली।

(ii) मध्यकालीन आर्य भाषा काल —इस काल में पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं का विकास हुआ।

(iii) आधुनिक आर्य भाषा काल —इस काल में विभिन्न प्रदेशों में बोली जाने वाली अपभ्रंश भाषाओं से आधुनिक आर्य भाषाओं का विकास हुआ।

- भाषा के रूप – भाषा के दो रूप होते हैं –

(i) व्यावहारिक भाषा —बोलचाल की भाषा

(ii) साहित्यिक भाषा —साहित्य में प्रयुक्त भाषा

- संस्कृत साहित्य का विकास – साहित्यिक भाषा की दो धाराएँ हैं—

(i) वैदिक संस्कृत की धारा

(ii) लौकिक संस्कृत की धारा

- वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत के सन्धिकाल में रामायण तथा महाभारत ग्रन्थों की रचना हुई।
- रामायण तथा महाभारत से ही लौकिक संस्कृत का आरम्भ हुआ। इसी बीच सुप्रसिद्ध विद्वान् पाणिनि का आविर्भाव हुआ जिन्होंने अष्टाध्यायी नामक ग्रन्थ में भाषा-सम्बन्धी नियम बनाए।
- संस्कृत का साहित्यिक विकास चार चरणों में विभक्त है—

(i) वैदिक साहित्य (6000 ई. पू. से 800 ई. पू.)

(ii) रामायण-महाभारत (800 ई. पू. से 300 ई. पू.)

(iii) मध्यवर्ती संस्कृत साहित्य (300 ई. से 1784 ई.)

(iv) आधुनिक काल (1784 से आज तक)

- वैदिक और लौकिक संस्कृत में भेद—

वैदिक —

संहिताएँ, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्।

- लौकिक —

वेदाङ्ग, रामायण, महाभारत, नाटक, काव्य, कथा साहित्य, आयुर्वेद इत्यादि तथा वैज्ञानिक साहित्य।

Chapter-1.indd 9 12-08-2016 2:02:21 PM

- संस्कृत भाषा संसार की अत्यन्त प्राचीन भाषा है। इसमें भारतीय सभ्यता और संस्कृति से सम्बद्ध रचनाओं का बहुत बड़ा भण्डार है। इस भाषा में प्राचीन समय से आज तक रचनाएँ होती आ रही हैं। यह भाषा भारोपीय (इंडो-यूरोपियन) परिवार की भाषा है।
- प्राय: 6000 ई. पू. में वैदिक अर्थात् प्राचीन संस्कृत भाषा का विकास माना जाता है। 700 ई. पू. में पाणिनि ने इसे परिनिष्ठित रूप दिया। इस काल के बाद सभी संस्कृत ग्रन्थ इसी भाषा में लिखे गए। इस प्रकार संस्कृत के वैदिक और लौकिक दो रूप सामने आते हैं। आधुनिक आर्य भाषाओं का संस्कृत से घनिष्ठ सम्बन्ध है। पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं का विकास भी वैदिक तथा लौकिक संस्कृत से ही हुआ है। क्षेत्रीय अपभ्रंश भाषाओं से विभिन्न आधुनिक आर्य भाषाओं का विकास हुआ है। इस प्रकार संस्कृत समस्त आर्य भाषाओं की जननी है।

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. संस्कृत भाषा के महत्त्व को पाँच वाक्यों में लिखिए।

प्र. 2. भारोपीय भाषा परिवार में कौन-कौन सी मुख्य भाषाएँ हैं?

प्र. 3. संस्कृत से विकसित होने वाली भारतीय भाषाओं के नाम लिखिए।

प्र. 4. द्रविड परिवार की कौन-सी भाषाएँ संस्कृत से प्रभावित हैं?

प्र. 5. वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत में क्या अन्तर है? उदाहरण देकर बताइए।

प्र. 6. संस्कृत साहित्य के इतिहास का क्या उद्देश्य है?

प्र. 7. प्राकृत के कौन-कौन से मुख्य भेद हैं?

प्र. 8. रिक्त स्थान भरिए —

(क) .... नामक ग्रन्थ में भाषा-सम्बन्धी नियम बताए गए हैं।

(ख) .... भाषा से हिन्दी का विकास हुआ है।

(ग) आरम्भिक बौद्ध साहित्य .... भाषा में लिखा गया।

(घ) वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत के सन्धि-काल में हमें............................. और .... जैसे ग्रन्थ मिलते हैं।

प्र. 9. "क" स्तम्भ में दिए गए परिवारों से "ख" स्तम्भ में दी गई भाषाओं को मिलाइए।

स्तम्भ क	**स्तम्भ ख**
भारत-यूरोपीय परिवार	मराठी, ग्रीक, लैटिन, तेलुगु, कन्नड़
द्रविड परिवार	संस्कृत, ओड़िया, हिन्दी, मलयालम
	अंग्रेजी, पंजाबी, रूसी, तमिल।

Chapter-1.indd 10 12-08-2016 2:02:21 PM

द्वितीय अध्याय

वैदिक साहित्य

भारत के पश्चिमोत्तर भाग में स्थित सप्तसिन्धु प्रदेश के निवासियों की साहित्यिक अभिव्यक्ति मौखिक रूप से जिस भाषा में हुई उसे वैदिक संस्कृत कहते हैं। इस भाषा में बहुमूल्य साहित्यिक परम्परा चली जो धार्मिक एवं लौकिक विषयों से भी भरी थी। वैदिक साहित्य तात्कालिक समाज की प्रवृत्तियों को समझने में बहुत उपादेय है। वैदिक साहित्य के धार्मिक विषयों में यज्ञ, देवता, उनके स्वभाव, भेद आदि आए हैं, तो लौकिक विषयों में मानव की इच्छाएँ, संकट और उनके निवारण, समाज का स्वरूप, चिकित्सा, दान, विवाह आदि हैं। इनसे समाज के विविध पक्षों का बोध होता है। वैदिक साहित्य के विकास का समय 6000 ई.पू. से 800 ई.पू. तक माना जाता है। इस कालावधि में चार चरणों में साहित्य का विकास देखा जाता है।

1. संहिता — संहिताओं में वैदिक मन्त्रों का संग्रह है। इनके चार मुख्य रूप हैं: *ऋग्वेदसंहिता, यजुर्वेदसंहिता, सामवेदसंहिता* तथा *अथर्ववेदसंहिता*। इनका विभाजन वैदिक यज्ञों में काम करने वाले चार ऋत्विजों (यज्ञ कराने वालों) के कार्यों को ध्यान में रखकर हुआ था। यज्ञों में ये चार ऋत्विज होते थे— होता, अध्वर्यु, उद्गाता तथा ब्रह्मा। होता देवताओं को यज्ञ में बुलाता है और ऋचाओं का पाठ करते हुए यज्ञ-देवों की स्तुति करता है। होता के प्रयोग के लिए उपयोगी मन्त्रों का संग्रह *ऋग्वेदसंहिता* में है। अध्वर्यु का काम यज्ञ का विधिपूर्वक सम्पादन है। इसके लिए आवश्यक मन्त्र *यजुर्वेदसंहिता* में संकलित हैं। उद्गाता का काम यज्ञ में ऋचाओं का सस्वर गान करना है। वह मधुर स्वर में देवताओं को प्रसन्न करता है। उसके उपयोग के लिए *ऋग्वेदसंहिता* के मंत्र *सामवेदसंहिता* में संकलित किए गए हैं। ब्रह्मा नामक ऋत्विज् यज्ञ का पूरा निरीक्षण करता है, जिससे कोई त्रुटि न हो। यद्यपि वह सभी वेदों का ज्ञाता होता है, किन्तु उसका अपना विशिष्ट वेद *अथर्ववेद-संहिता* है। इन संहिताओं का अध्ययन विभिन्न परिवारों में पृथक्-पृथक् रूप से होता था, परिणामस्वरूप कालान्तर में इनकी अनेक शाखाएँ हो गईं। आज वैदिक संहिताओं की कुछ ही शाखाएँ उपलब्ध हैं।

2. **ब्राह्मण** — ब्राह्मण-ग्रन्थों का मुख्य उद्देश्य संहिताओं के मंत्रों द्वारा यज्ञों की व्याख्या करना था। इस प्रसंग में बहुत-सी नैतिक, सामाजिक तथा राजनीतिक बातें भी आई हैं। वैदिक धर्म का सांगोपांग विवेचन इन ग्रन्थों में किया गया है। वैदिक संहिताओं की प्रत्येक शाखा की व्याख्या करने वाले ब्राह्मण-ग्रन्थ पृथक्-पृथक् हैं।

3. **आरण्यक** — ब्राह्मण-ग्रन्थों से सम्बद्ध आरण्यकों की रचना वनों में हुई। वैदिक कर्मकाण्ड, अनुष्ठान की उत्पत्ति और उसके महत्त्व के विषय में ऋषियों का जो चिन्तन हुआ, उसे आरण्यकों में रखा गया। ब्राह्मण-ग्रन्थों के समान ये भी सरल गद्य में ही लिखे गए। विभिन्न वैदिक संहिताओं की शाखाओं के आरण्यक भी पृथक्-पृथक् थे। कर्मकाण्डी जनसमुदाय को ज्ञानकाण्ड की ओर लगाने का प्रयास इन आरण्यकों में हुआ है। इनका सम्बन्ध वानप्रस्थ आश्रम से था।

4. **उपनिषद्** — वैदिक साहित्य के विकास के अन्तिम चरण में उपनिषद्-ग्रन्थ आते हैं। इनमें दर्शन-शास्त्र की विवेचना हुई, यद्यपि यह शास्त्र यत्र-तत्र पहले भी संहिताओं और आरण्यकों में आ चुका था। उपनिषदों में गुरु-शिष्य के संवादों के रूप में बहुत गूढ़ बातें कही गई हैं। आत्मा, ब्रह्म तथा संसार के रहस्यों को इन विवेचनाओं में प्रकाशित किया गया है। वैदिक साहित्य के अन्तिम भाग में होने तथा वैदिक दर्शन के विकसित रूप को प्रकाशित करने के कारण इन्हें वेदान्त भी कहा जाता है।

मूल वैदिक साहित्य को समझाने और उनका उपयोग बताने के लिए वेदाङ्ग ग्रन्थ बने। इनके छ: भेद हैं— शिक्षा (उच्चारण की विधि), कल्प (कर्मकाण्ड तथा आचार), छन्द (अक्षरों की गणना के आधार पर पद्यात्मक मन्त्रों के स्वरूप का निर्धारण तथा नामकरण), निरुक्त (वैदिक शब्दों का निर्वचन या व्याख्या), व्याकरण (शब्दों की व्युत्पत्ति) तथा ज्योतिष (यज्ञ के समय का निरूपण)। इन्हें उपयोगिता की दृष्टि से वैदिक साहित्य में ही रखा जाता है, यद्यपि इन विषयों से सम्बद्ध ग्रन्थ लौकिक संस्कृत भाषा में लिखे गए। वेदांग प्राय: सूत्रात्मक हैं और वैदिक कर्मकाण्ड की विपुलता को संक्षिप्त वाक्यों में प्रकाशित करते हैं। मुख्य रूप से कर्मकाण्ड से सम्बद्ध कल्प-ग्रन्थों को सूत्र-साहित्य में रखा जाता है। इनके मुख्य चार भेद हैं— श्रौतसूत्र (वैदिक यज्ञों की प्रक्रिया बतलाने वाले), गृह्य-सूत्र (व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जीवन से सम्बद्ध कर्मकाण्ड का वर्णन करने वाले), धर्मसूत्र (धार्मिक एवं सामाजिक नियमों, कर्त्तव्यों और अधिकारों का वर्णन करने वाले) तथा शुल्ब-सूत्र (यज्ञवेदिका को नापने और उसके निर्माण का वर्णन करने वाले)।

Chapter-2.indd 12 12-08-2016 2:03:03 PM

वैदिक साहित्य के प्रमुख ग्रन्थों का परिचय

1. ऋग्वेद — *ऋग्वेद* विश्व का प्रथम व्यवस्थित उपलब्ध ग्रन्थ है। सप्तसिन्धु प्रदेश में रहने वाले आर्यों ने जो अपने धार्मिक विचार तथा दार्शनिक भावनाएँ काव्य-रूप में व्यक्त की थीं, उन्हीं का संग्रह *ऋग्वेद*-संहिता है। ऋग्वेद के समय में जो सांस्कृतिक चेतना थी, वही आज भी भारतीय मानस में वर्तमान है। इससे संस्कृत की धारा के निरन्तर प्रवाह की पुष्टि होती है। *ऋग्वेद* के रचनाकाल को लेकर अनेक मत प्रचलित हैं। परम्परागत भारतीय मत है कि वेद अपौरुषेय हैं अर्थात् किसी पुरुष या व्यक्ति विशेष ने इनकी रचना नहीं की। वैदिक संहिताओं में संकलित मन्त्रों के साथ मन्त्र-द्रष्टा ऋषि, देवता तथा छन्द का उल्लेख भी प्राप्त होता है। आधुनिक विद्वान् इससे सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार इनकी भी रचना उसी प्रकार हुई, जिस प्रकार संस्कृत के अन्य ग्रन्थों की। अपने इसी मत के आधार पर उन्होंने *ऋग्वेद* के काल-निर्णय का प्रयास किया। काल के विषय में वे स्वयं भी एकमत नहीं हैं। अलग-अलग विद्वानों ने इसका काल अलग-अलग माना है। 6000 ई. पू. से लेकर 800 ई. पू. तक इसका समय माना गया है। अधिसंख्य विद्वानों के अनुसार इसकी रचना 2000 ई. पू. के आसपास हुई। कतिपय पाश्चात्त्य विद्वानों के मतानुसार सिन्धु घाटी की सभ्यता के लोगों के साथ ऋग्वेदीय आर्यों का युद्ध होता रहता था। आर्यों के शत्रुओं के रूप में *ऋग्वेद* में पणि, दास तथा अरि का उल्लेख मिलता है। उनके मतानुसार इससे *ऋग्वेद* की रचना के काल पर प्रकाश पड़ता है।

ऋग्वेद में अपने समय के बिखरे हुए मन्त्रों का संग्रह है, जो विभिन्न कृषि परिवारों में प्रचलित थे और जिनकी परम्परा उन ऋषि परिवारों में चली आ रही थी। *ऋग्वेद* को इसी संग्रह के कारण संहिता कहा गया है। इसमें ऋचाओं का संकलन है। पूरा *ऋग्वेद* 10 मण्डलों में विभक्त है। प्रत्येक मण्डल में अनेक सूक्त हैं। सम्पूर्ण *ऋग्वेद* में 1028 सूक्त हैं। कई ऋचाओं के संग्रह को सूक्त कहते हैं, जो किसी विशेष देवता या विषयवस्तु से सम्बद्ध होते हैं। मण्डलों का विभाजन ऋषियों के परिवारों के आधार पर हुआ है। कई मण्डलों में किसी एक ही ऋषि द्वारा या उसके परिवार में पठित ऋचाओं का ही संग्रह है। कई मन्त्रों की उद्भावना ऋषिकाओं ने भी की है, जैसे — लोपामुद्रा, अपाला, रोमशा आदि। ऋचाओं की कुल संख्या 10580 है।

इस वेद के प्रथम तथा दशम मण्डल का आकार अपेक्षाकृत बड़ा है। इनमें अनेक वंशों के ऋषियों की रचनाएँ हैं। इन मण्डलों को विषयवस्तु तथा भाषा के आधार पर बाद

Chapter-2.indd 13 12-08-2016 2:03:03 PM

की रचना माना गया है। इन्हीं मण्डलों में आर्यों के दार्शनिक और लौकिक विचार व्यक्त हुए हैं। अन्य मण्डल प्राचीनतर हैं। नवम मण्डल में सोम से सम्बद्ध मन्त्रों को एकत्र किया गया है। शेष मण्डलों में एक-एक गोत्र या वंश के ऋषियों की रचनाएँ हैं, इसलिए इनको वंश-मण्डल भी कहा जाता है। सप्तम मण्डल की ऋचाएँ सबसे पुरानी मानी जाती हैं।

यद्यपि *ऋग्वेद* की इक्कीस शाखाएँ थीं, किन्तु आज केवल शाकल, आश्वलायन एवं शांखायन शाखा ही मिलती हैं। *ऋग्वेद* में आर्यों की एक लंबी बौद्धिक परम्परा प्राप्त होती है। इस परम्परा में धार्मिक, सामाजिक और दार्शनिक विषयों का भी निरूपण हुआ है। भारत की प्राचीनतम संस्कृति के विकास के ज्ञान के लिए *ऋग्वेद* का अनुशीलन अपेक्षित है। धार्मिक दृष्टि से रचित सूक्तों की संख्या इस संहिता में अवश्य ही सर्वाधिक है। ऋग्वेद के सूक्तों में प्रमुख रूप से इन्द्र और अग्नि देवता की प्रार्थना है। अन्य देवताओं में सविता, रुद्र, मित्र, वरुण, सूर्य, मरुत् आदि के अतिरिक्त उषा देवी भी हैं। यही नहीं, मन्यु (क्रोध) के रूप में अमूर्त देवता की भी प्रार्थना की गई है।

इन देवताओं में नियामक तत्त्व के रूप में *ऋग्वेद* के ऋषियों ने ईश्वर को जगत् का नियन्ता बताया है, जिसे उन्होंने पुरुष एवं हिरण्यगर्भ भी कहा है। हिरण्यगर्भ सूक्त में कहा गया है कि संसार के आरम्भ में हिरण्यगर्भ ही उत्पन्न हुआ, जो समस्त चराचर का स्वामी था और इसी ने स्वर्ग, पृथ्वी सभी को धारण किया। विशाल पर्वत और गंभीर सागर उस हिरण्यगर्भ-रूप परमात्मा (प्रजापति) के अनुशासन में ही अवस्थित हैं।

ऋग्वेद संहिता में लौकिक विषयों पर भी ऋषियों की दृष्टि पड़ी है। इसमें द्यूत-क्रीड़ा के दोष, मण्डूकों की ध्वनि, विवाह की विधि, दान की महिमा इत्यादि विषयों का भी उल्लेख है। इससे प्रतीत होता है कि ऋषियों ने धर्म और दर्शन की विवेचना में तल्लीन होकर लौकिक विषयों की उपेक्षा नहीं की थी। उषा के सूक्तों में वैदिक ऋषियों की ललित भावना भी दृष्टिगत होती है। ये सूक्त परवर्ती गीतिकाव्य के स्रोत समझे जाते हैं।

पुरुष-सूक्त में सृष्टि की प्रक्रिया का प्रतिपादन है, तो नासदीय सूक्त में सृष्टि की रहस्यमयता का भी संकेत है। सृष्टि से पहले न सत् था, न असत्। न ही उस समय मृत्यु थी, न अमरता। उस समय अन्धकार ही सर्वत्र वर्तमान था। इस प्रकार *ऋग्वेद* में गूढ़ दार्शनिक विचारों को भी महत्त्व दिया गया था। *ऋग्वेद* में बहुत से संवाद-सूक्त भी हैं, जिन्हें कुछ लोग नाटकों का प्रारम्भिक रूप भी कहते हैं। इन सूक्तों में पुरुरवा-उर्वशी तथा यम-यमी के संवाद सामान्य लोकजीवन के भावों को व्यक्त करते हैं। इन संवादों में प्रेम, हास्य, करुणा एवं वीरता जैसे मानवीय भावों का भी चित्रण हुआ है।

Chapter-2.indd 14 12-08-2016 2:03:03 PM

ऋग्वेद के अनुशीलन से तात्कालिक आर्यों और दासों के जीवन के विषय में पर्याप्त जानकारी मिलती है। यहीं दोनों के परस्पर संघर्ष का वर्णन मिलता है। आर्य जहाँ दानी, उदार और धर्मनिष्ठ थे, वहाँ दास लोग कृपण, अनुदार तथा नास्तिक थे। वे विभिन्न प्रथाओं को मानते थे। ऋग्वेद सप्तसिन्धु प्रदेश की तात्कालिक सभ्यता और संस्कृति का चित्र प्रस्तुत करने वाला अद्वितीय ग्रन्थ है।

2. **यजुर्वेद** — प्राचीन काल में *यजुर्वेद* की कुल 101 शाखाएँ थीं। इसके दो रूप हैं— *कृष्णयजुर्वेद* तथा *शुक्लयजुर्वेद।* कृष्णयजुर्वेद की सर्वाधिक प्रसिद्ध शाखा तैत्तिरीय संहिता और *शुक्ल यजुर्वेद* की प्रसिद्ध शाखा *वाजसनेयी संहिता* है। कुछ लोग इसे ही मौलिक *यजुर्वेद* कहते हैं। इसमें केवल मन्त्रों का संग्रह है, जबकि *कृष्णयजुर्वेद* की संहिता में ब्राह्मण ग्रन्थ के विषय भी मिश्रित हैं। *कृष्णयजुर्वेद* की अन्य संहिताएँ हैं— मैत्रायणी, काठक, कपिष्ठल इत्यादि। इनका प्रचार दक्षिण भारत में अधिक है।

यजुर्वेद अनुष्ठान-विषयक संहिता है। यज्ञ में अध्वर्यु के द्वारा प्रयुक्त मन्त्रों का इसमें संग्रह है। *कृष्णयजुर्वेद* में इन मन्त्रों के विषय में चर्चाएँ भी हैं, किन्तु *शुक्लयजुर्वेद* इन चर्चाओं से शून्य है। *शुक्लयजुर्वेद* में 40 अध्याय हैं, जिनमें विविध यज्ञों से सम्बद्ध मन्त्र संकलित हैं। इन यज्ञों में दर्शपूर्णमास, अग्निहोत्र, चातुर्मास, सोमयाग, वाजपेय, राजसूय, सौत्रामणि, अश्वमेध आदि प्रमुख हैं। इसके सोहलवें अध्याय को रुद्राध्याय कहते हैं, जिसमें रुद्र के विविध रूपों को नमस्कार किया गया है। चौंतीसवें अध्याय में शिवसंकल्प की प्रार्थना है। पैंतीसवें अध्याय में पितरों की प्रार्थना की गई है। अन्तिम अध्याय दार्शनिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें ईश्वर को संसार का नियामक कहा गया है। यही अध्याय कुछ परिवर्तनों के साथ ईशावास्योपनिषद् के रूप में आया है। *यजुर्वेद* में बहुत सुन्दर प्रार्थना-मन्त्र हैं, जैसे —

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।

अर्थात, हे अग्निदेव! धन-प्राप्ति के लिए आप हमें सन्मार्ग पर ले चलें। हे देव, आप हमारे (अच्छे-बुरे) सभी कार्यों को जानते हैं।

यजुर्वेद में कुछ मन्त्र पद्यात्मक और कुछ गद्यात्मक हैं। कर्मकाण्ड में उपयोगी होने के कारण *यजुर्वेद* अन्य सभी वेदों की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय है। वेदों के अधिकांश भाष्यकार *यजुर्वेद* पर व्याख्या लिखना अपना पहला कर्त्तव्य समझते हैं।

Chapter-2.indd 15 12-08-2016 2:03:03 PM

3. **सामवेद** — प्राचीन ग्रन्थों की सूचना के आधार पर *सामवेद* की 1000 शाखाएँ थीं, किन्तु आज तीन-चार शाखाएँ ही उपलब्ध हैं। इनमें कौथुम शाखा अधिक लोकप्रिय है। *सामवेद* के मन्त्रों का प्रयोग यज्ञ में देवताओं के आवाहन के लिए उचित स्वर के साथ उद्गाता द्वारा किया जाता था। इसलिए साम-मन्त्रों का पाठ नहीं, अपितु गान होता है। *सामवेद* छन्दोबद्ध है तथा 75 मन्त्रों को छोड़कर शेष मन्त्र ऋग्वेद में भी उपलब्ध होते हैं। *सामवेद* के मन्त्रों के गान में लय तथा स्वर का विशेष विधान है।

सामवेद संहिता के दो भाग हैं— *पूर्वार्चिक* तथा *उत्तरार्चिक*। *पूर्वार्चिक* में आग्नेय, ऐन्द्र, पवमान तथा आरण्य-पर्व के रूप में मन्त्रों का विभाजन है। वस्तुत: इन देवताओं से सम्बद्ध मन्त्रों को पृथक्-पृथक् रखा गया है। *उत्तरार्चिक* को दशरात्र, संवत्सर, एकाह आदि विषयों के अनुसार व्यवस्थित किया गया है। *सामवेद* में ग्रामगेय (स्वर-विशेष) गानों की संख्या सर्वाधिक है। आरण्यगान में संकटपूर्ण और वर्जित रागों को संकलित किया जाता था। इसलिए ये ग्रामों में नहीं गाए जाते थे। इन दोनों से सम्बद्ध क्रमश: ऊहगान और ऊह्यगान हैं, जो यज्ञकार्यों में साम-मन्त्रों को क्रमबद्धता प्रदान करते हैं। इस प्रकार इसमें ये चार महत्त्वपूर्ण गान हैं— ग्राम, आरण्य, ऊह तथा ऊह्य।

सामवेद का महत्त्व संगीत की दृष्टि से बहुत अधिक है। इससे भारतीय संगीत का उद्भव हुआ। *सामवेद* के रागों का विकास धार्मिक तथा सांस्कृतिक दोनों प्रकार के गीतों से हुआ। सामगान की अनेक विधियों में (जो *सामवेद* के ब्राह्मण-ग्रन्थों में विहित हैं) अब कुछ ही शेष हैं।

4. **अथर्ववेद :** *अथर्ववेद* में यज्ञ से भिन्न विषयों का विपुल संकलन है। बहुत दिनों तक कर्मकाण्ड से इसे पृथक् रखा गया था। त्रयी का अर्थ तीन वेद होता है, जिसमें *अथर्ववेद* का समावेश नहीं होता। किन्तु वैदिक परम्परा में ही उसे *ब्रह्मवेद* कहा गया है अर्थात् वह ब्रह्मा नामक ऋत्विज् के उपयोग के लिए है। वस्तुत: *अथर्ववेद* को *अथर्वाङ्गिरस* वेद कहा जाता था। अर्थात् इसके दो ऋषि थे — अथर्वा और अङ्गिरा।

इस वेद का विभाजन 20 काण्डों में किया गया है, जिनमें सूक्त और मन्त्र हैं। सूक्तों की संख्या 731 तथा मन्त्रों की 5849 है। इनमें से लगभग 1200 मन्त्र ऋग्वेद संहिता से लिए गए हैं। इस वेद का षष्ठांश गद्य में है। काण्डों के विभाजन में कोई विषय-व्यवस्था नहीं है, किन्तु एक सूक्त में किसी एक ही विषय से सम्बद्ध मन्त्र हैं। आरम्भिक काण्डों का संकलन व्यवस्था विशेष के अन्तर्गत है, क्योंकि प्रथम काण्ड में चार मन्त्रों वाले, द्वितीय काण्ड में पाँच मन्त्रों वाले, तृतीय में छ: मन्त्रों वाले, चतुर्थ काण्ड में सात मन्त्रों वाले और पंचम काण्ड में आठ या अधिक मन्त्रों वाले सूक्त रखे गए हैं। छठे काण्ड के 142 सूक्तों में सभी तीन मन्त्र वाले हैं।

Chapter-2.indd 16 12-08-2016 2:03:03 PM

इसी प्रकार सातवें काण्ड के 118 सूक्तों में एक-दो मन्त्रों वाले सूक्त हैं। पन्द्रहवाँ एवं सोलहवाँ काण्ड गद्य में है। ये भाषा-शैली की दृष्टि से ब्राह्मण-ग्रन्थों के समान लगते हैं।

अथर्ववेद में ही सर्वप्रथम लौकिक विषयों को व्यापक महत्त्व दिया गया है। इसलिए इसकी विषयवस्तु में बहुत विविधता मिलती है। जीवन के प्राय: सभी पक्षों का स्पर्श इसमें हुआ है, किन्तु विशेष रूप से तात्कालीन विश्वासों का प्रकाशन इसमें अधिक है। इसी क्रम में अभिचार (मारण, मोहन, उच्चाटन आदि) से सम्बद्ध क्रियाओं का निरूपण है। अध्यात्म-विद्या, शत्रुनाश, आरोग्य-प्राप्ति, गृह-सुख, कृषि में वृद्धि, भूत-प्रेतों का निवारण, कीट-पतंगों का नाश, इष्ट वस्तु का लाभ, विवाह, वाणिज्य, पितरों की पूजा आदि का विवेचन *अथर्ववेद* के मन्त्रों में है। विविध रोगों का स्वरूप बतलाकर उनके निवारण की व्यापक विधि इसमें दी गई है। कहीं सर्प-विष के नाश की प्रार्थना है, तो कहीं रोगों के निवारण के लिए शमीवृक्ष से प्रार्थना की गई है। कहीं जीविका-प्राप्ति के लिए प्रार्थना है। ब्रह्मचर्य की महत्ता बतलाने के साथ-साथ सौमनस्य के लिए प्रार्थना भी की गई है—"मैं तुम्हारे मन को सौहार्द तथा सौमनस्य से युक्त करता हूँ। सभी लोग परस्पर प्रेम रखें, जैसे गाय अपने बछड़े से रखती है। पुत्र पिता का अनुगामी हो, माता वात्सल्यमयी हो, पत्नी पति से मधुर वाणी का व्यवहार करे। भाई-भाई से द्वेष न करे, न बहन-बहन से द्वेष रखे, सभी अच्छे संकल्प लेकर कल्याण युक्त वाणी बोलें।" *अथर्ववेद* के बारहवें काण्ड में भूमिसूक्त है, जिसमें पृथ्वी की महत्ता का प्रतिपादन है। इसी में कहा गया है— **माता भूमि: पुत्रो अहं पृथिव्या:।** अर्थात् पृथ्वी मेरी माता है, मैं उसका पुत्र हूँ।

अथर्ववेद में दार्शनिक सूक्त भी आए हैं, जो ब्रह्म, तप और असत् के विषय में विचार करते हैं। ये विचार बाद में उपनिषदों में विकसित हुए। सामान्य वैदिक धर्म की मुख्य धारा से पृथक् विशुद्ध लोक-प्रचलित विश्वासों का प्रतिपादक होने के कारण *अथर्ववेद* का वैदिक साहित्य में स्वतन्त्र महत्त्व है।

ब्राह्मण ग्रन्थ

भारतीय परंपरा मन्त्र और ब्राह्मण दोनों को वेद कहती है (मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्), किन्तु, आधुनिक विचारक वेद से केवल संहिता-भाग का ही ग्रहण करते हैं। ब्राह्मण शब्द ब्रह्मन् से बना है, जिसका अर्थ है— वेद (ब्रह्म) से सम्बद्ध। अत: वेदों की शाखाओं की व्याख्या करने के लिए पृथक्-पृथक् ब्राह्मण ग्रन्थ लिखे गए। यद्यपि इनका स्वरूप मूलत: धार्मिक है, पर राजनीतिक, सामाजिक तथा दार्शनिक विषयों का भी इनमें समावेश है। ये सभी विषय मन्त्रों की व्याख्या से ही जोड़े गए हैं। वैदिक कर्मकाण्ड का विकास इन्हीं ग्रन्थों

Chapter-2.indd 17 12-08-2016 2:03:03 PM

से जाना जा सकता है। इनके अतिरिक्त सृष्टि से सम्बद्ध पौराणिक कथाएँ भी ब्राह्मणों में आई हैं। वस्तुत: वैदिक संहिताओं के प्रतीकात्मक अर्थों को ब्राह्मणों में विस्तार दिया गया है। इनमें मत्स्य द्वारा सृष्टि की रक्षा, शुन:शेप की बलि दिए जाने से रक्षा इत्यादि कथाएँ हैं। यहाँ प्रत्येक याज्ञिक विधान से कोई न कोई आख्यान जोड़ दिया गया है।

ऋग्वेद-संहिता से सम्बद्ध दो ब्राह्मण-ग्रन्थ हैं— *ऐतरेय* और *कौषीतकि*। पहले में 40 और दूसरे में 30 अध्याय हैं। दोनों में विषयवस्तु की बहुत समानता है। इनमें सोमयाग, अग्निहोत्र, राजसूय, राज्याभिषेक इत्यादि का विवरण दिया गया है। *ऐतरेय ब्राह्मण* ऐतरेय महीदास की रचना है, जबकि कहोड़ कौषीतकि ने *कौषीतकि ब्राह्मण* की रचना की। इन दोनों में सरल गद्य का प्रयोग है।

शुक्लयजुर्वेद की माध्यन्दिन और काण्व दोनों शाखाओं के ब्राह्मण ग्रन्थों का नाम *शतपथ* है, किन्तु दोनों शाखाओं के *शतपथ ब्राह्मण* पृथक्-पृथक् हैं। इनमें अध्यायों की योजना में अन्तर है। *माध्यन्दिन शतपथ* में 14 काण्ड तथा 100 अध्याय हैं, जबकि *काण्व* शाखा के *शतपथ* में 104 अध्याय तथा 17 काण्ड हैं। *शतपथ ब्राह्मण ऋग्वेद* के बाद वैदिक साहित्य में सबसे बड़ा ग्रन्थ है। इसमें दर्शपूर्णमास, पितृयज्ञ (श्राद्ध), उपनयन, स्वाध्याय, अश्वमेध, सर्वमेध इत्यादि का वर्णन है। पूरे ब्राह्मण-ग्रन्थ में याज्ञवल्क्य को प्रामाणिक माना गया है, क्योंकि इसी ऋषि ने सूर्य की उपासना करके शुक्लयजुर्वेद की प्राप्ति की थी। अग्नि-चयन वाले अध्याय में शाण्डिल्य ऋषि को प्रामाणिक माना गया है। *बृहदारण्यक उपनिषद्* इसी ब्राह्मण का अन्तिम भाग है।

कृष्णयजुर्वेद से सम्बद्ध तैत्तिरीय ब्राह्मण है, जो वास्तव में तैत्तिरीय संहिता का ही परिशिष्ट है। संहिता में कुछ अनुक्त विषय रह गए थे जिनकी पूर्ति इस ब्राह्मण में हुई है। इस वेद की अन्य संहिताओं (काठक, मैत्रायणी आदि) में तो ब्राह्मण ग्रन्थ अंग रूप से ही मिले हुए हैं। तैत्तिरीय ब्राह्मण में तीन अष्टक या काण्ड हैं, जिनमें अग्न्याधान, गवामयन, सौत्रामणि इत्यादि यज्ञों का वर्णन है।

सामवेद से सम्बद्ध कई ब्राह्मण हैं, जैसे— ताण्ड्य (पञ्चविंश), षड्विंश, जैमिनीय इत्यादि। ताण्ड्य ब्राह्मण में प्राचीन दन्तकथाओं के साथ व्रात्यों (आर्य जाति से बहिष्कृत वर्ग) के पुन: वर्णप्रवेश का वर्णन है। षड्विंश ब्राह्मण में चमत्कार और शकुन से सम्बद्ध अद्भुत ब्राह्मण नामक एक अध्याय है। जैमिनीय ब्राह्मण में तीन भाग हैं तथा यह *शतपथ* के समान महत्त्वपूर्ण है। इसमें विज्ञान की भी सामग्री मिलती है। इनके अतिरिक्त *सामवेद* से सम्बद्ध दैवत, आर्षेय, सामविधान, वंश, छान्दोग्य, संहितोपनिषद् इत्यादि कई ब्राह्मण-

Chapter-2.indd 18 12-08-2016 2:03:03 PM

ग्रन्थ हैं। *अथर्ववेद* से सम्बद्ध एक गोपथ ब्राह्मण मिलता है, जिसमें दो भाग हैं— पूर्व गोपथ और उत्तर गोपथ। इसमें सृष्टि, ब्रह्मा, ब्रह्मचर्य, गायत्री आदि की महिमा का वर्णन है। इसमें ओंकार के साथ त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु और शिव) का भी उल्लेख है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में सांस्कृतिक तत्त्वों का बीज भी प्राप्त होता है, जैसे— सृष्टि की व्याख्या, वर्णाश्रम-धर्म, स्त्री-महिमा, अतिथि-सत्कार, यज्ञ का महत्त्व, सदाचार, विद्यावंश इत्यादि।

आरण्यक

आरण्यकों की रचना वनों में हुई। वनों में रहकर चिन्तन करने वाले ऋषियों ने वैदिक कर्मकाण्डवाद से पृथक् रहकर उनमें प्रतीक खोजने की चेष्टा की। ब्राह्मणों के परिशिष्ट के रूप में विकसित आरण्यकों में यज्ञ के अंतर्गत अध्यात्मवाद का पल्लवन किया गया। कर्म की यही व्याख्या आगे चलकर मीमांसा-दर्शन, धर्मशास्त्र तथा कर्मवाद में विकसित हुई। वानप्रस्थों के यज्ञों का विधान करने के साथ-साथ उपनिषदों के ज्ञान-काण्ड की भूमिका भी आरण्यकों में तैयार की गई। प्राणविद्या का विवेचन आरण्यकों का वैशिष्ट्य है।

इस समय सात आरण्यक ग्रन्थ उपलब्ध हैं। ऋग्वेद के आरण्यक— *ऐतरेय और कौषीतकि,* ये दोनों इन्हीं नामों वाले ब्राह्मण-ग्रन्थों के अंग हैं। यजुर्वेद के *बृहदारण्यक, तैत्तिरीयारण्यक* तथा *मैत्रायणीयारण्यक* नामक तीन आरण्यक हैं। सामवेद के *जैमिनीय* और *छान्दोग्य* आरण्यक मिलते हैं। इन सभी में अपनी शाखाओं से सम्बद्ध कर्मों का विचार किया गया है, साथ ही संन्यास-धर्म का भी महत्त्व बतलाया गया है। *बृहदारण्यक* में कहा गया है कि इसे जानकर मनुष्य मुनि बन जाता है। आत्मा को जानकर वह ब्रह्मलोक की कामना करते हुए परिव्राजक बनकर पुत्र, वित्त और लोक की एषणा (इच्छा) का त्याग करता है तथा भिक्षाचर्या करता है।

उपनिषद्

वैदिक साहित्य में प्रचार की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्व उपनिषदों का है। इनकी महत्ता दार्शनिक विचारों के कारण है, जिनसे ये देश-विदेश में लोकप्रिय हैं। दाराशिकोह ने इनका अनुवाद फारसी में किया था। पुन: यूरोपीय भाषाओं में भी इनका अनुवाद हुआ। फ्रांसीसी दार्शनिक शापेनहावर ने कहा था — "उपनिषद् मेरे जीवन तथा मृत्यु दोनों के लिए सान्त्वनादायक हैं।"

प्राचीन उपनिषदों की संख्या 13 थी, किन्तु कालान्तर में इनकी संख्या शताधिक हो गई। परवर्ती उपनिषदों में विभिन्न मतावलम्बियों ने अपने धर्मों का सार प्रकट किया, किन्तु

Chapter-2.indd 19 12-08-2016 2:03:03 PM

इनका सम्बन्ध वैदिक साहित्य से स्थापित नहीं हो सकता। वैदिक शाखाओं में मौलिक रूप से दार्शनिक चिन्तन के लिए विकसित उपनिषदों की गणना इस प्रकार की जाती है—

ऋग्वेद से सम्बद्ध	—	ऐतरेय तथा कौषीतकि।
कृष्णयजुर्वेद से सम्बद्ध	—	कठ, श्वेताश्वतर, मैत्रायणी (मैत्री) तथा तैत्तिरीय।
शुक्लयजुर्वेद से सम्बद्ध	—	ईश तथा बृहदारण्यक।
सामवेद से सम्बद्ध	—	छान्दोग्य तथा केन।
अथर्ववेद से सम्बद्ध	—	प्रश्न, मुण्डक तथा माण्डूक्य।

उपनिषदों में प्राय: संवादों के द्वारा तत्त्वज्ञान समझाया गया है। उनमें पुरुष के शरीर में प्राणादि की प्रतिष्ठा, आत्मा से सृष्टि की उत्पत्ति, विद्या और अविद्या का अन्तर, जगत् और आत्मा के स्वरूप, ब्रह्मतत्त्व इत्यादि विषय बहुत रोचक शैली में समझाए गए हैं। कहीं प्रश्नोत्तर के द्वारा, तो कहीं दृष्टान्तों के द्वारा इन विषयों का निरूपण हुआ है। उपनिषदों में गद्य और पद्य दोनों का प्रयोग है। *बृहदारण्यक* तथा *छान्दोग्य* बड़े उपनिषद् हैं शेष लघु हैं। *माण्डूक्योपनिषद्* में तो केवल 12 वाक्य हैं। *ईशोपनिषद्* में 18 मन्त्र हैं, जो *यजुर्वेद* के चालीसवें अध्याय के रूप में हैं। *कठोपनिषद्* में यम-नचिकेता के संवाद में आत्मा का स्वरूप बतलाया गया है। *बृहदारण्यक* में जनक-याज्ञवल्क्य के शास्त्रार्थ से ब्रह्म का निरूपण है। इस उपनिषद् में याज्ञवल्क्य की विदुषी पत्नी मैत्रेयी तथा उनसे शास्त्रार्थ करने वाली गार्गी की कथा आई है, जिससे उस युग की विदुषी स्त्रियों का पता लगता है।

उपनिषदों के आधार पर वेदान्त-दर्शन का विकास हुआ, जिसके फलस्वरूप *ब्रह्मसूत्र* की रचना बादरायण ने की। महाभारत के भीष्मपर्व में अवस्थित *गीता* भी उपनिषदों के दर्शन को ही पौराणिक शैली में प्रस्तुत करती है। उपनिषदों में परम सुख की प्राप्ति का मार्ग समझाया गया है। ब्रह्म के लक्षण हैं— *सत्, चित्* और *आनन्द*। इन तीनों की व्याख्या उपनिषदों में सम्यक् रूप से की गई है।

शंकराचार्य ने मुख्य 10 उपनिषदों पर भाष्य लिखकर अद्वैतवाद का प्रवर्तन किया। इसी प्रकार वेदान्त के विभिन्न सम्प्रदायों में उपनिषदों की अपने-अपने ढंग से व्याख्या की गई। उपनिषदों में दर्शन-शास्त्र के अमूल्य रत्न भरे पड़े हैं।

वेदाङ्ग

कालक्रम से वैदिक संस्कृत के स्थान पर लौकिक संस्कृत का प्रचलन होने पर, वैदिक मन्त्रों का उच्चारण करना तथा अर्थ समझना कठिन हो गया। यास्क ने कहा है कि वैदिक

Chapter-2.indd 20 12-08-2016 2:03:03 PM

अर्थों को समझने में कठिनाई का अनुभव करने वाले लोगों ने निरुक्त तथा अन्य वेदाङ्गों की रचना की। वेदों के छ: अंग माने गए— शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष तथा छन्द। इन्हें समझने वाला व्यक्ति ही वेदों का सही उच्चारण, अर्थबोध एवं यज्ञ कार्य कर सकता था। इन सभी शास्त्रों के ग्रन्थ लौकिक संस्कृत में लिखे गए, क्योंकि इनके विकास का कारण ही था वैदिक संस्कृत का प्रयोग समाप्त हो जाना। इनका काल 800 ई. पू. से प्रारम्भ होता है।

- **शिक्षा** — यह उच्चारण का विज्ञान है, जो स्वर-व्यञ्जन के उच्चारण का विधान करता है। इसका विस्तार *प्रातिशाख्य* ग्रन्थों में मिलता है। वेदों की पृथक्-पृथक् शाखाओं का उच्चारण बतलाने के कारण इन्हें *प्रातिशाख्य* कहा जाता है। *ऋक्प्रातिशाख्य* शौनक-रचित ग्रन्थ है, जो ऋग्वेद के अक्षरों, वर्णों एवं स्वरों की संधियों का विवेचन करता है। इसी प्रकार अन्य वेदों के भी प्रातिशाख्य हैं, जो उन वेदों के उच्चारणों का वैशिष्ट्य बतलाते हैं। ये सभी सूत्र रूप में हैं।
- **कल्प** — यह मुख्यत: वैदिक कर्मकाण्ड का प्रतिपादन करने वाला वेदाङ्ग है। कल्प का अर्थ है विधान। यज्ञ-सम्बन्धी विधान कल्प सूत्रों में दिए गए हैं। कल्प के चार भेद हैं, जिन्हें श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र तथा शुल्बसूत्र कहते हैं। ये चारों विभिन्न वेदों के लिए पृथक्-पृथक् हैं। श्रौतसूत्रों में श्रौतयज्ञों का विधान है, जैसे— दर्शपूर्णमास, अग्निहोत्र, चातुर्मास्य, वाजपेय, अतिरात्र, पितृमेध इत्यादि। इस समय आश्वलायन, शांखायन (ऋग्वेद), कात्यायन (शुक्लयजुर्वेद), जैमिनीय (सामवेद) वैतान (अथर्ववेद) इत्यादि श्रौतसूत्र उपलब्ध हैं। गृह्यसूत्र गृह्याग्नि में होने वाले संस्कारों तथा गृह्ययागों का वर्णन करते हैं, जैसे — उपनयन, विवाह आदि। सभी वेदों से सम्बद्ध लगभग 20 गृह्यसूत्र प्राप्त हैं। धर्मसूत्रों में मानव-धर्म, समाज-धर्म, राजधर्म तथा पुरुषार्थों का वर्णन है। इस समय छ: धर्मसूत्र मिलते हैं— गौतम, आपस्तम्ब, वसिष्ठ, बौधायन, हिरण्यकेशी और विष्णुधर्मसूत्र। ये धर्मसूत्र ही परवर्ती स्मृतियों के आधार हैं। शुल्ब का अर्थ है मापने का सूत (धागा)। इन सूत्रों में यज्ञवेदिका के निर्माण आदि का वर्णन रेखागणित (ज्यामिति) की सहायता से किया गया है।
- **व्याकरण**— इसे वेदों का मुख कहा गया है। इस शास्त्र में प्रकृति और प्रत्यय के रूप में विभाजन करके पदों की व्युत्पत्ति बतलाई जाती है। व्याकरण की बहुत लम्बी परम्परा इन्द्र आदि वैयाकरणों से चली, किन्तु उस परम्परा के अवशेष यत्र-तत्र उद्धरणों में ही पाए जाते हैं। प्रथम उपलब्ध व्याकरण ग्रन्थ के प्रणेता पाणिनि ही

Chapter-2.indd 21 12-08-2016 2:03:03 PM

हैं, जिन्होंने *अष्टाध्यायी* के रूप में वैदिक और लौकिक संस्कृत दोनों भाषाओं का व्याकरण लिखा है। व्याकरण से वेदों की रक्षा होती है तथा वही पदशुद्धि का विचार करता है। सम्प्रति पाणिनि की *अष्टाध्यायी* ही व्याकरण का प्रतिनिधि-ग्रन्थ है, जिस पर टीकाओं की समृद्ध परम्परा मिलती है।

- **निरुक्त** — इसका अर्थ है निर्वचन। वैदिक शब्दों का अर्थ व्यवस्थित रूप से समझाना ही निरुक्त का प्रयोजन है। इस समय यास्क-रचित निरुक्त ही एक मात्र उपलब्ध निरुक्त है। वैदिक शब्दों का संग्रह *निघण्टु* (पाँच अध्याय) के रूप में प्राप्त होता है। उसी की व्याख्या यास्क ने निरुक्त के 14 अध्यायों में की है। यास्क का काल 800 ई. पू. माना जाता है। निरुक्त वेदार्थज्ञान की कुंजी है।
- **ज्योतिष** — यह काल का निर्धारण करने वाला वेदाङ्ग है। वैदिक-यज्ञ काल की अपेक्षा रखते हैं और वे किसी निश्चित काल में ही सम्पादित होते हैं, तभी उनका फल मिलता है। इसका निश्चय *ज्योतिष* करता है। काल का विभाजन, मुहूर्त का निश्चय, ग्रहों-नक्षत्रों की गति का निर्धारण इत्यादि *ज्योतिष* के ही विषय हैं। लगधाचार्य ने इन कार्यों के लिए वेदाङ्ग ज्योतिष नामक ग्रन्थ लिखा था। इसके दो संस्करण हैं— आर्च ज्योतिष (ऋग्वेद से सम्बद्ध) जिसमें 36 श्लोक हैं तथा *याजुष् ज्योतिष* (*यजुर्वेद* से सम्बद्ध), जिसमें 43 श्लोक हैं।
- **छन्द** — यह पद्यबद्ध वेदमन्त्रों के सही-सही उच्चारण के लिए उपयोगी वेदाङ्ग है। इससे वैदिक मन्त्रों के चरणों का ज्ञान होता है। इसका ज्ञान वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के लिए आवश्यक है। इससे छन्द: शास्त्र का महत्त्व सिद्ध होता है। वेदों में सात मुख्य छन्द प्रयुक्त हैं— गायत्री (आठ अक्षरों के तीन चरण), अनुष्टुप् (आठ अक्षरों के चार चरण), त्रिष्टुप् (11 अक्षरों के चार चरण) बृहती, जगती, पङ्क्ति, उष्णिक्। छन्द: शास्त्र जानने से वैदिक मन्त्रों के चरणों की व्यवस्था समझी जा सकती है तथा मन्त्र-पाठ के समय उचित विराम हो सकता है।
- वेदों और वेदाङ्गों के सम्यक् ज्ञान के लिए कालान्तर में कुछ परिशिष्ट ग्रन्थ भी लिखे गए। इन ग्रन्थों को *अनुक्रमणी* कहते हैं। इनमें देवता, ऋषि, छन्द, सूक्त इत्यादि की गणना हुई है। सभी वेदों की पृथक्-पृथक् अनुक्रमणियाँ हैं। *ऋग्वेद* की अनुक्रमणियाँ शौनक ने लिखीं। *ऋग्वेद* के देवताओं की अनुक्रमणी के रूप में छन्दोबद्ध ग्रन्थ *बृहद्देवता* उपलब्ध है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें आठ अध्याय तथा 1204 श्लोक हैं।

Chapter-2.indd 22 12-08-2016 2:03:03 PM

इसी प्रकार, *ऋक्सर्वानुक्रमणी, छन्दोऽनुक्रमणी, आर्षानुक्रमणी* आदि परिशिष्ट ग्रन्थ हैं। *यजुर्वेद* के परिशिष्ट कात्यायन ने रचे। *अथर्ववेद* के परिशिष्टों में सर्वानुक्रमणी महत्त्व रखती है। इसमें *अथर्ववेद* के प्रत्येक काण्ड के देवताओं, ऋषियों, सूक्तों और मन्त्रों का विवरण है। ये परिशिष्ट वेदों की रक्षा करने में महत्त्वपूर्ण योगदान करते रहे हैं। इन्हीं के कारण वेदों में एक अक्षर की भी न्यूनता और वृद्धि नहीं हो सकी है।

संस्कृत साहित्य के प्रथम चरण में विकसित वैदिक वाङ्मय की व्याख्याएँ परवर्ती युग में बहुत दिनों तक होती रहीं। व्याख्याओं के संबंध में विभिन्न मत चलते रहे और विभिन्न भाषाओं में इनके अनुवाद भी होते रहे हैं। आधुनिक युग में इन वैदिक ग्रन्थों के अच्छे-अच्छे संस्करण व्याख्याओं और अनुवादों के साथ प्रकाशित हुए हैं।

ध्यातव्य बिन्दु

- वैदिक साहित्य — धार्मिक एवं लौकिक विषयों से परिपूर्ण वैदिक संस्कृत में लिखित बहुमूल्य साहित्यिक परम्परा।
- वैदिक साहित्य का विकास काल — 6000 ई.पू. से 800 ई.पू. तक।
- वैदिक साहित्य के विकास के चार चरण— (i) संहिता, (ii) ब्राह्मण, (iii) आरण्यक एवं (iv) उपनिषद्।
- *संहिता* — वैदिक मन्त्रों का सङ्ग्रह।
- संहिता के चार मुख्य रूप — (i) ऋग्वेद संहिता, (ii) यजुर्वेदसंहिता, (iii) सामवेद संहिता एवं (iv) अथर्ववेदसंहिता।
- यज्ञ के चार ऋत्विज — (i) होता, (ii) अध्वर्यु, (iii) उद्गाता एवं (iv) ब्रह्मा।
- सूत्र-साहित्य — कर्मकाण्ड से सम्बद्ध कल्प-ग्रन्थ।
- सूत्र साहित्य के मुख्य चार भेद — (i) श्रौत, (ii) गृह्य, (iii) धर्म एवं (iv) शुल्ब।
- *ऋग्वेद* — ऋचाओं का संकलन एवं सप्तसिन्धु प्रदेश की तात्कालिक सभ्यता और संस्कृति का चित्रण करने वाला अद्वितीय ग्रन्थ।
  - समय — 6000 ई.पू. से 1200 ई.पू. (विभिन्न विद्वानों के मतानुसार)
  - मण्डल — 10
  - सूक्त — 1028
  - ऋचाओं की संख्या — 10580
- *ऋग्वेद* की उपलब्ध शाखाएँ — शाकल, आश्वलायन एवं शांखायन।

Chapter-2.indd 23 12-08-2016 2:03:03 PM

- यजुर्वेद — अनुष्ठान विषयक संहिता।
- यजुर्वेद के दो रूप — (i) कृष्णयजुर्वेद एवं (ii) शुक्लयजुर्वेद।
- कृष्णयजुर्वेद की प्रसिद्ध शाखा — तैत्तिरीय संहिता।
- कृष्णयजुर्वेद की अन्य संहिताएँ — (i) मैत्रायणी, (ii) काठक एवं (iii) कपिष्ठल।
- शुक्लयजुर्वेद की प्रसिद्ध शाखा — वाजसनेयी संहिता
- शुक्लयजुर्वेद में अध्याय- 40
- सामवेद — मन्त्रगानयुक्त एवं छन्दोबद्ध रचना। इसी वेद से सङ्गीत शास्त्र की उत्पत्ति हुई
- सामवेद की प्रसिद्ध शाखा — कौथुम शाखा।
- अथर्ववेद — अध्यात्म विद्या, शत्रुनाश, आरोग्य-प्राप्ति, कृषिवृद्धि, विवाह, वाणिज्य, अभिचार आदि से सम्बद्ध-मन्त्रों का संकलन।
- *अथर्ववेद* का अन्य नाम — *अथर्वाङ्गिरस* वेद।

  ऋषि — अथर्वा और अङ्गिरा।

  काण्ड — 20

  सूक्त — 731

  मन्त्र — 5849
- ब्राह्मण ग्रन्थ — 'ब्रह्मन्' अर्थात् वेद (ब्रह्म) से सम्बद्ध। वैदिक मन्त्रों की कर्मकाण्डपरक व्याख्या करने वाला ग्रन्थ।
- ऋग्वेद— संहिता से सम्बद्ध ब्राह्मण ग्रन्थ — (i) ऐतरेय ब्राह्मण एवं (ii) कौषीतकी ब्राह्मण।
- शुक्लयजुर्वेद का ब्राह्मण — शतपथ।
- कृष्णयजुर्वेद का ब्राह्मण — तैत्तिरीय।
- सामवेद से सम्बद्ध ब्राह्मण-ग्रन्थ — ताण्ड्य, षड्विंश, जैमिनीय इत्यादि।
- अथर्ववेद का ब्राह्मण-ग्रन्थ — गोपथ।
- आरण्यक — ऋषियों के वैदिक कर्मकाण्ड से सम्बद्ध चिन्तन प्रधान ग्रन्थ।
- उपलब्ध आरण्यक — I. ऋग्वेदीय- (i) ऐतरेय एवं (ii) कौषीतकि

  II. यजुर्वेदीय- (i) बृहदारण्यक, (ii) तैत्तिरीय एवं (iii) मैत्रायणीय।

  III. सामवेदीय - (i) जैमिनीय एवं (ii) छान्दोग्य।
- उपनिषद् — वैदिक साहित्य के ज्ञानप्रधान आध्यात्मिक ग्रन्थ।

Chapter-2.indd 24 12-08-2016 2:03:03 PM

- उपनिषद् के विषय — आत्मा, जीव, जगत्, ईश्वर, ब्रह्म, मोक्ष आदि पर विचार।
- मुख्य उपनिषद् — 13
- वेदाङ्ग — वैदिक मन्त्रों के उच्चारण, अर्थबोध तथा उपयोग हेतु निर्मित ग्रन्थ।
- वेदाङ्ग के छ: भेद — (i) शिक्षा (उच्चारण की विधि)
  (ii) कल्प (कर्मकाण्ड तथा आचार)
  (iii) व्याकरण (शब्दों की व्युत्पत्ति)
  (iv) निरुक्त (वैदिक शब्दों का निर्वचन तथा व्याख्या)
  (v) ज्योतिष (यज्ञ के काल निरूपण)
  (vi) छन्द (अक्षरों की गणना के आधार पर पद्यात्मक मन्त्रों के स्वरूप का निर्धारण तथा नामकरण)

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. वैदिक साहित्य के विकास का समय बताइए।
प्र. 2. संहिता किसे कहते हैं? मुख्य संहिताओं के नाम लिखिए।
प्र. 3. ऋत्विजों के नाम तथा कार्यों का उल्लेख कीजिए।
प्र. 4. ब्राह्मणग्रन्थों की रचना का उद्देश्य क्या था?
प्र. 5. किन ग्रन्थों से वानप्रस्थ आश्रम का सम्बन्ध था?
प्र. 6. उपनिषदों को वेदान्त क्यों कहते हैं?
प्र. 7. वेदाङ्ग किसे कहते हैं तथा इसके अन्तर्गत किन-किन शास्त्रों को लिया गया है?
प्र. 8. कल्पसूत्र के मुख्य भेदों के नाम लिखिए।
प्र. 9. *ऋग्वेद* में आर्यों की किन भावनाओं का संग्रह है?
प्र. 10. *ऋग्वेद* में कितने मण्डल हैं?
प्र. 11. सूक्त किसे कहते हैं?
प्र. 12. *ऋग्वेद* के सूक्तों की संख्या बताइए।
प्र. 13. *ऋग्वेद* में ऋचाओं की कुल संख्या कितनी है?
प्र. 14. *ऋग्वेद* में किस मण्डल की ऋचाएँ सबसे पुरानी मानी जाती हैं?
प्र. 15. आर्य लोगों ने *ऋग्वेद* में किन-किन देवताओं को प्रमुख स्थान दिया?
प्र. 16. *ऋग्वेद* में मुख्यत: किन लौकिक विषयों का वर्णन मिलता है?
प्र. 17. सृष्टि प्रक्रिया का वर्णन *ऋग्वेद* में कौन से सूक्त में किया गया है।
प्र. 18. *यजुर्वेद* की मुख्य शाखाएँ बताइए।
प्र. 19. *शुक्लयजुर्वेद* की प्रसिद्ध शाखा का नाम लिखिए।
प्र. 20. *यजुर्वेद* की अधिक लोकप्रियता का क्या कारण है?

Chapter-2.indd 25 12-08-2016 2:03:03 PM

प्र. 21. *सामवेद* के मन्त्रों का गायन कौन-सा ऋत्विक् करता है?
प्र. 22. *सामवेद* के किन गानों की संख्या सर्वाधिक है?
प्र. 23. *सामवेद* के विषय में 50 शब्दों में लिखिए।
प्र. 24. वेदत्रयी में गिने जाने वाले वेदों के नाम बताइए।
प्र. 25. *अथर्ववेद* के रचयिता कौन थे?
प्र. 26. *अथर्ववेद* के मन्त्रों में किन-किन बातों का वर्णन है?
प्र. 27. ब्राह्मण ग्रन्थों से क्या तात्पर्य है?
प्र. 28. *ऋग्वेद* संहिता से सम्बद्ध ब्राह्मण के नाम लिखिए।
प्र. 29. *ऐतरेय ब्राह्मण* किसकी रचना है?
प्र. 30. ब्राह्मण ग्रन्थों में सबसे बड़ा कौन-सा ग्रन्थ है?
प्र. 31. याज्ञवल्क्य ने *शुक्लयजुर्वेद* की प्राप्ति कैसे की?
प्र. 32. ब्राह्मण ग्रन्थों में किन विषयों का वर्णन हुआ है?
प्र. 33. आरण्यकों की रचना कहाँ हुई?
प्र. 34. आरण्यकों में किन विषयों की चर्चा की गई है?
प्र. 35. मुख्य आरण्यक ग्रन्थों के नामों का उल्लेख कीजिए।
प्र. 36. शापेनहावर ने उपनिषदों के विषय में क्या कहा था?
प्र. 37. मौलिक उपनिषदों की संख्या कितनी थी? उनके नाम लिखिए।
प्र. 38. यम-नचिकेता का संवाद किस उपनिषद् में है?
प्र. 39. उपनिषदों के आधार पर कौन-से दर्शन का विकास हुआ?
प्र. 40. ब्रह्मसूत्र के रचयिता कौन थे?
प्र. 41. ब्रह्म के किन रूपों की व्याख्या उपनिषदों में की गई है?
प्र. 42. उपनिषदों का प्रथम भाष्य किसने लिखा है?
प्र. 43. निरुक्त का संकलन क्यों किया गया?
प्र. 44. वेदाङ्ग शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
प्र. 45. *प्रातिशाख्य* नामक ग्रन्थ में किस वेदाङ्ग का विस्तार हुआ है?
प्र. 46. कल्प से आप क्या समझते हैं तथा उसके मुख्य भेद कौन-कौन से हैं?
प्र. 47. गृह्याग्नि में होने वाले संस्कारों का वर्णन किस सूत्र में किया गया है?
प्र. 48. परिशिष्ट ग्रन्थों की रचना क्यों की गई?
प्र. 49. नीचे लिखे वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(क) मानवधर्म, समाजधर्म, राजधर्म और पुरुषार्थों का वर्णन .... सूत्र में हुआ है।
(ख) .... को वेदों का मुख कहा गया है।
(ग) वैदिक शब्दों का वैज्ञानिक रीति से अर्थ समझाना .... का प्रयोजन है।
(घ) वैदिक मन्त्रों की पद्यबद्ध रचना का नियामक .... शास्त्र है।
(ङ) काल का निर्धारण करने वाला शास्त्र .... कहलाता है।

Chapter-2.indd 26 12-08-2016 2:03:03 PM

तृतीय अध्याय

रामायण, महाभारत एवं पुराण

रामायण और *महाभारत* संस्कृत भाषा के ऐसे महान ग्रन्थ हैं, जिन पर भारत की बहुत बड़ी साहित्यिक सम्पदा आश्रित है। ये दोनों ग्रन्थ वैदिक और लौकिक साहित्य के सन्धि काल में लिखे गए। इनसे संस्कृत साहित्य ही नहीं, अपितु भारतीय समाज भी प्रभावित हुआ। सामान्य भारतीय जीवन पर भी *रामायण* और *महाभारत* का व्यापक प्रभाव पड़ा है। भारतीय समाज के विषय में कोई भी अध्ययन इन महाग्रन्थों के अनुशीलन के बिना अपूर्ण है। दोनों ग्रन्थों ने अनेक कवियों और नाटककारों को कथानक दिए हैं, इसलिए इन्हें उपजीव्य काव्य कहा जाता है।

दोनों ग्रन्थों का प्रभाव समान होने पर भी कई दृष्टियों से ये परस्पर भिन्न हैं। *रामायण* को आदिकाव्य कहा जाता है, क्योंकि इसने वैदिक संस्कृत से भिन्न लौकिक संस्कृत में काव्यधारा का प्रवर्तन किया। इसके रचयिता वाल्मीकि आदिकवि कहे जाते हैं। दूसरी ओर *महाभारत* को इतिहास कहते हैं, जिसके रचयिता व्यास हैं। वह विश्वकोष के समान भारतवर्ष के ज्ञान-विज्ञान के सभी पक्षों का निरूपण करता है। इसके वर्तमान स्वरूप के विकास में कई पीढ़ियों का योगदान है।

रामायण

रामायण के रचयिता वाल्मीकि ने प्रथम अलंकृत काव्य लिखकर समस्त परवर्ती भारतीय कवियों के लिए आदर्श प्रस्तुत किया था (मधुमयभणितीनां मार्गदर्शी महर्षि:)। कहा जाता है कि एक निषाद द्वारा क्रीडारत क्रौञ्च पक्षी के मारे जाने की घटना देखकर, करुणा से वाल्मीकि का हृदय द्रवित हो उठा और उनके मुख से स्वयं ही यह पद्य फूट पड़ा—

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगम: शाश्वती: समा:।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधी: काममोहितम्।।

महर्षि वाल्मीकि की वाणी अनुष्टुप् छन्द में फूटी थी जो लौकिक संस्कृत भाषा का श्लोक था। उसी वाणी में उन्होंने आदर्श पुरुष राम की कथा लिखी। रामायण में राम की कथा बहुत विस्तार से वर्णित है जहाँ-तहाँ आवश्यकता के अनुसार इसमें कवि वाल्मीकि

ने अवान्तर कथाएँ दी हैं एवं प्रकृति का भी व्यापक वर्णन किया है। वाल्मीकि की दृष्टि इतनी सूक्ष्म है और कल्पना-शक्ति इतनी उर्वर है कि एक-एक दृश्य को उन्होंने बहुत विस्तार प्रदान किया है।

रामायण का विभाजन सात काण्डों में हुआ है— बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड। प्रत्येक काण्ड को सर्गों में विभक्त किया गया है। परवर्ती संस्कृत महाकवियों ने भी *रामायण* के इस आदर्श पर महाकाव्यों को सर्गों में विभक्त किया है तथा महाकाव्य के लक्षणों को स्थापित किया। इसी आधार पर कालिदास, भारवि, माघ आदि ने महाकाव्यों की रचना की। *रामायण* में 24,000 श्लोक हैं।

रामायण के अभी तीन संस्करण उपलब्ध हैं, जो भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित हैं। तीनों संस्करणों की समीक्षा करके बड़ौदा से *रामायण* का विशिष्ट संस्करण निकला है।

रामायण के रचनाकाल के विषय में विद्वानों ने बहुत विवेचन किया है। *महाभारत* से पूर्व इसकी रचना हो चुकी थी, क्योंकि *महाभारत* में *रामायण* की पूरी कथा वर्णित है और राम के जीवन से सम्बद्ध कुछ स्थलों को वहाँ तीर्थ के रूप में देखा गया है। *रामायण* का संकेत जैन और बौद्ध ग्रन्थों से भी प्राप्त होता है। इस प्रकार *रामायण* की रचना पाँचवी शताब्दी ई. पू. में मानी जाती है।

रामायण का सांस्कृतिक मूल्य

रामायण का सांस्कृतिक महत्त्व बहुत अधिक है। वाल्मीकि ने इस महाकाव्य के द्वारा जीवन के आदर्शभूत और शाश्वत मूल्यों का निर्देश किया है। इसमें उन्होंने राजा, प्रजा, पुत्र, माता, पत्नी, पति, सेवक आदि संबंधों का एक आदर्श स्वरूप प्रस्तुत किया है। राम का चरित्र एक आदर्श महापुरुष के रूप में है, जो सत्यवादी, दृढ़संकल्प वाले, परोपकारी, चरित्रवान्, विद्वान्, शक्तिशाली, सुन्दर, प्रजापालक तथा धीर पुरुष हैं। वाल्मीकि ने उनके गुणों को बहुत विस्तार से प्रकट किया है। इसी प्रकार सीता के आदर्श तथा गौरवपूर्ण पत्नी-रूप को भी वाल्मीकि ने स्थापित किया है। राम का भ्रातृप्रेम *रामायण* में अत्यंत सरल एवं भावपूर्ण शब्दों में व्यक्त किया गया है—

देशे देशे कलत्राणि देशे देशे च बान्धवा:।
तं तु देशं न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदर:।।

किसी भी देश में पत्नी प्राप्त की जा सकती है तथा बन्धुत्व कहीं भी स्थापित किया जा सकता है, किन्तु सहोदर भाई कहीं नहीं प्राप्त हो सकता है।

Chapter-3.indd 28 12-08-2016 2:32:36 PM

राम का चरित्र इतना उदार और ऊँचा है कि वे रावण की मृत्यु के बाद विभीषण को उसके शरीर-संस्कार का उपदेश देते हैं। वे कहते हैं— विभीषण! शत्रु की मृत्यु से वैर का अन्त हो जाता है। हमारी शत्रुता भी समाप्त हो गई। अब तो रावण का शरीर मेरे लिए भी वैसा ही है, जैसा तुम्हारे लिए—

मरणान्तानि वैराणि निर्वृत्तं नः प्रयोजनम् ।
क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव ।।

भरत की राज्यपद के प्रति अनासक्ति, लक्ष्मण की भ्रातृ-सेवा एवं हनुमान् की स्वामिभक्ति ये तीनों जीवन के सर्वोच्च आदर्श *रामायण* में उपलब्ध होते हैं। काव्य का उद्देश्य है— मधुरभाव से उपदेश देना। उसमें वाल्मीकि को पूरी तरह सफलता मिली है। प्रकृति-वर्णनों में कवि वाल्मीकि तन्मय हो जाते हैं। उनकी उपमाएँ हृदय को आकृष्ट कर लेती हैं। अशोकवाटिका में शोकमग्न सीता की तुलना कवि संदेह से भरी स्मृति, अधूरी श्रद्धा, नष्ट हुई आशा, विघ्न से युक्त सिद्धि, कलुषित बुद्धि तथा लोकनिन्दा के कारण नष्ट कीर्ति से करते हैं। इससे कवि हमारे हृदय में करुणा की भावना जगाते हैं।

रामायण से संस्कृत कवियों को तथा समस्त भारतीय भाषाओं के कवियों को भी राम-कथा लिखने की प्रेरणा मिली तथा विदेशों में भी रामायण का प्रभाव स्थापित हुआ। पूरे एशिया महाद्वीप की सर्वाधिक प्रसिद्ध कथा राम-कथा ही है।

महाभारत

महर्षि व्यास द्वारा रचित *महाभारत* संस्कृत वाङ्मय का सबसे बड़ा ग्रन्थ है, जिसमें एक लाख श्लोक हैं। इसीलिए इसे शतसाहस्री संहिता भी कहते हैं। *महाभारत* में मूलतः कौरवों और पाण्डवों का संघर्ष वर्णित है, किन्तु प्रासंगिक रूप से प्रतिपादित जीवन-विषयक प्राचीन भारतीय ज्ञान के सभी पक्षों का यह अद्भुत विश्वकोष है। इसका शान्तिपर्व युगों से जीवन की समस्याओं का समाधान करता आ रहा है। इस इतिहास ग्रन्थ को प्राचीन भारतीयों ने धर्म-ग्रन्थ की मान्यता दी है तथा इसे पंचम वेद कहा है। दार्शनिक समस्याओं का समाधान करने वाला विश्वप्रसिद्ध ग्रन्थ *भगवद्गीता, महाभारत* के भीष्मपर्व का एक अंश है। *महाभारत* अपनी विशालता के अतिरिक्त संसार के सभी विषयों को समाविष्ट करने के कारण महत्त्वपूर्ण है।

इसके विषय में कहा गया है—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित् ।।

Chapter-3.indd 29 12-08-2016 2:32:36 PM

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों लक्ष्यों के विषय में जो बातें इस ग्रन्थ में कही गई हैं, वे ही अन्यत्र मिलती हैं, किंतु जो इसमें नहीं हैं, वे कहीं नहीं मिलती हैं। इस उक्ति से महाभारत के विवेचनीय विषय की व्यापकता सिद्ध होती है।

रामायण के समान *महाभारत* भी संस्कृत कवियों के लिए कथानक की दृष्टि से उपजीव्य ग्रन्थ रहा है। इसकी मुख्य कथा तथा उपाख्यानों के आधार पर विभिन्न कालों में संस्कृत कवियों ने काव्य, नाटक, चम्पू, कथा, आख्यायिका आदि अनेक प्रकार की साहित्यिक सृष्टि की है। इण्डोनेशिया, जावा, सुमात्रा आदि देशों के साहित्य पर भी *महाभारत* का प्रभाव विद्यमान है। वहाँ के लोग भी *महाभारत* के पात्रों के अभिनय से अपना मनोरंजन करने के साथ-साथ शिक्षा भी ग्रहण करते हैं।

महर्षि वेदव्यास का नाम कृष्णद्वैपायन भी है। *महाभारत* के पात्रों से उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। *महाभारत* के आदि-पर्व में कहा गया है कि कृष्णद्वैपायन ने तीन वर्षों तक निरन्तर परिश्रम से *महाभारत* की रचना की थी। इतिहास के आधुनिक विद्वानों का कहना है कि *महाभारत* को एक लाख श्लोकों का वर्तमान रूप अनेक शताब्दियों के विकासक्रम में प्राप्त हुआ। व्यास ने प्राचीन काल की गाथाओं को एकत्र करके इस ग्रन्थ की मूल रचना की थी। इसके विकास के तीन चरण हैं— *जय, भारत* और *महाभारत*। जय नामक ग्रन्थ में 8,800 श्लोक थे। इसमें पाण्डवों की विजय का वर्णन किया गया था। दूसरे चरण में *भारत* नामक ग्रन्थ प्रस्तुत हुआ, जिसमें 24,000 श्लोक थे। इसमें उपाख्यान नहीं थे। युद्ध का वर्णन ही प्रधान विषय था। इसी *भारत* को वैशम्पायन ने पढ़कर जनमेजय को सुनाया था। इस ग्रन्थ में जब उपाख्यान आदि जोड़े गए तथा इसे व्यापक विश्वकोश का स्वरूप दिया गया, तब इसका नाम *महाभारत* पड़ा। यही *महाभारत* लोमहर्षण के पुत्र उग्रश्रवा द्वारा नैमिषारण्य में शौनकादि ऋषियों को सुनाया गया था। ये उपाख्यान प्राचीन लोककथाओं के साहित्यिक संस्करण थे। इस स्थिति से इसमें एक लाख श्लोक हो गए। यह भारतीय धर्म और संस्कृति का विशाल भण्डार बन गया।

महाभारत के दो पाठ प्राप्त होते हैं- एक उत्तर भारत का, दूसरा दक्षिण भारत का। दोनों में श्लोक-संख्या, अध्यायों का क्रम तथा आख्यानों के स्थान को लेकर बहुत अन्तर है। महाभारत के विशुद्ध रूप को सुनिश्चित करने वाला एक संस्करण पुणे से प्रकाशित हुआ है।

महाभारत का विभाजन पर्वों में हुआ, जिनकी संख्या 18 है— आदि, सभा, वन, विराट, उद्योग, भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, सौप्तिक, स्त्री, शान्ति, अनुशासन, आश्वमेधिक, आश्रमवासिक, मौसल, महाप्रस्थानिक तथा स्वर्गारोहण। इन पर्वों का पुन: विभाजन अध्यायों में हुआ है। इनमें कौरवों तथा पाण्डवों की उत्पत्ति से लेकर पाण्डवों के स्वर्ग

Chapter-3.indd 30 12-08-2016 2:32:36 PM

जाने तक का वर्णन है। यही *महाभारत* की मूल कथा है। इसमें बहुत से मार्मिक प्रसंगों का वर्णन किया गया है, जैसे— द्यूत-क्रीड़ा, द्रौपदी का अपमान, विराट की राजसभा में पाण्डवों का छद्म रूप से रहना, कौरवों तथा पाण्डवों का युद्ध इत्यादि।

हस्तिनापुर के सिंहासन के लिए कौरवों और पाण्डवों के संघर्ष का इसमें वर्णन है। पाण्डवों ने कौरवों से आधा राज्य प्राप्त कर राजसूय यज्ञ किया, किन्तु ईर्ष्यालु कौरवों ने पाण्डवों को जुए में हराकर उन्हें शर्त के अनुसार तेरह वर्षों के लिए वन जाने को विवश कर दिया। अन्तिम वर्ष में अज्ञातवास की यह शर्त रखी गई कि यदि इस अवधि में पाण्डवों का पता चल गया, तो उन्हें पुन: उतने ही वर्षों के लिए वनवास स्वीकार करना पड़ेगा। पाण्डव सफलतापूर्वक यह शर्त पूरी करने पर अपना राज्य माँगते हैं, किन्तु उन्हें राज्य नहीं दिया जाता। इसीलिए *महाभारत* का युद्ध होता है जो 18 दिनों तक चलता है। इसमें कौरवों का सर्वनाश हो जाता है। उल्लेखानुसार संजय ने युद्ध का वर्णन नेत्रहीन धृतराष्ट्र के लिए एक स्थान पर बैठे-बैठे किया था। युद्ध के आरम्भ में विषादग्रस्त अर्जुन को युद्ध के लिए कृष्ण प्रेरित करते हैं और गीता का अमूल्य उपदेश देते हैं। कर्म की प्रेरणा देने वाला *भगवद्गीता* नामक यह ग्रन्थ इतना महत्त्वपूर्ण है कि प्राचीन काल से आधुनिक काल तक देश-विदेश के दार्शनिकों को प्रभावित करता रहा है।

महाभारत का रचनाकाल बुद्ध-महावीर से पूर्व माना जाता है। इस ग्रन्थ का उल्लेख आश्वलायन गृह्यसूत्र में पहली बार आया है। प्रथम शताब्दी ईसवी में इसका प्रचार दक्षिण भारत में हो गया था।

महाभारत का सांस्कृतिक महत्त्व

महाभारत का महत्त्व सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत अधिक है। यह अपने आप में संपूर्ण साहित्य है। इसके शान्तिपर्व में राजनीति के विषयों का व्यापक एवं गम्भीर प्रतिपादन है। इसके पात्रों को व्यास ने उपदेश का आधार बनाया है, जिससे लोग कर्तव्य की शिक्षा ले सकें। यह एक ऐसा धार्मिक ग्रन्थ है, जिसमें प्रत्येक श्रेणी का मनुष्य अपने जीवन के अभ्युदय की सामग्री प्राप्त कर सकता है। बाणभट्ट ने व्यास को कवियों का निर्माता कहा है, क्योंकि *महाभारत* से कवियों को काव्य सृष्टि के लिए प्रेरणा मिलती रही है। *गीता* में कर्म, ज्ञान और भक्ति का सुन्दर समन्वय है। *महाभारत* में व्यास ने कहा है कि धर्म शाश्वत है। अत: इसका परित्याग किसी भी दशा में भय या लोभ से नहीं करना चाहिए। शान्ति पर्व में कहा गया है कि राजधर्म के बिगड़ने पर राज्य तथा समाज का सर्वनाश जो जाता है। मानव जीवन को धर्म, अर्थ और काम के द्वारा मोक्ष की ओर ले जाने की प्रक्रिया *महाभारत* में अच्छी तरह बताई गई है। इसलिए धर्म, राजनीति, दर्शन आदि सभी विषयों का यह अक्षय कोष है।

Chapter-3.indd 31 12-08-2016 2:32:36 PM

गीता

महाभारत के भीष्म पर्व के अन्तर्गत 18 अध्यायों तथा 700 श्लोकों में व्याप्त *गीता* एक स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में विश्वविख्यात है। युद्ध के आरम्भ में युद्ध के भयावह परिणाम की कल्पना करके अर्जुन विषादग्रस्त हो जाते हैं, तब उन्हें कर्म के लिए प्रेरित करते हुए कृष्ण उपदेश देते हैं। भगवान् कृष्ण के द्वारा उपदिष्ट होने से इसे मूलत: *भगवद्गीता* कहते हैं। यद्यपि अर्जुन को युद्ध के लिए प्रवृत्त करने का उद्देश्य दो-तीन अध्यायों में ही पूरा हो गया था, किन्तु जीवन की व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक समस्याओं को सुलझाने के लिए अर्जुन के प्रासंगिक प्रश्नों का उत्तर देने के कारण गीता का आकार बड़ा हो गया।

गीता के अध्यायों को योग कहा गया है। *गीता* में योग का अर्थ है सम-दृष्टि (समत्वं योग उच्यते) अथवा कुशलतापूर्वक कर्म करना (योग: कर्मसु कौशलम्) जिससे बन्धन न हो। गीता में मुख्य रूप से तीन योगों का प्रतिपादन किया गया है— कर्मयोग, ज्ञानयोग तथा भक्तियोग। ये तीनों परस्पर सम्बद्ध तथा पूरक हैं।

कर्मयोग का अर्थ है अपने निर्धारित कर्तव्यों का निष्पादन, भौतिक लाभ की आशा रखे बिना काम करना। इसे 'निष्काम कर्म' भी कहा गया है। कामना से कर्म में आसक्ति होती है, जिससे बन्धन की उत्पत्ति होती है। कृष्ण कहते हैं— "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" (तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है, फल तुम्हारे वश में नहीं है।)

ज्ञानयोग इसी की सिद्धि करता है। सर्वोपरि ज्ञान यह है कि विश्व पर नियन्त्रण करने वाला परमात्मा (पुरुषोत्तम) है— 'वासुदेव: सर्वम्।' यह ज्ञान हो जाने पर ही निष्काम कर्म संभव है, अन्यथा मनुष्य को स्वार्थ (सकाम कर्म) से पृथक् नहीं किया जा सकता। कर्म, कर्मफल, प्रकृति आदि सब कुछ पुरुषोत्तम से नियन्त्रित होकर चल रहा है।

भक्तियोग परमात्मा को ही सर्वस्वसमर्पण का नाम है। इसे योग-दर्शन में 'ईश्वर-प्रणिधान' कहते हैं। अपने सभी कर्मों को ईश्वरार्पण की दृष्टि से करें, तो मानव कभी असत्कर्म नहीं कर सकता। *गीता* का वाक्य है— 'तत्कुरुष्व मदर्पणम्।'

भगवद्गीता पर संस्कृत में अनेक टीकाएँ लिखी गई हैं। विश्व की प्राय: सभी भाषाओं में इसके अनुवाद, टीका, विवेचन, निबन्ध, भाष्य आदि लिखे गए हैं। यह संसार के सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रन्थों में है।

महाभारत एवं आधुनिक समाज

महाभारत की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह एक शाश्वत धर्म—व्यवस्था का विधान करता है। यह शाश्वत धर्म व्यवस्था, अनेक दृष्टियों से भिन्न होते हुए भी अभिन्न रूप वाली

Chapter-3.indd 32 12-08-2016 2:32:36 PM

है। इस तथ्य को इस रूप में समझा जा सकता है कि महाभारतकार धर्म को रूढ़ व्यवस्था नहीं मानते। वह उसे बदलते समाज एवं काल के साथ परिवर्तनीय स्वीकार करते हैं।

मनुस्मृति एवं *रामायण* आदि में प्रतिपादित धर्म प्राय: रूढ़ हैं जिनका उल्लंघन करने पर मनुष्य पाप का भागीदार बनता है। परन्तु महाभारतकार का कहना है कि धर्म का निर्णय देश, काल तथा व्यक्ति के अनुसार होता है। अत: उसे रूढ़ नहीं माना जा सकता। शाश्वत धर्म को वेदव्यास भी मानते हैं जो त्रिकालाबाधित है तथा सदैव एकरूप ही रहता है। उसका उल्लंघन अवश्य ही क्षम्य नहीं। परन्तु प्रत्येक युग का भी एक विशिष्ट धर्म होता है जिसे युगधर्म कहा जाता है। इसी प्रकार आपद्धर्म तथा व्यक्तिधर्म भी होते हैं। महाभारत-युगीन नियोगप्रथा और एक पाञ्चाली का पाँच व्यक्तियों से विवाह होना युगधर्म के सर्वोत्तम निदर्शन हैं। गोरक्षा के लिए अर्जुन का युधिष्ठिर एवं द्रौपदी के कक्ष में जाना (तथा प्रतिज्ञा तोड़ना) अथवा महर्षि विश्वामित्र का प्राणरक्षार्थ श्वान का मांस खाना आपद्धर्म का उदाहरण है। इसी प्रकार भीष्म का अम्बा से विवाह न करना उनके व्यक्तिधर्म का उदाहरण है।

इस प्रकार *महाभारत* आज के समाज को धर्मभीरु नहीं, प्रत्युत धर्म के प्रति आश्वस्त बनाता है। 'पञ्चानृतान्याहुरपातकानि' कहकर पितामह भीष्म मानो आज के समाज को आश्वस्त करते हैं कि धर्म हमारा सन्तापक वैरी नहीं, प्रत्युत सन्मित्र है, जो प्रत्येक परिस्थिति में हमारी रक्षा करता है।

पुराण

जिस प्रकार वैदिक धर्म का आधार वेद है, उसी प्रकार उत्तरकालीन हिंदू धर्म (वैष्णव, शैव आदि) का आधार *पुराण* है। *पुराण* का अर्थ प्राचीन वर्णन या आख्यान है। पुराणों में वैदिक गाथाओं का व्याख्यान किया गया है। प्राचीन घटनाओं के विस्तृत वर्णन *पुराण* के नाम से विख्यात हुए। पुराणों ने अपना स्वरूप तीसरी शताब्दी ई. पू. में ही लेना आरंभ कर दिया था।

पुराणों का वर्ण्य विषय अत्यन्त व्यापक है। प्राचीन घटनाओं तथा अन्य विभिन्न विषयों का इनमें अतिशयोक्तिपूर्ण तथा कल्पना से भरपूर वर्णन है। ये आलंकारिक शैली में किन्तु सरल संस्कृत भाषा में लिखे गए हैं। पुराणों में प्राय: अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया गया है, किन्तु कुछ पुराणों में गद्य का भी प्रयोग है। *महाभारत* के समान पुराणों में भी अनेक विषयों का विभिन्न प्रकार से वर्णन है, जिससे इनका स्वरूप भी विश्वकोश के समान हो गया है।

Chapter-3.indd 33 12-08-2016 2:32:36 PM

पुराणों में सामान्यत: पाँच विषयों का वर्णन मिलता है— 1. संसार की सृष्टि ,2. प्रलय के बाद पुन: सृष्टि, 3. राजाओं और ऋषियों के वंशों का वर्णन, 4. संसार का कालविभाग और प्रत्येक काल की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन एवं 5. कलियुग के प्रतापी राजाओं के कार्यों का वर्णन—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्।।

यह विषयवस्तु सभी पुराणों में प्राप्त नहीं होती है। इनके अतिरिक्त वर्णाश्रम-धर्म, कर्मकाण्ड, भूगोल-वर्णन, व्रत, तीर्थ, नदी, देवता इत्यादि के माहात्म्य का वर्णन भी कई पुराणों में मिलता है। इन वर्णनों में अतिशयोक्तियों की अधिकता है, जिससे वास्तविक तथ्य छिप गए हैं। पुराणों की शैली इतनी लोकप्रिय हुई कि वैदिक धर्म के अतिरिक्त जैन और बौद्ध धर्म के अनुयायियों ने भी इस शैली में रुचि ली और अपने पुराणों का विकास किया।

सामान्य रूप से सभी पुराणों का रचयिता व्यास को माना गया है, किन्तु अपनी शैली तथा विषयवस्तु के कारण इनकी रचना विभिन्न युगों में होती रही है। अधिकांश *पुराण* गुप्तकाल में संकलित हुए जब वर्णाश्रम-धर्म पूर्ण उत्कर्ष पर था।

पुराणों की संख्या 18 है। इसके अतिरिक्त 18 उपपुराण भी हैं। पुराणों को विषयवस्तु तथा देवता के आधार पर तीन भागों में बाँटा गया है। तदनुसार ब्रह्मा, विष्णु और शिव से संबद्ध छ:-छ: *पुराण* हैं। इनका वर्गीकरण सत्त्व, रजस् एवं तमस्— इन तीन गुणों के आधार पर किया जाता है। ये क्रमश: इस प्रकार हैं—

विष्णु से सम्बद्ध (सात्त्विक) पुराण	— विष्णु, भागवत, नारद, गरुड, पद्म और वराह।
ब्रह्मा से सम्बद्ध (राजस) पुराण	— ब्रह्म, ब्रह्माण ड, ब्रह्मवैवर्त, मार्कण्डेय, भविष्य और वामन।
शिव से सम्बद्ध (तामस) पुराण	— शिव, लिंग, स्कन्द, अग्नि, मत्स्य और कूर्म।

महापुराणों में *शिवपुराण* के स्थान पर *वायुपुराण* और *भागवतपुराण* में श्रीमद्भागवत अथवा देवीभागवत का उल्लेख प्राप्त होता है।

पुराणों की नामगणना का संकेत इस श्लोक में मिलता है-

मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं वचतुष्टयम्।
अनापलिंगकूस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक्।।

म से दो (मत्स्य, मार्कण्डेय) भ से दो (भविष्य, भागवत), ब्र से तीन (ब्रह्म, ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त), व से चार (विष्णु, वराह, वामन, वायु) तथा अ से (अग्नि), ना से (नारद), प से (पद्म), लिं (लिङ्ग), ग (गरुड), कू से (कूर्म), एक से (स्कन्द)— ये पृथक्-पृथक् पुराण हैं।

Chapter-3.indd 34 12-08-2016 2:32:36 PM

उपपुराणों के नामों के विषय में मतभेद है। कुछ मुख्य उपपुराण हैं- *नृसिंह, नारद, कालिका, साम्ब, पराशर, सूर्य* इत्यादि। *रामायण* और *महाभारत* के समान *पुराण* भी परवर्ती कवियों के लिए उपजीव्य रहे हैं।

पुराणों का ऐतिहासिक और सांस्कृतिक मूल्य

पुराणों का ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्त्व बहुत अधिक है। प्राचीन भारत के राजनीतिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक ज्ञान के लिए *पुराण* समर्थ आधार हैं। कल्पना और अलंकृत वर्णनों की गहराई में जाकर देखें तो प्राचीन भारत का इतिहास इनमें स्पष्ट दिखता है। पार्जिटर नामक विदेशी विद्वान् ने पुराणों के गम्भीर अनुशीलन से भारतीय राजाओं की वंशावलियाँ प्रस्तुत की थीं, जिनसे उनका ऐतिहासिक महत्त्व सूचित होता है। प्राचीन भारत का व्यापक सांस्कृतिक चित्र इन पुराणों में मिलता है। भारतीय जनमानस के धार्मिक विश्वासों की जड़ में ये पुराण ही हैं। शिव, विष्णु, गणेश, दुर्गा आदि विविध देवताओं की उपासना का आधार भी ये ही हैं। व्रतों और पूजा-पाठ का महत्त्व इन पुराणों में यथास्थान बताया गया है। पुराणों में आख्यानों के द्वारा सामान्य जनता को आचार-विचार की बहुत बड़ी शिक्षा दी गई है। स्वर्ग और नरक के वर्णन से जनता को सही कार्य करने और गलत कार्यों से बचने की शिक्षा देना पुराणों का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

विभिन्न तीर्थों का महत्त्व बतलाकर तीर्थयात्रा के प्रति सामान्य जनता को प्रेरित करके राष्ट्रीय एकता के निर्माण में भी पुराणों की समर्थ भूमिका है। पुराणों ने सम्पूर्ण देश को अखण्ड माना है। विभिन्न सम्प्रदायों को समन्वित करने का प्रयास भी पुराणों ने किया है। पुराणकारों ने सामान्य जनता के लिए ज्ञान-विज्ञान की पूरी सामग्री संकलित तथा पुराणों के पाठ और श्रवण का महत्त्व बताकर अनौपचारिक शिक्षा की दृढ़ व्यवस्था की है।

ध्यातव्य बिन्दु

- *रामायण* और *महाभारत* वैदिक और लौकिक संस्कृत साहित्य के सन्धिकाल के दो महानग्रन्थ हैं।
- महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित *रामायण* आदिकाव्य है, जिसका विभाजन सात काण्डों में हुआ है— बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड।
- महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित *महाभारत* में पाण्डवों की उत्पत्ति से लेकर स्वर्गगमन तक की कथा है। एक लाख श्लोकों के कारण इसे *शतसाहस्रीसंहिता* भी कहते हैं। कुछ लोग इसे *पंचम वेद* भी कहते हैं।

Chapter-3.indd 35 12-08-2016 2:32:36 PM

- *गीता महाभारत* का अंग है। 18 अध्यायों तथा 700 श्लोकों में व्याप्त इसे स्वतन्त्र ग्रन्थ भी माना जाता है।
- *पुराण* वेद के गूढ विषयों तथा प्राचीन सांस्कृतिक तथ्यों का उद्घाटन है। पुराणों की संख्या 18 मानी गई है— मत्स्य, मार्कण्डेय, भागवत, भविष्य, ब्रह्म, ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त, वायु, वामन, वराह, विष्णु, अग्नि, नारद, पद्म, लिङ्ग, गरुड, कूर्म और स्कन्द।

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. उपजीव्य काव्य किसे कहते हैं?
प्र. 2. *रामायण* और *महाभारत* किन दृष्टियों से भिन्न हैं?
प्र. 3. *रामायण* के रचयिता कौन हैं?
प्र. 4. अभी रामायण के कितने संस्करण उपलब्ध हैं?
प्र. 5. *रामायण* की रचना का काल किस शताब्दी में माना जाता है?
प्र. 6. *रामायण* में कितने काण्ड हैं? प्रत्येक का नाम लिखिए।
प्र. 7. *रामायण* में कितने श्लोक हैं?
प्र. 8. वाल्मीकि ने *रामायण* में जीवन के किन आदर्शों को प्रस्तुत किया है?
प्र. 9. *महाभारत* को *शतसाहस्रीसंहिता* क्यों कहते हैं?
प्र. 10. कौन-सा विश्वप्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ *महाभारत* का अंश है?
प्र. 11. *महाभारत* के लेखक कौन हैं?
प्र. 12. महर्षि व्यास का दूसरा नाम क्या है?
प्र. 13. *महाभारत* के विकास के चरणों के नाम बताएँ।
प्र. 14. *महाभारत* कितने पर्वों में बँटा हुआ है?
प्र. 15. *गीता महाभारत* के किस पर्व में है?
प्र. 16. *पुराणों* का रचयिता किसे माना गया है?
प्र. 17. *पुराणों* में मुख्यत: किस छन्द का प्रयोग हुआ है?
प्र. 18. *पुराणों* की संख्या और उनके नाम लिखिए।
प्र. 19. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(क) पुराणों का वर्गीकरण विष्णु .... और सत्त्व .... इन तीन गुणों के आधार पर किया गया है।
(ख) पुराणों में आख्यानों के द्वारा सामान्य जनता को ....की शिक्षा मिलती है।
(ग) *महाभारत* में .... और .... के युद्ध का वर्णन है।
(घ) *गीता* .... की प्रेरणा देने वाला ग्रन्थ है।
(ङ) *पुराण* का अर्थ .... वर्णन या आख्यान है।

Chapter-3.indd 36 12-08-2016 2:32:36 PM

चतुर्थ अध्याय

महाकाव्य

लौकिक संस्कृत भाषा में काव्य-रचना का आरम्भ वाल्मीकि से हुआ। वाल्मीकि को मधुर उक्तियों का मार्गदर्शी महर्षि कहा गया है। विषय का अलंकृत वर्णन, सरल एवं मनोरम पदों से आकर्षक अर्थों की अभिव्यक्ति की रीति वाल्मीकि ने ही दिखाई। उन्होंने राम को नायक बनाकर आदिकाव्य प्रस्तुत किया। वाल्मीकि द्वारा अपनाई गई काव्य पद्धति कुछ काल तक सर्गबन्ध रचना नाम से प्रचलित रही, बाद में इसे महाकाव्य कहा गया। संस्कृत भाषा में कई महाकाव्यों की रचना के बाद उनके लक्षणों का निरूपण काव्यशास्त्रियों ने किया। भामह, दण्डी आदि आचार्यों के अनुसार महाकाव्य का जो लक्षण निश्चित किया है, वह इस प्रकार है—

महाकाव्य सर्गों में बँधा होता है। इसका नायक कोई देवता या उदात्त गुणों से युक्त उच्च कुल में उत्पन्न क्षत्रिय राजा होता है। कभी-कभी एक ही वंश में उत्पन्न अनेक राजा भी इसके नायक हो सकते हैं, जैसा कि कालिदास के रघुवंश में है। महाकाव्य में शृङ्गार, वीर और शान्त इन तीन रसों में से कोई एक प्रधान रस होता है। अन्य रस भी सहायक के रूप में आते हैं। नाटकों में स्वीकृत कथावस्तु की सन्धियों के समान महाकाव्य में भी कथावस्तु के स्वाभाविक विकास हेतु मुख, प्रतिमुख आदि सन्धियों का प्रयोग होता है।। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से कोई एक पुरुषार्थ महाकाव्य के उद्देश्य के रूप में होता है। इसके आरम्भ में नमस्कार, आशीर्वचन अथवा मुख्य कथा का सूचक मंगलाचरण होता है। इसमें कहीं दुष्टों की निन्दा और कहीं सज्जनों की प्रशंसा होती है।

महाकाव्य में सर्गों की संख्या आठ से अधिक होती है। एक सर्ग में प्राय: एक ही छन्द का प्रयोग होता है। उसके अन्त में छन्द का परिवर्तन किया जाता है। सर्ग के अंत में भावी कथा की सूचना दी जाती है। महाकाव्य में सन्ध्या, सूर्य, चन्द्र, रात्रि, प्रभात, आखेट, ऋतु, पर्वत, वन, समुद्र, संयोग, वियोग, मुनि, राजा, यज्ञ, युद्ध, यात्रा, विवाह, मन्त्रणा आदि

का अवसर के अनुकूल वर्णन होता है। महाकाव्य का नामकरण कवि, कथानक, नायक आदि के आधार पर होता है।

संस्कृत महाकाव्यों के विकास-क्रम में क्रमश: कालिदास, अश्वघोष, भारवि, भट्टि, माघ, कुमारदास तथा श्रीहर्ष के नाम मुख्य रूप से लिए जाते हैं। इनकी रचनाएँ महाकाव्य-साहित्य में अमर हैं। इनका विवरण निम्नलिखित है—

कालिदास

संस्कृत कवियों में कालिदास श्रेष्ठ हैं। इन्हें परवर्ती कवियों ने कविकुल-गुरु की उपाधि दी है। उन्होंने दो महाकाव्य *(कुमारसम्भव तथा रघुवंश),* दो खण्डकाव्य *(ऋतुसंहार तथा मेघदूत)* और तीन नाटक *(विक्रमोर्वशीय, मालविकाग्निमित्र* तथा *अभिज्ञानशाकुन्तल)* लिखे हैं।

दुर्भाग्यवश कालिदास का काल निश्चित नहीं है। कुछ लोग इनका काल प्रथम शताब्दी ई. पू. में मानते हैं, तो दूसरे लोग इन्हें गुप्तवंश के चन्द्रगुप्त द्वितीय का समकालिक सिद्ध करते हैं। कालिदास ने अपने काव्यों में वाल्मीकि की शैली को स्वीकार किया है। इस महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में दिलीप की गो-सेवा, चतुर्थ सर्ग में रघु की दिग्विजय यात्रा, षष्ठ सर्ग में इन्दुमती का स्वयंवर एवं त्रयोदश सर्ग में राम का अयोध्या लौटना वर्णित है। ये *रघुवंश* के उत्तम स्थल हैं। *रघुवंश* के अन्तिम (उन्नीसवें) सर्ग में राजा अग्निवर्ण के विलासमय जीवन का चित्र खींचा गया है और रघुकुल का पतन दिखाया गया है। *रघुवंश* गृहस्थ जीवन का समर्थन करता है और रघुवंशी राजाओं के उच्च आदर्शों का प्रतिपादक है।

इन दोनों महाकाव्यों में कालिदास ने वैदर्भी रीति का प्रयोग किया है और उनमें सभी रसों को प्रकाशित करने की क्षमता वाला प्रसाद गुण विद्यमान है।

अश्वघोष

अश्वघोष के दो महाकाव्य हैं *बुद्धचरित* और *सौन्दरनन्द*। इनका समय प्रथम शताब्दी ई. है। ये कुषाणवंश के राजा कनिष्क के समकालिक थे। अश्वघोष मूलत: अयोध्या के रहने वाले ब्राह्मण थे, जो बाद में बौद्ध बन गए थे। ये बहुत बड़े आचार्य और वक्ता थे। इन्होंने इन दो महाकाव्यों के अतिरिक्त एक नाटक *(शारिपुत्र-प्रकरण)* भी लिखा था, जो खण्डित रूप में मध्य एशिया से प्राप्त हुआ है।

Chapter-4.indd 38 12-08-2016 2:05:30 PM

- **बुद्धचरित** — यह भगवान् बुद्ध के जीवन और उपदेशों का वर्णन करता है। इसमें मूलत: 28 सर्ग थे, किन्तु आज इसके प्रथम चौदह सर्ग ही उपलब्ध हैं। वैसे पूरे महाकाव्य के तिब्बती और चीनी भाषा में अनुवाद भी हो चुके थे, जो उपलब्ध हैं। *बुद्धचरित* पर *रामायण* का बहुत अधिक प्रभाव है। इसके कई दृश्य *रामायण* से समता रखते हैं। घटनाओं का चयन तथा आयोजन करने में अश्वघोष अधिक प्रभाव डालते हैं। बौद्ध होते हुए भी प्राचीन वैदिक परम्पराओं के प्रति उनमें गहन निष्ठा है। *बुद्धचरित* के पूर्वार्द्ध में बुद्ध के निर्वाण तक का वर्णन है। शेष भाग में उनके उपदेशों तथा उत्तरकालिक जीवन का चित्रण है।
- **सौन्दरनन्द** — यह अश्वघोष का दूसरा महाकाव्य है, जिसमें 18 सर्ग हैं। इसमें बुद्ध के सौतेले भाई नन्द की धर्मदीक्षा का वर्णन है। इस महाकाव्य के आरम्भिक भाग में कवि ने नन्द और उसकी पत्नी सुन्दरी के परस्पर अनुराग को शृंगार ढंग से प्रस्तुत किया है।

नन्द के बुद्ध के विहार में चले जाने पर दोनों की विरह-व्यथा का पृथक्-पृथक् वर्णन किया गया है। नन्द के मानसिक संघर्ष का चित्रण करने में कवि ने पूर्ण सफलता पाई है। बौद्ध धर्म के उपदेशों का अत्यन्त रोचक उपमाओं के द्वारा इसमें प्रतिपादन किया गया है। जो नन्द काम में आसक्त था, वही धर्मोपदेशक बन जाता है। अश्वघोष के दोनों महाकाव्य वैदर्भी रीति में लिखे गए हैं। उनमें अलंकारों का प्रयोग स्वाभाविक रूप से है। अश्वघोष ने बौद्धधर्म के उपदेशों को काव्य का रूप देकर प्रस्तुत किया है, जिससे लोग संन्यास-धर्म के प्रति प्रवृत्त हों। भोग के प्रति अनासक्ति और संसार की असारता दिखाने में कवि को पूरी सफलता मिली है।

भारवि

भारवि ने संस्कृत महाकाव्य को एक नई दिशा दी। इनके पहले के कवि कथावस्तु के विकास पर अधिक ध्यान देते थे, वर्णनों पर कम। भारवि ने कथानक से अधिक सम्बद्ध वस्तु के वर्णन-वैचित्र्य को महत्त्व दिया। महाकाव्य की इस पद्धति को अलंकृत पद्धति या विचित्र मार्ग कहा गया है।

भारवि का काल 500 ई. से 600 ई. के बीच माना गया है। ऐहोल अभिलेख (634 ई.) में भारवि का नाम कालिदास के साथ लिया गया है। उस समय तक ये प्रसिद्ध कवि हो गए थे।

Chapter-4.indd 39 12-08-2016 2:05:30 PM

- **किरातार्जुनीय** — यह भारवि की एकमात्र रचना है। इसमें 18 सर्ग हैं। इन्द्रकील पर्वत पर दिव्य अस्त्र प्राप्त करने वाले अर्जुन और किरातवेशधारी भगवान् शंकर का युद्ध इस काव्य में मुख्य रूप से वर्णित है। भगवान् शंकर ने प्रसन्न होकर अर्जुन को दिव्य अस्त्र प्रदान किया। इसका कथानक बहुत छोटा है, किन्तु भारवि की वर्णन पद्धति से इस महाकाव्य को विस्तार मिला है। चतुर्थ से एकादश सर्ग तक कवि ने ऋतु, पर्वत, अप्सराओं की क्रीड़ा, सूर्योदय, सूर्यास्त आदि का विस्तृत वर्णन किया है, जिसमें अलंकरण और कल्पना का आधिक्य है तथा स्वाभाविकता का अभाव है। भारवि का अर्थ-गौरव प्रसिद्ध है। इनके श्लोकों में बहुत से ऐसे अंश हैं, जो नीति-वाक्य या लोकोक्ति के रूप में प्रचलित हैं, जैसे— **हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः** (ऐसी बातें दुर्लभ होती हैं, जो हितकर भी हों और मनोहर भी), **सहसा विदधीत न क्रियाम्** (कोई कार्य सहसा नहीं करना चाहिए) इत्यादि। भारवि ने चित्र काव्य का पर्याप्त प्रयोग किया है। कहीं एक ही व्यञ्जन से बना श्लोक है, तो कहीं दो व्यञ्जनों से। इस रचना में भारवि ने पाण्डित्य का प्रदर्शन किया है। इसलिए भारवि की कविता को नारियल के फल के समान कहा गया है, जो ऊपर से रूक्ष है, किन्तु भीतर से सरस है।

भट्टि

अपने काव्य में व्याकरण के नियमों का प्रयोग कर भट्टि ने संस्कृत शास्त्रकाव्य-परम्परा का आरम्भ किया। वे काव्य के द्वारा सरलता से व्याकरण सिखाते हैं। उन्होंने अपना यह काव्य वलभी नगरी (गुजरात) में श्रीधरसेन नामक राजा के संरक्षण में लिखा है। श्रीधरसेन नाम के चार राजा 500 ई. से 650 ई. के बीच हुए। अत: भट्टि का समय अधिक से अधिक 650 ई. तक हो सकता है। सामान्यत: विद्वानों ने इनका समय छठी शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं सातवीं शताब्दी के आरंभ में माना है।

- **रावणवध** या **भट्टिकाव्य** — इनका *रावणवध* या *भट्टिकाव्य* 22 सर्गों में निबद्ध है। इसमें *रामायण* की कथा सरल तथा संक्षिप्त रूप से वर्णित है। मनोरञ्जन के साथ संस्कृत व्याकरण का पूर्ण ज्ञान देना इस महाकाव्य का उद्देश्य है। भट्टि ने कहा है कि व्याकरण की आँख रखने वालों के लिए यह काव्य दीपक के समान है। व्याकरण के अतिरिक्त अलंकारशास्त्र के ज्ञान का भी प्रदर्शन भट्टि ने इस महाकाव्य में किया है।

Chapter-4.indd 40 12-08-2016 2:05:31 PM

कुमारदास

कुमारदास का समय छठी शताब्दी माना जाता है। कुछ लोग इन्हें आठवीं शताब्दी का भी मानते हैं। इनका जन्मस्थान सिंहल द्वीप (श्रीलंका) है।

- **जानकीहरण** — *जानकीहरण* कुमारदास द्वारा 20 सर्गों में रचित राम की कथा पर आश्रित महाकाव्य है। कालिदास के रघुवंश का अनुकरण इन्होंने अपने महाकाव्य में किया है। राजशेखर ने इनकी प्रशंसा में कहा है—

  जानकीहरणं कर्तुं रघुवंशे स्थिते सति।
  कविः कुमारदासश्च रावणश्च यदि क्षमः।।

रघुवंश (इस नाम का महाकाव्य, रघुवंशी राजा) के रहते हुए जानकीहरण (इस नाम का महाकाव्य, सीताहरण) करने की क्षमता यदि किसी में है, तो वह कुमारदास में है या रावण में।

जानकीहरण महाकाव्य अपने शीर्षक से केवल सीताहरण से सम्बद्ध प्रतीत होता है, किन्तु इसमें राम के जन्म से लेकर अभिषेक तक की पूरी कथा है।

माघ

माघ राजस्थान के भीनमाल या श्रीमाल नगर के निवासी थे। इनके पितामह वहाँ के राजा के प्रधानमंत्री थे। इनका समय 700 ई. माना जाता है। माघ की एकमात्र रचना *शिशुपालवध* महाकाव्य है। माघ इस काव्य की रचना में भारवि और भट्टि से बहुत प्रभावित हैं। भारवि से प्रतिस्पर्धा तो उनके महाकाव्य में प्रारम्भ से अन्त तक दिखाई पड़ती है। भारवि शिव का यशोगान करते हैं, तो माघ विष्णु का। माघ अलङ्कृत काव्य रचना में भारवि से आगे बढ़ गए हैं।

- **शिशुपालवध** — *शिशुपालवध* 20 सर्गों का उत्कृष्ट महाकाव्य है, जिसमें कृष्ण द्वारा शिशुपाल के वध की कथा वर्णित है। छोटे कथानक को माघ ने महाकाव्य में विस्तृत वर्णनों से बहुत बड़ा बना दिया है। व्याकरण, राजनीति, वेद, दर्शन, संगीत आदि विविध शास्त्रों के अपने ज्ञान को माघ ने इसमें प्रदर्शित किया है। इस महाकाव्य को लिखने में माघ का ऐसा उद्देश्य प्रतीत होता है कि महाकाव्य के छोटे से छोटे लक्षण को समाविष्ट करके इसे आदर्श महाकाव्य का रूप दिया जा सके। भाषा और छन्द दोनों पर माघ का अद्भुत अधिकार है। भारवि के समान इन्होंने चित्रकाव्य का

Chapter-4.indd 41 12-08-2016 2:05:31 PM

भी प्रयोग किया है। इस महाकाव्य को पण्डितों के समाज में बहुत प्रशंसा मिली है जिसका प्रमाण यह सुभाषित है— मेघे माघे गतं वय:।

श्रीहर्ष

यद्यपि माघ के बाद अन्य अनेक कवि हुए, किन्तु श्रीहर्ष को जो ख्याति मिली, वह अन्य किसी को नहीं मिली। श्रीहर्ष विशिष्ट पण्डित-परम्परा में उत्पन्न हुए थे। इन्होंने *नैषधीयचरित* महाकाव्य के अतिरिक्त वेदान्त का एक क्लिष्ट ग्रन्थ *खण्डनखण्डखाद्य* भी लिखा था। इनकी शैली पाण्डित्य से भरी हुई है। माघ के समान श्रीहर्ष भी पाण्डित्य-प्रदर्शन करते हैं, किन्तु पदों का लालित्य भी सर्वत्र बनाए रखते हैं।

श्रीहर्ष का समय बारहवीं शताब्दी है। ये कान्यकुब्जनरेश जयचन्द्र की सभा में रहते थे। श्रीहर्ष ने अनेक ग्रन्थ लिखे जिनकी सूचना उन्होंने *नैषधीयचरित* के सर्गों के अन्त में दी है।

- **नैषधीयचरित** — *नैषधीयचरित* में निषध देश के राजा नल के जीवन का वर्णन है। नल और दमयन्ती के परस्पर प्रेम तथा विवाह की संक्षिप्त कथा को कल्पनाशक्ति के सहारे श्रीहर्ष ने 22 सर्गों में फैलाया है। उनके प्रेम में हंस तथा देवता बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान करते हैं। *नैषधीयचरित* में श्रीहर्ष ने अपने प्रौढ़ पाण्डित्य का इतना अधिक प्रदर्शन किया है कि यह शास्त्र-काव्य बन गया है। साधारण संस्कृतज्ञ इसके साथ खिलवाड़ नहीं कर सकते। विद्वानों के गर्वरूपी रोग को दूर करने के लिए यह औषध माना गया है *(नैषधं विद्वद्‌दौषधम्)।* इस महाकाव्य को भारवि और माघ के काव्यों से भी उत्कृष्ट कहा गया है—

तावद् भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदय:।
उदिते नैषधे काव्ये क्व माघ: क्व च भारवि:।।

अर्थात् भारवि की शोभा तब तक है, जब तक माघ का उदय नहीं हुआ और जब नैषध काव्य का उदय हो गया, तो कहाँ माघ और कहाँ भारवि?

भारवि, माघ और श्रीहर्ष इन तीनों के महाकाव्यों *(किरातार्जुनीय, शिशुपालवध,* और *नैषधीयचरित)* को संस्कृत विद्वान् *बृहत्त्रयी* कहते हैं। इन तीनों ने अलंकृत पद्धति का अनुसरण किया है। कालिदास के तीन काव्यों *(रघुवंश, कुमारसम्भव* और *मेघदूत)* को सरल शैली का आश्रय लेने के कारण *लघुत्रयी* कहा जाता है। इन छ: काव्यों का संस्कृत परम्परा में विशेष रूप से प्रचार है।

Chapter-4.indd 42 12-08-2016 2:05:31 PM

अन्य महाकाव्य

संस्कृत भाषा में महाकाव्य-रचना बहुत लोकप्रिय रही है। उपर्युक्त महाकाव्यों के अतिरिक्त प्राचीन काल में भी अनेक महाकाव्य लिखे गए थे और यह परम्परा आज तक चली आ रही है। यहाँ कुछ महाकाव्यों के नाम दिए जाते हैं। *हरविजय* नामक महाकाव्य कश्मीरी कवि रत्नाकर द्वारा लिखा गया, जिसका समय 850 ई. माना जाता है। इस महाकाव्य में भगवान् शिव की अन्धकासुर पर विजय का विस्तार से वर्णन है। इसमें 50 सर्ग हैं। महाकाव्य की विशालता के कारण रत्नाकर की कीर्ति बहुत फैल गई। रत्नाकर के समकालीन शिवस्वामी ने बौद्धग्रन्थ अवदानशतक की एक कथा पर आश्रित *कप्फणाभ्युदय* नामक महाकाव्य लिखा। यह 20 सर्गों का बौद्ध महाकाव्य है। कश्मीर के ही निवासी क्षेमेन्द्र ने तीन प्रसिद्ध महाकाव्यों का प्रणयन किया। ये हैं— *रामायणमञ्जरी, भारतमञ्जरी* और *बृहत्कथामञ्जरी*। ये तीनों प्रसिद्ध कथाओं पर आश्रित हैं। क्षेमेन्द्र ने 1067 ई. में अपना अन्तिम महाकाव्य *दशावतारचरित* लिखा। क्षेमेन्द्र का जीवनकाल 995 ई. से 1070 ई. तक है।

एक अन्य कश्मीरी कवि (मंख) ने *श्रीकण्ठचरित* नामक महाकाव्य 25 सर्गों में लिखा, जिसमें शिव द्वारा त्रिपुर के पराजय का वर्णन है। इनका समय बारहवीं शताब्दी ई. है। अन्य प्रदेशों के कवियों ने भी समय-समय पर महाकाव्यों की रचना की। नीलकण्ठ दीक्षित ने सत्तरहवीं शताब्दी में *शिवलीलार्णव* महाकाव्य 12 सर्गों में लिखा। रामभद्र दीक्षित का *पतञ्जलिचरित* (आठ सर्ग), वेंकटनाथ का *यादवाभ्युदय*, धनेश्वर सूरि का *शत्रुञ्जय* महाकाव्य, वाग्भट का *नेमिनिर्माणकाव्य*, वीरनन्दी का *चन्द्रप्रभचरित*, हरिश्चन्द्र का *धर्मशर्माभ्युदय* इत्यादि महाकाव्य भी प्रसिद्ध हैं। कुछ महाकाव्य विभिन्न देवताओं तथा शास्त्रीय विषयवस्तु के निरूपण के लिए भी लिखे गए हैं। हेमचन्द्र (1088-1172 ई.) का *कुमारपालचरित* 28 सर्गों का महाकाव्य है, जिसके प्रथम 20 सर्गों में व्याकरण के नियमों के अनुसार संस्कृत भाषा के रूपों का प्रयोग दिखाया गया है और अन्तिम 8 सर्गों में प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा के व्याकरण-सम्बद्ध रूपों का प्रयोग है। इसे *द्व्याश्रयकाव्य* भी कहते हैं।

आधुनिक युग में भी संस्कृत महाकाव्यों की रचना हो रही है। वर्तमान महापुरुषों तथा घटनाओं को विषय बनाकर अनेक महाकाव्य लिखे गए हैं। महापुरुषों में गुरुगोविन्द सिंह, शिवाजी, स्वामी दयानन्द, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्रबोस, जवाहरलाल नेहरु आदि पर अनेक संस्कृत महाकाव्य लिखे गए हैं। आधुनिक काल में

Chapter-4.indd 43 12-08-2016 2:05:31 PM

प्राचीन विषयों पर भी अनेक महाकाव्य लिखे गए हैं। यही नहीं, विदेशी महापुरुष भी संस्कृत महाकाव्य के विषय बने हैं। नाटक के समान महाकाव्य भी आधुनिक संस्कृत कवियों की अत्यधिक लोकप्रिय विधा है।

ध्यातव्य बिन्दु

- ♦ महाकाव्य — सर्गबन्ध रचना
- ♦ महाकाव्य का नामकरण — कवि, कथानक अथवा नायक के नाम पर आधारित।
- ♦ कालिदास के दो प्रसिद्ध महाकाव्य–

(i) कुमारसम्भव — सर्ग-आठ, रीति-वैदर्भी।
विषय : शिव-पार्वती के विवाह तथा कुमार कार्तिकेय के जन्म की कथा।

♦ कालिदास के शृंगार रस के प्रति विशिष्ट आकर्षण का द्योतक।

(ii) **रघुवंश-** सर्ग- 19, रीति-वैदर्भी।
विषय — इक्ष्वाकुवंश के विभिन्न राजाओं का विस्तृत वर्णन,
गृहस्थ जीवन की श्रेष्ठता का प्रतिपादन।
रघुवंशी राजाओं के उच्च आदर्शों का द्योतन।
सभी रसों के प्रकाशक प्रसाद गुण से परिपूर्ण।

अश्वघोष के दो महाकाव्य–

(i) बुद्धचरित— सर्ग-28, उपलब्ध सर्ग-14।
विषय — भगवान् बुद्ध के जीवन और उपदेशों का वर्णन।

(ii) सौन्दरनन्द— सर्ग-18, रीति- वैदर्भी।
विषय — नन्द और सुन्दरी के परस्पर अनुराग का शृंङ्गारपूर्ण वर्णन।
बुद्ध के सौतेले भाई नन्द की धर्मदीक्षा का वर्णन।
बौद्धधर्म के उपदेशों की रोचक एवं काव्यमय प्रस्तुति।

♦ किरातार्जुनीय
सर्ग—18
विषय— इन्द्रकील पर्वत पर दिव्य अस्त्र प्राप्त करने वाले अर्जुन और किरातवेशधारी भगवान् शंकर के युद्ध का वर्णन।

Chapter-4.indd 44 12-08-2016 2:05:31 PM

इस महाकाव्य के प्रसिद्ध नीतिवाक्य—

हितं मनोहारि च दुर्लभं वच:।

सहसा विदधीत न क्रियाम्।।

समय- छठी शताब्दी।

रावणवध (भट्टिकाव्य)

लेखक— भट्टि।

समय— छठी शताब्दी का उत्तरार्द्ध एवं सातवीं शताब्दी का आरम्भ।

विषय— रामायण की कथा का सरल एवं संक्षिप्त रूप में वर्णन।

- जानकीहरण

  लेखक— कुमारदास।

  विषय— राम की कथा पर आधारित।

  समय— छठी शताब्दी।

- शिशुपालवध

  लेखक— माघ।

  समय— 700 ई.।

  विषय— कृष्ण द्वारा शिशुपाल के वध की कथा का वर्णन।

- नैषधीयचरित

  लेखक— श्रीहर्ष।

  समय— बारहवीं शताब्दी।

  विषय— निषध देश के राजा नल एवं दमयन्ती के प्रणय का वर्णन।

- बृहत्त्रयी

  किरातार्जुनीय (भारविकृत), *शिशुपालवध* (माघकृत) एवं *नैषधीयचरित* (श्रीहर्षकृत) बृहत्त्रयी कहलाते हैं।

- हरविजय

  लेखक— रत्नाकर (कश्मीरी कवि)।

  समय— 850 ई.।

  विषय— भगवान् शिव की अन्धकासुर पर विजय का विस्तृत वर्णन।

Chapter-4.indd 45 12-08-2016 2:05:31 PM

- कप्फणाभ्युदय

  लेखक— शिवस्वामी।

  विषय—बौद्धग्रन्थ अवदानशतक की कथा पर आश्रित।
- रामायणमञ्जरी, भारतमञ्जरी और बृहत्कथामञ्जरी

  लेखक— क्षेमेन्द्र।

  विषय— प्रसिद्ध कथाओं पर आश्रित।
- दशावतारचरित

  लेखक—क्षेमेन्द्र।

  समय— 995 ई. से 1070 ई.।
- श्रीकण्ठचरित

  लेखक— मंख (कश्मीरी कवि)।

  समय—बारहवीं शताब्दी।

  विषय— शिव द्वारा त्रिपुर की पराजय का वर्णन।

  सर्ग— 25 सर्ग।
- शिवलीलार्णव

  लेखक— नीलकण्ठ दीक्षित।

  समय— सत्तरहवीं शताब्दी।

  सर्ग— बारहवीं सर्ग।
- पतञ्जलिचरित

  लेखक— रामभद्र दीक्षित।

  सर्ग— आठ।
- यादवाभ्युदय

  लेखक— वेंकटनाथ।
- शत्रुञ्जय

  लेखक— धनेश्वर सूरि।
- नेमिनिर्माणकाव्य

  लेखक— वाग्भट।

Chapter-4.indd 46 12-08-2016 2:05:31 PM

◆ चन्द्रप्रभाचरित

लेखक— वीरनन्दी।

◆ धर्मशर्माभ्युदय

लेखक— हरिश्चन्द्र।

◆ कुमारपालचरित (द्व्याश्रयकाव्य)

लेखक— हेमचन्द्र।

सर्ग—28।

◆ द्व्याश्रयकाव्य

ऐसा काव्य जो दो कथानकों पर आधारित हो।

◆ वर्तमान संस्कृत महाकाव्य

अनेक महापुरुषों, यथा गुरुगोविन्द सिंह, शिवाजी, स्वामी दयानन्द, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, सुभाषचन्द्र बोस आदि पर लिखे गए।

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. सर्गबन्ध रचना किसे कहते हैं?

प्र. 2. महाकाव्य में किन गुणों वाला व्यक्ति नायक होता है?

प्र. 3. महाकाव्य में कौन-कौन से रस प्रधान होते हैं?

प्र. 4. महाकाव्य के मंगलाचरण में किन बातों का समावेश होता है?

प्र. 5. महाकाव्य के नामकरण का आधार क्या होता है?

प्र. 6. संस्कृत महाकाव्यों के विकासक्रम में कौन-से कवियों के नाम मुख्य रूप से लिए जाते हैं?

प्र. 7. संस्कृत कवियों में कविकुलगुरु कौन माना जाता है?

प्र. 8. कालिदास द्वारा लिखे हुए महाकाव्यों के नाम लिखिए।

प्र. 9. शिव-पार्वती के विवाह तथा कार्तिकेय के जन्म की कथा किस महाकाव्य में आती है?

प्र. 10. अश्वघोष के दो महाकाव्यों के नाम लिखिए।

प्र. 11. अश्वघोष किस शताब्दी में हुए थे?

प्र. 12. सौन्दरनन्द महाकाव्य का वर्ण्य-विषय क्या है?

प्र. 13. अश्वघोष के दोनों महाकाव्य किस रीति में लिखे गए हैं?

प्र. 14. भारवि का समय क्या माना जाता है?

प्र. 15. भारवि की रचना की कौन-सी विशेषता प्रसिद्ध है?

Chapter-4.indd 47 12-08-2016 2:05:31 PM

प्र. 16. भारवि की रचना की किसी एक लोकोक्ति का उल्लेख कीजिए।

प्र. 17. *किरातार्जुनीय* काव्य का कथानक संक्षेप में लिखिए।

प्र. 18. भट्टिकाव्य किसकी रचना है?

प्र. 19. भट्टिकाव्य का दूसरा नाम क्या है?

प्र. 20. *जानकीहरण* की कथा किस ग्रन्थ पर आधारित है?

प्र. 21. माघ का जन्मस्थान कहाँ माना जाता है?

प्र. 22. माघ ने *शिशुपालवध* काव्य में किन शास्त्रों के विषय में अपना ज्ञान प्रकाशित किया है?

प्र. 23. माघ के बाद किस महाकवि को सर्वाधिक ख्याति मिली?

प्र. 24. नल और दमयन्ती की कथा किस महाकाव्य में आती है?

प्र. 25. 'कान्यकुब्जनरेश' यह विशेषण किसके लिए प्रयुक्त हुआ है?

प्र. 26. 'नैषधं विद्वदौषधम्' इस सूक्ति का क्या तात्पर्य हैं?

प्र. 27. बृहत्त्रयी में किन कवियों की रचनाएँ आती है?

प्र. 28. लघुत्रयी में कौन-कौन से काव्य आते हैं?

प्र. 29. *हरविजय* महाकाव्य किस कवि की कृति है?

प्र. 30. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(क) लौकिक संस्कृत भाषा में काव्य रचना का आरम्भ महर्षि .... से हुआ।

(ख) .... को नायक बनाकर वाल्मीकि ने आदिकाव्य प्रस्तुत किया।

(ग) महाकाव्य के उद्देश्य के रूप में धर्म .... काम और .... में से कोई एक फल होता है।

(घ) महाकाव्य में सर्गों की संख्या .... से अधिक होनी चाहिए।

(ङ) बुद्ध के जीवन और उपदेशों का वर्णन.. महाकाव्य में मिलता है।

(च) बुद्धचरित के वर्णन .... से समता रखते हैं।

(छ) .... भारवि की एकमात्र रचना है।

(ज) भारवि ने कथानक से अधिक .... को महत्त्व दिया।

(झ) कुमारदास का समय .... शताब्दी माना जाता है।

(ट) महाकवि श्रीहर्ष का समय .... शताब्दी है।

Chapter-4.indd 48 12-08-2016 2:05:31 PM

पञ्चम अध्याय

ऐतिहासिक महाकाव्य

भारत में ऐतिहासिक विषयों को लेकर काव्य लिखने की एक प्राचीन परम्परा है। वैदिक ऋषियों की सूची, *महाभारत* एवं *पुराण* आदि में दी गई वंशावली अथवा वंशवृक्ष इतिहास दृष्टि के साक्षात् प्रमाण हैं। विभिन्न प्रकार के अभिलेख-शिलालेख, मन्दिरों की दीवारों, गुफाओं अथवा ताम्रपत्रों पर अंकित विभिन्न वर्णन आदि भारतीयों के इसी ऐतिहासिक चिन्तन को अभिव्यक्त करते हैं। *रामायण, महाभारत* एवं पुराणों की परम्परा का विकास शनैः-शनैः *ऐतिहासिक महाकाव्य* परम्परा में हुआ। *राजतरंगिणी* इसी परम्परा का एक प्रमुख ग्रन्थ है। यहाँ यह स्पष्ट होना अनिवार्य है कि हमारी इतिहास की कल्पना कुछ भिन्न प्रकार की थी।

कुछ पाश्चात्त्य विद्वानों ने भारतीयों के विषय में यह दुष्प्रचार किया कि उनमें ऐतिहासिक चेतना का अभाव था, किन्तु *राजतरंगिणी* आदि अनेक काव्यग्रन्थ इस आक्षेप का पर्याप्त रूप में निराकरण करते हैं। प्राचीन भारतीय परम्परा में घटनाओं का सामान्यतः विवरण तो लोग देते थे, किन्तु उनके साथ तिथियों को अंकित नहीं करते थे। इस अर्थ में ही *महाभारत* को इतिहास-ग्रन्थ कहा गया है। वैदिक साहित्य के अनुशीलन से पता चलता है कि इतिहास लिखने वालों का एक अलग वर्ग था। इतिहास के अन्तर्गत घटनाओं का सच्चा विवरण दिया जाता था।

राजशेखर के अनुसार इतिहास दो प्रकार का होता है— परिक्रिया और पुराकल्प। परिक्रिया उस इतिहास को कहते हैं, जिसका नायक एक व्यक्ति होता है अर्थात् किसी एक राजा के चरित्र का वर्णन करना परिक्रिया है। *रामायण, नवसाहसांकचरित, विक्रमांकदेवचरित* आदि इसी प्रकार के ग्रन्थ हैं। दूसरी ओर पुराकल्प वह इतिहास है जिसमें अनेक नायकों का वर्णन होता है। *महाभारत, राजतरंगिणी* आदि इसी प्रकार के इतिहास-ग्रन्थ हैं।

यदि हम संस्कृत के अभिलेखों का अध्ययन करें तो वहाँ पर्याप्त ऐतिहासिक सूचनाएँ काव्य के रूप में मिलेंगी। यहाँ तक कि उनमें तिथियों का भी निर्देश हुआ है। यह सही है कि संसार की क्षणिकता की दार्शनिक भावना से अभिभूत होने के कारण संस्कृत के विद्वानों ने लौकिक व्यक्तियों तथा घटनाओं को बहुत महत्त्व न देकर राम, कृष्ण, शिव आदि देवताओं के विषय में ही महाकाव्य लिखे। फिर भी राजाओं की प्रशस्ति का गान करने वाले कवियों

का भी यहाँ अभाव नहीं था। लेकिन आज ऐसी अनेक कृतियाँ नष्ट हो चुकी हैं जिनमें ऐतिहासिक तथ्यों का भण्डार था। लोकोत्तर चरित्र का वर्णन करने वाले महाकाव्यों को यहाँ अधिक सम्मान मिला, जबकि लौकिक पुरुषों से सम्बद्ध काव्य सम्मान नहीं पा सके। *विक्रमांकदेवचरित* अज्ञात कोने में पड़ा रहा, जबकि *नैषधीयचरित* टीकाओं से विभूषित होता रहा। एक ही लेखक बाणभट्ट की *कादम्बरी* पण्डितों के बीच आदर पाती रही, जबकि उनका *हर्षचरित* उतना आदर नहीं पा सका। फिर भी कवियों ने अपने आश्रयदाताओं की प्रशस्तियाँ गद्य में या महाकाव्यों के रूप में लिखीं। गुप्तकाल के अभिलेखों में इन प्रशस्तियों का उत्कर्ष दिखाई देता है। यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि इतिहास पर काव्य का ऐसा गहरा रंग चढ़ा है कि शुद्ध इतिहास को निकालना बहुत कठिन हो गया।

प्रारम्भिक ग्रन्थ

संस्कृत साहित्य में ऐतिहासिक रचनाएँ भी काव्य के रूप में ही मिलती हैं। कवियों ने अपनी रचनाओं द्वारा अपने आश्रयदाताओं को अमर कर दिया। बाणभट्ट (630 ई.) ने अपने आश्रयदाता हर्षवर्धन के प्रारम्भिक जीवन को आधार बनाकर *हर्षचरित* नामक गद्य-काव्य लिखा। वस्तुत: इस रचना में बाण ने अपना, हर्षवर्धन का तथा उसके पूर्वजों का भी काव्यात्मक वर्णन किया है। इसमें हर्ष की राज्यप्राप्ति के समय तक की घटनाओं का वर्णन है। वाक्पतिराज ने प्राकृत काव्य *(गउडवहो)* में कन्नौज के राजा *यशोवर्मन* की विजय का वर्णन किया है। इनका समय 750 ई. है। कश्मीर के ललितादित्य ने *यशोवर्मन* को संग्राम में हराया था। इस काव्य में ग्रामीण जीवन के सजीव चित्र मिलते हैं। पद्मगुप्त का *नवसाहसांकचरित* (1005 ई.) एक प्रकार से संस्कृत का पहला ऐतिहासिक महाकाव्य है, जिसमें 18 सर्ग हैं। इसमें मालव-नरेश सिन्धुराज का इतिहास वर्णित है। सिन्धुराज भोज के पिता थे। इस महाकाव्य में शशिप्रभा के साथ उनके विवाह का वर्णन है। पद्मगुप्त पहले राजा मुञ्ज के सभाकवि थे। मुञ्ज की मृत्यु के बाद सिन्धुराज ने पद्मगुप्त का आदर किया। पद्मगुप्त पर कालिदास की रसमयी पद्धति का बहुत प्रभाव है, इसीलिए इन्हें परिमल-कालिदास भी कहा गया है।

विक्रमांकदेवचरित

इस काव्य के लेखक बिल्हण कश्मीरी थे तथा शिक्षित होने के बाद भ्रमण हेतु कश्मीर छोड़कर निकल पड़े। मथुरा, कन्नौज, प्रयाग, काशी इत्यादि स्थानों से होते हुए वे अन्त में कल्याण के चालुक्य-नरेश विक्रमादित्य (षष्ठ) की राजसभा में पहुँचे। बिल्हण का वहाँ बहुत सम्मान हुआ। अपने संरक्षक की प्रशंसा में बिल्हण ने वहीं 18 सर्गों का महाकाव्य *विक्रमांकदेवचरित* लिखा। इसका रचनाकाल 1088 ई. है। मूलत: यह ऐतिहासिक ग्रन्थ

Chapter-5.indd 50 24-08-2016 9:52:37 AM

है, जिसे महाकाव्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है। राजा विक्रमादित्य के पूर्वजों का वर्णन करते हुए इन्होंने इसके प्रथम सात सर्गों में ऐतिहासिक तथ्य दिए हैं। इसमें आठवें सर्ग से सत्तरहवें सर्ग तक विक्रमादित्य (षष्ठ) का काव्यात्मक वर्णन है। इसमें मुख्यत: नायक और नायिका का प्रणय वर्णित है। विवाह, जलक्रीड़ा, मृगया आदि के वर्णन में बिल्हण ने कई सर्ग केवल महाकाव्य-धर्म का निर्वाह करने के लिए लगाए हैं। बिल्हण इतिहासकार के रूप में निष्पक्ष नहीं है क्योंकि वे राष्ट्रकूटों पर तैलप (873-97 ई.) की विजय का तो वर्णन करते हैं, किन्तु मालव-नरेश द्वारा उसकी पराजय का नहीं। बिल्हण इस महाकाव्य के दो सर्गों में अपने संरक्षक के पारिवारिक कलह का भी वर्णन करते हैं। अंतिम सर्ग में उन्होंने अपने कुटुम्ब का वर्णन करते हुए अपनी भारत-यात्रा का भी वृत्तान्त लिखा है।

काव्य की दृष्टि से *विक्रमांकदेवचरित* बहुत सफल है। इसमें प्रवाह, रोचकता और सरलता सभी गुण हैं। यह प्रसादपूर्ण वैदर्भी शैली में लिखा गया है। भाषा सरल और स्पष्ट है। लंबे समासों का प्रयोग इसमें नहीं मिलता। कालिदास की काव्यशैली बिल्हण पर छायी हुई है। बिल्हण ने *चौरपञ्चाशिका* नामक गीतिकाव्य भी लिखा था। अपनी जन्मभूमि कश्मीर पर कवि को बहुत गर्व है। वे कहते हैं कि केसर तथा कविता कश्मीर को छोड़कर अन्यत्र नहीं होती। कस्तूरी की गंध से युक्त पश्मीने का चादर तथा वितस्ता (झेलम) में चलने वाली नौकाएँ कश्मीर को स्वर्ग बना देती हैं। बिल्हण में कवित्वशक्ति एवं पाण्डित्य के साथ-साथ ऐतिहासिक चेतना भी है।

राजतरंगिणी

राजतरंगिणी निश्चित रूप से संस्कृत साहित्य का श्रेष्ठ ऐतिहासिक ग्रंथ है, जिस पर काव्य का रंग बहुत गहरा नहीं है। कल्हण और उनके इस ग्रन्थ पर संस्कृत साहित्य को गर्व है। कल्हण के पिता चम्पक कश्मीर के राजा हर्ष के सच्चे अनुयायी थे। हर्ष की हत्या हो जाने पर चम्पक ने राजनीति से संन्यास ले लिया और इसलिए कल्हण भी राजनीति से वञ्चित रह गए। हर्ष के संगीत-शिक्षक कल्हण के चाचा कनक थे। राजा उनसे पूर्णत: प्रभावित थे। उन्हीं के कारण परिहासपुर में बुद्धप्रतिमा को बचाया जा सका था। कल्हण शिव के भक्त होते हुए भी बौद्धमत के प्रशंसक थे। उन्होंने संस्कृत साहित्य का गहन अध्ययन किया था। उन्होंने *राजतरंगिणी* की रचना में कश्मीर के समस्त ऐतिहासिक साधनों का प्रयोग किया था। उन्होंने इस काव्य को 1148 ई. में लिखना आरंभ करके तीन वर्षों में पूरा किया। कल्हण कहते हैं कि उन्होंने प्राचीन राजाओं के कथासंग्रह, नीलमतपुराण, विभिन्न शिलालेख, प्रशस्ति-पत्र, प्राचीन मुद्रा आदि का उपयोग करके इस इतिहास-ग्रन्थ को प्रामाणिक बनाया है। उन्होंने देवालयों, प्राचीन भवनों, स्मारकों और शासन-पत्रों का भी अवलोकन किया था।

Chapter-5.indd 51 24-08-2016 9:52:37 AM

राजतरंगिणी में आठ तरंग हैं। इसमें आठवाँ तरंग ग्रन्थ का प्राय: अर्धभाग है। इसमें समकालिक तथा निकट अतीत का इतिहास है। कवि के साक्षात् अनुभव पर आश्रित होने के कारण इस तरंग की बातें विशेषत: प्रामाणिक हैं। आरम्भिक तरंगों में पुराणों का आधार लिया गया है, इसलिए कल्पना का समावेश वहाँ अधिक है। जैसे-जैसे कवि सुदूर अतीत से निकट अतीत की ओर अग्रसर होता गया, वैसे-वैसे उसके वर्णनों में प्रामाणिकता बढ़ती गई।

राजतरंगिणी का आरम्भ किसी गोनन्द नामक राजा के वर्णन से होता है, किन्तु प्रथम तीन तरंगों में काल या तिथि का उल्लेख नहीं है। इसमें पहली तिथि 813 ई. के आसपास है और यहाँ से आरम्भ करके 1150 ई. तक की घटनाओं का प्रामाणिक, पूर्ण और वैज्ञानिक रीति से वर्णन किया गया है। नैतिकता का प्रचार करना कल्हण का मुख्य उद्देश्य लगता है, इसलिए कई राजाओं और मन्त्रियों के अनैतिक कार्यों का वर्णन इन्होंने खुलकर किया है। कल्हण ने कश्मीर में धार्मिक सहिष्णुता दिखाई है, किन्तु कुछ राजाओं के धर्म-विरोधी कार्यों को भी इन्होंने प्रकाशित किया है। कल्हण के इतिहास पर भारतीय जीवन-दर्शन, युगविभाजन, कर्म-सिद्धान्त, भाग्यवाद, तन्त्र-मन्त्र आदि का स्पष्ट प्रभाव है। इन्होंने कश्मीरी नागरिकों की कटु आलोचना की है। लोभी पुरोहितों, अनुशासनहीन सैनिकों तथा दुष्ट कर्मचारियों की इन्होंने घोर निन्दा की है। रानी दिद्दा की महत्त्वाकांक्षा का इन्होंने विस्तार से वर्णन किया है।

राजतरंगिणी एक सच्चे इतिहासकार द्वारा काव्यात्मक शैली में लिखा गया ग्रन्थ है। अलंकारों का प्रयोग बहुत स्वाभाविक रूप से इसमें किया गया है। प्राय: पूरा ग्रन्थ अनुष्टुप् छन्द में लिखा गया है। कहीं-कहीं छन्द बदले गए हैं। कल्हण मूलत: अपने को कवि बतलाते हैं। कुल मिलाकर यह महाकाव्य संस्कृत का गौरव-ग्रन्थ है।

अन्य ऐतिहासिक महाकाव्य

कल्हण की *राजतरंगिणी* को आगे बढ़ाने का कार्य विभिन्न कालों में जोनराज (1450 ई.), श्रीवर (1486 ई.) तथा शुक (1586 ई.) ने किया। फलत: अपने-अपने समय तक का इतिहास इन कवियों ने प्रस्तुत किया। अकबर को *राजतरंगिणी* से बड़ा प्रेम था, इसलिए इसका अनुवाद उसने फारसी में कराया। फारसी में इसके तीन अनुवाद मिलते हैं।

संस्कृत में ऐतिहासिक काव्य परंपरा आगे भी चली। जल्हण ने *सोमपालविलास* में सुस्सल द्वारा विजित राजपुरी के राजा का विवरण लिखा। हेमचन्द्र (1088-1172 ई.) ने अनहिलवाड़ के चालुक्य-नरेश कुमारपाल से सम्बद्ध *कुमारपालचरित* लिखा। इसमें जैनमत की महिमा का वर्णन अधिक तथा इतिहास कम है। तेरहवीं शताब्दी के कवि सोमेश्वर ने *कीर्तिकौमुदी* नामक महाकाव्य में गुजरात के राजा वस्तुपाल का वर्णन किया है। राजा बीसलदेव के सभापण्डित अरिसिंह ने 11 सर्गों का *सुकृत संकीर्तन* नामक महाकाव्य लिखा। इसमें वस्तुपाल के धार्मिक

Chapter-5.indd 52 24-08-2016 9:52:37 AM

कृत्यों का वर्णन है। विजयनगर के राजपरिवार की वधू गंगादेवी ने 1371 ई. के आसपास अपने पति (कम्पण) की दक्षिण-विजय पर आश्रित आठ सर्गों का महाकाव्य *मधुराविजय* लिखा। नयचन्द्रसूरि ने *हम्मीर-महाकाव्य* 14 सर्गों में लिखा, जिसमें रणथम्भौर के चौहान नरेश हम्मीर का वर्णन किया गया है। जयानक ने *पृथ्वीराजविजय* महाकाव्य (1191-93 ई.) लिखा, जो अपूर्ण रूप में केवल 12 सर्गों में प्राप्त हुआ है। आधुनिक काल में डॉ. काशीनाथ मिश्र ने *राजतरंगिणी* के ढाँचे पर मिथिला के कर्णाटवंशीय राजाओं का वर्णन करते हुए आठ तरंगों में **कर्णाटराजतरंगिणी** लिखी। इस प्रकार कवियों ने किसी राजा या उसके कार्यों से प्रसन्न होकर ऐतिहासिक महाकाव्य लिखे हैं। *शिवराज्योदय, छत्रपतिचरित, गान्धिचरित, विवेकानन्दचरित, गुरुगोविन्दसिंहचरित* आदि बीसवीं शताब्दी में लिखे गए ऐतिहासिक महाकाव्य हैं।

ध्यातव्य बिन्दु

- **ऐतिहासिक महाकाव्य** — भारतीय ऐतिहासिक विषयों को लेकर लिखे गए काव्य।
- **राजशेखर के अनुसार इतिहास के दो भेद** — (i) परिक्रिया और (ii) पुराकल्प
  - (i) **परिक्रिया** — एक नायक के वर्णन वाला इतिहास। यथा — *रामायण, नवसाहसांकचरित, विक्रमांकदेवचरित* आदि।
  - (ii) **पुराकल्प** — अनेक नायकों के वर्णन वाला इतिहास। यथा — *महाभारत, राजतरंगिणी* आदि।
- **हर्षचरित**
  लेखक — बाणभट्ट।
  विषय — राजा हर्षवर्धन का वर्णन।
- **गउडवहो (प्राकृतकाव्य)**
  लेखक — वाक्पतिराज।
  विषय — कन्नौज के यशोवर्मन की विजय का वर्णन।
- **नवसाहसांकचरित**
  लेखक — पद्मगुप्त।
  विषय — मालव-नरेश सिन्धुराज का इतिहास वर्णन।
- **विक्रमांकदेवचरित**
  लेखक — बिल्हण।
  विषय — चालुक्य-नरेश विक्रमादित्य (षष्ठ) की प्रशंसा का वर्णन।
  सर्ग — 18
- **राजतरंगिणी**
  लेखक — कल्हण।

Chapter-5.indd 53 24-08-2016 9:52:37 AM

विषय — प्राचीन गोनन्द राजा से लेकर 1150 ई. तक के राजाओं से सम्बन्धित घटनाओं का वर्णन।

तरंग — आठ

छन्द — प्राय: अनुष्टुप्।

- **कुमारपालचरित**

  लेखक — हेमचन्द्र। समय — 1088–1172 ई.।

  विषय — अनहिलवाड़ के चालुक्य-नरेश कुमारपाल का वर्णन।

- **कीर्तिकौमुदी**

  लेखक — सोमेश्वर।

  विषय — गुजरात के राजा वस्तुपाल का वर्णन।

  समय — तेरहवीं शताब्दी।

- **सुकृत-संकीर्तन**

  लेखक — राजा वीसलदेव के सभापण्डित अरिसिंह।

  विषय — वस्तुपाल के धार्मिक कृत्यों का वर्णन।

  सर्ग — 11

- **मधुराविजय**

  लेखिका — विजयनगर के राजपरिवार की वधू गंगादेवी।

  विषय — कम्पण की दक्षिण विजय का वर्णन।

  समय — 1371 ई. के आसपास।

  सर्ग — 8

- **हम्मीर-महाकाव्य**

  लेखक — नयचन्द्रसूरि।

  विषय — रणथम्भौर के चौहान-नरेश हम्मीर का वर्णन।

  सर्ग — 14

- **पृथ्वीराजविजय**

  लेखक — जयानक

  समय — 1191–93 ई.

  सर्ग — अपूर्ण रूप में केवल 12 सर्गों में प्राप्त।

- **कर्णाटराजतरंगिणी**

  लेखक — डॉ. काशीनाथ मिश्र (आधुनिक काल)

  विषय — 'राजतरंगिणी' के ढाँचे पर मिथिला के कर्णाटवंशीय राजाओं का वर्णन।

  तरंग — आठ

Chapter-5.indd 54 24-08-2016 9:52:37 AM

षष्ठ अध्याय

काव्य की अन्य विधाएँ

संस्कृत साहित्य के अंतर्गत बहुत-सी ऐसी पद्य-रचनाएँ हैं, जिन्हें महाकाव्य नहीं कहा जाता, फिर भी काव्य की सामान्य परिभाषा में ये रचनाएँ आती हैं। इन्हें खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, मुक्तक, स्तोत्रकाव्य इत्यादि कहा जाता है। इस अध्याय में महाकाव्य से भिन्न रूप के पद्य-काव्य की विधाओं का क्रमश: विवेचन किया जा रहा है।

खण्डकाव्य

लघु कथानक पर आश्रित काव्य को खण्डकाव्य कहा जाता है। इसे गीतिकाव्य भी कहते हैं, यदि कोमल भावों को कवि अपनी अनुभूति और कल्पना से पूर्ण करके संगीतमयी भाषा में प्रकट करे। संस्कृत भाषा में *ऋतुसंहार* तथा *मेघदूत* उत्कृष्ट खण्डकाव्य हैं।

ऋतुसंहार

यह कालिदास की रचना है। इसमें छ: सर्गों में ग्रीष्म आदि ऋतुओं का काव्यमय वर्णन है। इन ऋतुओं के वर्णन में कालिदास ने शृङ्गार भावना को प्रमुखता दी है। इसलिए सर्वत्र नायक-नायिका के संवाद के रूप में ऋतुओं को उपस्थित किया है। ऋतु परिवर्तन से जहाँ बाह्य प्रकृति में नवीनता आती है, वहाँ युवक-युवतियों में विविध प्रणय-क्रीड़ाओं तथा शृङ्गार की चेष्टाओं का उदय दिखाया गया है। वसन्त का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

द्रुमा: सपुष्पा: सलिलं सपद्मं
स्त्रिय: सकामा: पवन: सुगन्धि:।
सुखा: प्रदोषा दिवसाश्च रम्या:
सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते।।

प्रिये! जिधर देखो आनन्द ही आनन्द है। वसन्त के आते ही वृक्ष फलों से लद गए हैं। जल में कमल खिल गए हैं। स्त्रियाँ प्रियों से मिलने के लिए उत्सुक हो गई हैं। पवन सुगन्धपूर्ण हो गया है। संध्या सुहावनी हो गई है। दिन आकर्षक लगते हैं। सचमुच वसन्त में सब कुछ अधिक सुन्दर हो गया है।

ऋतुसंहार कालिदास की युवावस्था की रचना कही जाती है। उनके उत्कृष्ट काव्य-गुणों के अंकुर इसमें दिखाई पड़ते हैं। रूपक और उपमा जैसे अलंकारों का प्रयोग एक तरुण कवि के रूप में कालिदास ने यहाँ किया है।

मेघदूत

महाकवि कालिदास की यह रचना यद्यपि केवल 120 श्लोकों की है, तथापि इसने इन्हें अपूर्व ख्याति दी है। *मेघदूत* प्रबन्धात्मक खण्डकाव्य है। इसमें एक ऐसे यक्ष की विरह-व्यथा का वर्णन है, जो एक वर्ष के लिए अपनी प्रिय पत्नी से दूर कर दिया जाता है। उसकी पत्नी हिमालय में स्थित अलकापुरी में यक्षों की नगरी में रहती है। यक्ष स्वयं (मध्य भारत में स्थित) रामगिरि में प्रवास कर रहा है। वर्षाकाल के आरम्भ में वह मेघ को दूत बनाकर अपना सन्देश प्रियतमा के पास भेजता है।

मेघदूत में दो भाग हैं— *पूर्वमेघ* और *उत्तरमेघ*। *पूर्वमेघ* में रामगिरि से अलकापुरी तक मेघ के मार्ग का रोचक वर्णन है। भारतवर्ष के प्राकृतिक सौंदर्य का सुन्दर चित्र कालिदास ने इसमें खींचा है। उज्जयिनी का वर्णन अपेक्षाकृत विस्तार से किया गया है। *उत्तरमेघ* में अलकापुरी के वर्णन के प्रसंग में यक्ष के भवन तथा उसकी विरहिणी प्रियतमा का चित्र अंकित किया गया है। उसे मार्मिक संदेश भी दिया गया है। यक्ष मेघ को एक चेतन संदेशवाहक मानता हुआ भी उसके स्वाभाविक गुणों से अवगत है। इसलिए वह कहता है— तुमसे प्रार्थना है कि जब तुम मेरी प्रिया के निवास-स्थान पर पहुँचो, तो बिजली को जोर से चमकने न देना। मेरी पत्नी कहीं स्वप्न देख रही होगी या मेरा ध्यान कर रही होगी, तो तुम्हारा गर्जन सुनकर जाग जाएगी।

मेघदूत में विरह और प्रणय का अद्भुत चित्र खींचा गया है। पूरे काव्य में मन्दाक्रान्ता छन्द का प्रयोग हुआ है। कालिदास ने इसमें आभ्यन्तर और बाह्य दोनों प्रकृतियों का सुरम्य समन्वय किया है। *मेघदूत* के आधार पर संस्कृत में दूत-काव्यों की परम्परा चल पड़ी। विभिन्न कवियों ने विभिन्न शताब्दियों में अनेक संदेश-काव्य लिखे, जैसे— जम्बू कवि का *चन्द्रदूत*, धोयी कवि का *पवनदूत*, वेंकटनाथ, रूपगोस्वामी, वामनभट्ट बाण के पृथक्-पृथक *हंसदूत* इत्यादि। शताधिक दूतकाव्य *मेघदूत* के अनुकरण पर लिखे गए हैं।

गीतिकाव्य

भावानामात्मनिष्ठानां कल्पना वलितं लघु।
स्फुरणं गेयरूपेण गीतिकाव्यं निगद्यते।।

Chapter-6.indd 56 12-08-2016 2:08:16 PM

हृदय में स्थित भावों और कल्पनाओं को गेय रूप में प्रकट करने वाले काव्य को गीतिकाव्य कहा जाता है।

संस्कृत में गीतिकाव्यों की समृद्ध परंपरा है। *ऋग्वेद* में स्तुतिपरक मन्त्रों के माध्यम से सर्वप्रथम गीतियाँ लिखी गई थीं, जिनमें ऋषियों ने अपने कोमल भावों को प्रकट किया था। *ऋग्वेद* के अन्य सूक्तों में भी हमें सुख और दु:ख को प्रकट करने वाले गीत मिलते हैं, जिनमें हिरण्यगर्भ आदि ऋषियों ने व्यक्तिगत अनुभवों को निश्छल भाव से प्रकट किया है। गीतिकाव्य गीतों को लोग अवकाश के समय में या विशिष्ट अवसरों पर गाते हैं। इनमें भक्ति या शृङ्गार से सम्बद्ध गीत होते हैं। इनकी रचना ऐसे छन्दों में होती है, जिन्हें सरलता से गाया जा सके। सभी लोग इन गीतों को सुनकर भावविभोर हो उठते हैं। गीतिकाव्य का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसमें शृंगार और भक्ति से सम्बद्ध प्रबन्धात्मक और मुक्तक दोनों प्रकार के काव्य आते हैं। सभी स्तोत्रकाव्य गेय होने से गीतिकाव्य की श्रेणी में आते हैं। मुक्तककाव्यों में गेयता पायी जाने के कारण उन्हें भी विद्वानों ने गीतिकाव्य की श्रेणी में रखा है।

गीतगोविन्द

यह जयदेव रचित एक अत्यन्त लोकप्रिय गीतिकाव्य है। जयदेव, बंगाल के राजा लक्ष्मणसेन की राजसभा में रहते थे। ये कृष्णभक्त कवि थे। इस काव्य में राधा-कृष्ण के प्रेम का वर्णन है। इसमें 12 सर्ग हैं, जिनमें राधा-कृष्ण की प्रेम-लीला की झाँकियाँ गीतों के द्वारा प्रकट की गई हैं। इसके प्रत्येक अक्षर में संगीत है। यह मधुर, कोमल-कान्त पदावली का है। उदाहरण के लिए—

ललितलवङ्गलता-परिशीलन-कोमलमलयसमीरे।
मधुकरनिकरकरम्बित-कोकिल-कूजितकुञ्जकुटीरे।।

यहाँ लम्बा समास होने पर भी शैली में मनोरमता और प्रवाह विद्यमान है।

इसके प्रत्येक गीत के राग और ताल का निरूपण किया गया है। पूर्वी भारत में इसकी गान यात्रा (उत्सव-विशेष) आदि विविध अवसरों पर किया जाता है। संस्कृत के गीतिकाव्यों में यह श्रेष्ठ है।

चौरपञ्चाशिका

यह 50 श्लोकों का गीतिकाव्य है, जिसमें किसी राजकुमारी से कवि के गुप्त प्रेम का वर्णन है। इस प्रेम-प्रसंग का पता जब राजा को चलता है, तब वह कवि को प्राणदण्ड का आदेश

Chapter-6.indd 57 12-08-2016 2:08:16 PM

देता है। जब कवि दण्ड के लिए ले जाया जा रहा था, तब उसने राजकुमारी के साथ बिताए सुख की स्मृति में 50 श्लोक पढ़े। इन्हें सुनकर राजा अभिभूत हो गया और उसने कवि को राजकुमारी से विवाह करने की अनुमति दे दी। इस काव्य के विषय में उपर्युक्त कथा प्रचलित है। कहा जाता है कि कवि का नाम चौर था, जैसा कि शीर्षक से स्पष्ट है। कतिपय विद्वानों के मतानुसार इसके रचयिता कवि बिल्हण थे। इस काव्य के सभी श्लोक वसन्ततिलका छन्द में हैं तथा 'अद्यापि' से इन श्लोकों का आरम्भ होता है, जैसे—

अद्यापि तां भुजलतार्पितकण्ठपाशां
वक्षःस्थलं मम पिधाय पयोधराभ्याम्।
ईषन्निमीलित-सलीलविलोचनान्तं,
पश्यामि मुग्धवदनां वदनं पिबन्तीम्।।

मुक्तककाव्य

मुक्तककाव्य भी गीतिकाव्य की श्रेणी में आते हैं। इनका प्रत्येक श्लोक स्वतन्त्र होता है, प्रबन्धात्मक नहीं। प्राचीन काव्यशास्त्री मुक्तकों को उत्कृष्ट काव्य नहीं मानते थे, किन्तु आनन्दवर्धन ने मुक्तकों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। मुक्तकों में प्रत्येक श्लोक चमत्कारपूर्ण होता है। विभिन्न युगों में कई प्रकार के मुक्तक काव्य संस्कृत भाषा में लिखे गए।

भर्तृहरि का शतकत्रय

भर्तृहरि का समय सातवीं शताब्दी ई. माना जाता है। इन्होंने अपने अनुभवों के आधार पर प्रायः सौ-सौ श्लोकों के तीन संग्रह बनाए— *शृंङ्गारशतक*, *नीतिशतक* और *वैराग्यशतक*। इनमें प्रत्येक श्लोक अपने में परिपूर्ण है। *शृंङ्गारशतक* में काम और विलास की नाना स्थितियों, स्त्रियों के हाव-भाव, कटाक्ष आदि का सुन्दर वर्णन किया गया है। काम के महत्त्व की घोषणा करते हुए कवि कहता है कि नारी का प्रत्येक कर्म मोहक होता है। बहुत कम लोग काम के दर्प को चूर करने में समर्थ होते हैं— **कन्दर्पदर्पदलने विरला मनुष्याः।**

नीतिशतक में कवि ने विद्या, वीरता, सज्जनता आदि उदार वृत्तियों का वर्णन करते हुए मूर्खता, लोभ, धन, दुर्जनता आदि की निन्दा भी की है। इसके श्लोक जन-समाज में बहुत प्रचलित हैं। इसमें प्रचुर स्वाभाविकता है।

वैराग्यशतक में कवि ने संसार की असारता और वैराग्य की महत्ता का प्रतिपादन किया है। इसमें काव्य-प्रतिभा और दार्शनिकता का अपूर्व समन्वय है। भर्तृहरि संस्कृत में मुक्तक गीतिकाव्य की परम्परा के प्रवर्तक कवि हैं। भाषा की सरलता के कारण इनके

Chapter-6.indd 58 12-08-2016 2:08:16 PM

भाव पाठकों पर सीधा प्रभाव डालते हैं। अनेक छन्दों में विषय को रोचक बनाकर अनुरूप उदाहरण देकर सूक्तियों से भर्तृहरि श्रोता को तत्काल आकृष्ट कर लेते हैं।

अमरुशतक

संस्कृत गीतिकाव्यों में अमरुशतक अत्यन्त प्रसिद्ध रचना है। यद्यपि यह शतक है, किन्तु इसमें प्राय: 150 श्लोक मिलते हैं। निश्चय ही अमरु कवि के श्लोकों में दूसरे कवियों ने भी अपने श्लोक मिलाए होंगे। *अमरुशतक* का सर्वप्रथम उल्लेख आनन्दवर्धन (850 ई.) ने किया। वे कहते हैं कि अमरु का प्रत्येक श्लोक भावों की उत्कृष्टता के कारण अपने में ही पूर्ण काव्य है। यह शृंङ्गारपूर्ण श्लोकों का संग्रह है। शृंङ्गार के सभी पक्ष इसमें चित्रित हैं। कहीं मानवती नायिका के अनुराग का चित्र है, तो कहीं प्रियतम के लौटने पर उसके क्रोध के दूर होने का वर्णन है। समासों का अभाव और शब्दों का सुपरिचित होना इसके आकर्षण का सबसे बड़ा कारण है। अमरु कवि प्रेम के श्रेष्ठ चित्रकार हैं। इनका प्रिय छन्द शार्दूलविक्रीडित है। अमरु कवि का व्यक्तित्व या समय भले ही अज्ञात हो, किन्तु उनकी काव्य-रचना अमर है।

सत्तरहवीं शताब्दी के कवि पण्डितराज जगन्नाथ ने अनेक रमणीय श्लोकों का संग्रह अपने *भामिनीविलास* में किया। इसमें गीत्यात्मक मुक्तक पद्यों के चार खण्ड हैं। पदलालित्य तथा अनुप्रासों के विन्यास में जगन्नाथ अद्वितीय हैं। उन्होंने *गङ्गालहरी, सुधालहरी* आदि छोटे स्तोत्रकाव्यों की भी रचना की। उनके अतिरिक्त पण्डितराज ने काव्यशास्त्र का महान् ग्रन्थ *रसगङ्गाधर* भी लिखा।

स्तोत्रकाव्य

भक्तिप्रधान गीतिकाव्यों को स्तोत्रकाव्य कहा जाता है। विभिन्न देवताओं, आचार्यों या तीर्थों की स्तुति में ये स्तोत्र लिखे गए हैं। इनका सस्वर पाठ भक्तों के हृदय में आह्लाद उत्पन्न करता है। भारतवर्ष में विभिन्न सम्प्रदायों के कवियों ने अपने-अपने सम्प्रदायों से सम्बद्ध स्तोत्रों की रचना की। इनमें भक्त कवियों के भाव व्यक्त हुए हैं। पुष्पदन्त नामक कवि ने *शिखरिणी* छन्द में *शिवमहिम्न:* स्तोत्र लिखा था। मयूरकवि ने सूर्य की स्तुति स्रग्धरा छन्द में अपने *सूर्यशतक* नामक काव्य में की, जिसमें अनुप्रासों की छटा अत्यन्त आकर्षक है। बाणभट्ट ने सूर्यशतक के अनुकरण पर *चण्डीशतक* नामक काव्य की रचना की। बाण और मयूर दोनों का समय सातवीं शताब्दी ई. का पूर्वार्द्ध है।

Chapter-6.indd 59 12-08-2016 2:08:16 PM

शंकराचार्य आदि ने भी अनेक स्तोत्र लिखे, जिनमें *भजगोविन्दम्* और *सौन्दर्यलहरी* विख्यात हैं। कश्मीर में उत्पलाचार्य की *शिवस्तोत्रावली*, धर्माचार्य की *पञ्चस्तवी* तथा अभिनवगुप्त का *अनुभवनिवेदन* व *क्रमस्तोत्र* प्रसिद्ध हैं। जैन और बौद्ध कवियों ने भी अपने आचार्यों तथा गुरुओं की प्रशंसा में शताधिक स्तोत्र लिखे।

प्राकृत काव्य

संस्कृत गीतिकाव्यों के साथ प्राकृत गीतिकाव्य का भी विकास हुआ। इसमें हाल नामक कवि की *गाहासत्तसई* या *गाथासप्तशती* बहुत प्रसिद्ध है। इसका रचनाकाल निश्चित नहीं है, किन्तु जिस प्रकार की प्राकृत भाषा इसमें प्रयुक्त हुई है, वह 200 ई. में प्रचलित थी। *गाथासप्तशती* में प्रदर्शित जीवन संस्कृत काव्य में सामान्यतया प्रदर्शित जीवन से भिन्न है। इसमें ग्रामीण जीवन, कृषक, गोपालक, उद्यान में खेलने वाली कन्याएँ आदि चित्रित हैं। ग्रामीण स्त्रियों का स्वाभाविक वर्णन इसमें किया गया है। इसमें सात सौ प्राकृत गाथाएँ (पद्य) हैं।

गाथासप्तशती के अनुकरण पर जयदेव के समकालिक गोवर्धनाचार्य ने *आर्यासप्तशती* की रचना की जो संस्कृत भाषा में 700 मुक्तक रूप में लिखे गए आर्या छन्द के श्लोकों का संग्रह है। हिन्दी में कवि बिहारी ने भी इन्हीं सप्तशतियों के अनुकरण पर अपनी सतसई की रचना की थी। इस प्रकार छोटे छन्द में शृंङ्गार का पूरा चित्र खींचने का प्रयास जो हाल कवि ने किया, उसकी लम्बी परम्परा चली।

अन्य काव्यग्रन्थ

संस्कृत भाषा में कुछ अन्य प्रकार की पद्यात्मक रचनाएँ मिलती हैं, जिन्हें गीतिकाव्य, नीतिकाव्य तथा उपदेशपरक काव्यों में रखा जाता है। इनमें कालिदास के नाम से प्रसिद्ध शृङ्गारतिलक तेईस श्लोकों का काव्य है, जो प्रेम के रमणीय चित्रों से भरा है। इसमें अमरु कवि के भाव झलकते हैं। दूसरा काव्य *घटकर्परकाव्य* है, जो 22 श्लोकों में यमक के प्रयोगों से भरा है। इसलिए इसे यमककाव्य भी कहते हैं।

संस्कृत भाषा में नैतिक सूक्तियों के कई संग्रह मिलते हैं। दामोदर भट्ट (800 ई.) ने *कुट्टनीमत* नामक व्यंग्य ग्रन्थ लिखा, जिसमें पाठकों को सांसारिक नीति के विषय में शिक्षा दी गई है। क्षेमेन्द्र ने समयमातृका, *नर्ममाला, कलाविलास, दर्पदलन, सेव्यसेवकोपदेश, चतुर्वर्ग-संग्रह* इत्यादि ग्रन्थों में हास्य-व्यंग्यपूर्ण शैली में समकालिक जीवन का चित्र

Chapter-6.indd 60 12-08-2016 2:08:16 PM

खींचा है। वैद्य, स्वर्णकार, ज्योतिषी, औषधि विक्रेता आदि पर उन्होंने अच्छी चुटकी ली है।

इस प्रकार संस्कृत भाषा में अनेक प्रकार की पद्य रचनाएँ प्राप्त होती हैं, जो पाठकों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों को प्राप्त करने में सहायता देती हैं। इनका अनुशीलन आज भी आनन्ददायक तथा शिक्षाप्रद है।

श्लेषकाव्य

शिलष्ट काव्य या अनेकार्थक काव्यों की एक परम्परा ग्यारहवीं शताब्दी से चली आ रही है। इनमें शिलष्ट पदावली के प्रयोग से एक ही काव्य में दो या अधिक कथाएँ एक साथ चलती हैं। इस प्रकार के काव्यों में सन्ध्याकरनन्दी का *रामचरित*, धनञ्जय का *राघवपाण्डवीय* प्राचीन तथा महत्त्वपूर्ण हैं। ऐसे कुछ अन्य प्रमुख काव्य हैं— विद्यामाधव (बारहवीं शताब्दी) कृत *पार्वतीरुक्मिणीय*, माधवभट्ट (बारहवीं शताब्दी) कृत *राघवपाण्डवीय,* दैवज्ञसूर्य (सोलहवीं शताब्दी) कृत *रामकृष्णविलोमकाव्य,* हरदत्तसूरि (सोलहवीं शताब्दी) कृत *राघवनैषधीय,* चिदम्बर कवि (सत्तरहवीं शताब्दी) कृत *राघवपाण्डवयादवीय* एवं वेंकटाध्वरी (सत्तरहवीं शताब्दी) कृत *यादवराघवीय*।

संस्कृत साहित्य में आरम्भ काल से ही कवयित्रियों का उल्लेख प्राप्त होता है। *ऋग्वेद* में ऋषिकाओं के अनेक मन्त्र संगृहीत हैं, जो काव्य की दृष्टि से अत्यन्त उच्च कोटि के हैं। लौकिक संस्कृत में भी अनेक कवयित्रियों के पद्य सुभाषित सङ्ग्रहों में मिलते हैं। इनमें विज्जका, सुभद्रा, फल्गुहस्तिनी, इन्दुलेखा, मारुला, विकटनितम्बा, शीलाभट्टारिका के नाम प्रमुख हैं। कवयित्रियों ने मुक्तक तथा प्रबन्धात्मक दोनों प्रकार की रचनाएँ की हैं। इनमें रामभद्राम्बाविरचित *रघुनाथाभ्युदय*, तिरुमलाम्बा कृत *वरदाम्बिकापरिणयचम्पू* एवं गङ्गदेवी कृत *वीरकम्परायचरित* तथा *मधुराविजय* प्रसिद्ध प्रबन्धकाव्य हैं। बीसवीं शताब्दी में *पण्डिता क्षमाराव* का नाम उल्लेखनीय है

Chapter-6.indd 61 12-08-2016 2:08:16 PM

ध्यातव्य बिन्दु

- ♦ संस्कृत साहित्य में महाकाव्य के अतिरिक्त अन्य रचनाएँ भी हैं, जैसे— खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, मुक्तककाव्य आदि

  खण्डकाव्य—छोटे कथानक वाले काव्य को खण्डकाव्य कहा जाता है। संस्कृत के प्रमुख खण्डकाव्य हैं—*ऋतुसंहार* और *मेघदूत*।

  - **ऋतुसंहार**—कालिदास द्वारा रचित *ऋतुसंहार* में ऋतुओं का काव्यमय तथा शृंगारपूर्ण वर्णन किया गया है।
  - **मेघदूत**—कालिदास द्वारा रचित *मेघदूत* के दो भाग हैं—*पूर्वमेघ* तथा *उत्तरमेघ*। इसमें यक्ष की विरह-व्यथा का वर्णन है।

  गीतिकाव्य—गीतिकाव्यों में विरह, भक्ति तथा शृंगार सम्बन्धी गीत हैं। कुछ प्रमुख गीतिकाव्य इस प्रकार हैं—

  - गीतगोविन्द—जयदेव द्वारा रचित *गीतगोविन्द* में राधाकृष्ण की प्रेमलीला का वर्णन है।
  - चौरपञ्चाशिका—बिल्हण द्वारा रचित *चौरपञ्चाशिका* गीतिकाव्य में राजकुमारी से कवि के गुप्त प्रेम का वर्णन है।

  मुक्तककाव्य—मुक्तककाव्य का प्रत्येक श्लोक स्वतन्त्र तथा चमत्कारी होता है। भर्तृहरि के शतकत्रय—भर्तृहरि ने तीन शतक लिखे—*नीतिशतक, शृंगारशतक* तथा *वैराग्यशतक*।

  - नीतिशतक— विद्या, उदारता, वीरता तथा सज्जनता की वृत्तियों का वर्णन।
  - *शृंगारशतक*— काम और विलास की नाना स्थितियों का वर्णन
  - वैराग्यशतक— संसार की असारता और वैराग्य का वर्णन।
- ♦ अमरुकशतक— यह अमरु कवि विरचित गीतिकाव्यों में सबसे प्रसिद्ध है।

Chapter-6.indd 62 12-08-2016 2:08:16 PM

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. महाकाव्य के अतिरिक्त पद्य रचनाएँ काव्य की किन विधाओं में आती है?

प्र. 2. खण्डकाव्य किसे कहते हैं? दो खण्डकाव्यों के नाम लिखिए।

प्र. 3. *मेघदूत* के रचयिता कौन हैं? यह ग्रन्थ कितने भागों में विभक्त है?

प्र. 4. *मेघदूत* में किस छन्द का प्रयोग हुआ है?

प्र. 5. संस्कृत भाषा में *मेघदूत* के अनुकरण पर कैसे काव्यों की परम्परा चल पड़ी? उनमें से तीन के नाम लिखिए।

प्र. 6. गीतिकाव्य किसे कहते हैं? इसमें किस प्रकार के गीत होते हैं?

प्र. 7. *गीतगोविन्द* के रचयिता कौन थे? उनका स्थितिकाल क्या था?

प्र. 8. *चौरपञ्चाशिका* के लेखक कौन हैं? यह किस प्रकार का काव्य है?

प्र. 9. मुक्तक काव्यों की क्या विशेषता है?

प्र. 10. भर्तृहरि ने कितने शतकों की रचना की? उनके नाम लिखिए।

प्र. 11. *नीतिशतक* में कवि ने किन बातों का वर्णन किया है?

प्र. 12. *वैराग्यशतक* में किन भावों का समावेश किया गया है?

प्र. 13. *अमरुशतक* का उल्लेख सर्वप्रथम किसने किया है और कब?

प्र. 14. *अमरुशतक* में कितने श्लोक मिलते हैं?

प्र. 15. पण्डितराज जगन्नाथ के श्लोकों का संग्रह किस ग्रन्थ में हुआ है?

प्र. 16. स्तोत्रकाव्य काव्य की किस श्रेणी में आते हैं?

प्र. 17. शंकराचार्य के प्रसिद्ध स्तोत्र का नाम लिखिए।

प्र. 18. *गाथासप्तशती* किस भाषा में रचित है? इसके रचयिता का नाम भी लिखिए।

प्र. 19. *गाथासप्तशती* में किन बातों का वर्णन हुआ?

प्र. 20. *आर्यासप्तशती* के लेखक कौन हैं? इसकी रचना किस भाषा में हुई है?

प्र. 21. नीतिकाव्यों के नाम लिखिए और उनके लेखकों के नाम भी दीजिए।

प्र. 22. दो श्लेषकाव्यों तथा उनके लेखकों के नाम लिखिए।

Chapter-6.indd 63 12-08-2016 2:08:16 PM

प्र. 23. एक प्राचीन तथा एक आधुनिक कवयित्री का नाम दीजिए।

प्र. 24. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(क) भर्तृहरि... शताब्दी में हुए थे।

(ख) सर्वं प्रियं... वसन्ते।

(ग) यक्ष स्वयं... में प्रवास कर रहा था।

(घ) गीतिकाव्य का क्षेत्र बहुत.. है।

(ङ) वैद्य, स्वर्णकार, ज्योतिषी, औषधि-विक्रेता पर......................ने अच्छी चुटकी ली है।

Chapter-6.indd 64 12-08-2016 2:08:16 PM

सप्तम अध्याय

गद्यकाव्य एवं चम्पूकाव्य

संस्कृत गद्य का आरम्भ ब्राह्मण-ग्रन्थों और उपनिषदों के गद्य में देखा जा सकता है। बहुत दिनों तक सरल स्वाभाविक शैली में गद्य लिखने की परम्परा चलती रही। प्राचीन शिलालेखों में गद्य का काव्यमय रूप प्राप्त होता है। इस दृष्टि से रुद्रदामन् का गिरिनार शिलालेख (150 ई.) तथा हरिषेण रचित समुद्रगुप्त-प्रशस्ति (360 ई.) महत्त्वपूर्ण हैं। ये दोनों साहित्यिक गद्य के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। गद्यकाव्य को स्मरण रखने का श्रम, आलोचकों की उपेक्षा और गद्यकाव्य का ऊँचा मानदण्ड—इन तीनों कारणों से गद्यकाव्य की रचना कम हुई। पद्यविधा की सुकुमारता, लयात्मकता, संगीतात्मकता, रचनात्मक सुविधादि गुणों के कारण पद्य रचना द्वारा लोकयश एवं प्रशंसा प्राप्त करना कवियों के लिए सरल कार्य था। परन्तु गद्य रचना में इन गुणों को उत्पन्न करना थोड़ा कठिन था। इसीलिए अधिकांश कवियों की सहज प्रवृत्ति पद्य रचना की ही ओर अधिक रही। गद्य रचना के सन्दर्भ में यह उक्ति भी प्रसिद्ध है—**गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति।** गद्य काव्य के मुख्यत: दो भेद हैं— कथा और आख्यायिका। प्राय: छठी-सातवीं शताब्दी ई. में कुछ महत्त्वपूर्ण गद्य कवि हुए, जैसे—*दण्डी, सुबन्धु* और *बाणभट्ट*।

दण्डी

दण्डी ने *दशकुमारचरित* के रूप में एक अद्भुत कथा-काव्य दिया है। दण्डी का समय विवादास्पद है, किन्तु अधिकांश विद्वान् इनका काल छठीं शताब्दी मानते हैं। परम्परा से दण्डी के तीन ग्रन्थ प्रामाणिक माने जाते हैं। इनमें दूसरा ग्रन्थ *काव्यादर्श* और तीसरा *अवन्तिसुन्दरीकथा* है। इस तीसरे ग्रन्थ के रचयिता के विषय में कुछ विवाद है। *दशकुमारचरित* अव्यवस्थित रूप में मिलता है। इसके तीन भाग प्राप्त हैं— पूर्वपीठिका (पाँच उच्छ्वास), मूलभाग (आठ उच्छ्वास) तथा उत्तरपीठिका (एक उच्छ्वास)। मूलभाग में आठ कुमारों की कथा का वर्णन है। पूर्वपीठिका को मिलाकर दस कुमारों की कथा पूरी हो जाती है। तीनों भागों की शैली में थोड़ा भेद दिखाई पड़ता है।

दशकुमारचरित का कथानक घटना प्रधान है, जिसमें अनेक रोमांचक घटनाएँ पाठकों को विस्मय और विषाद के बीच ले जाती हैं। कहीं भयंकर जंगल में घटनाक्रम पहुँचाता है,

तो कहीं समुद्र में जहाज टूटने पर कोई तैरता हुआ मिलता है। घटनाएँ और विषय-वर्णन दोनों ही समान रूप से दण्डी के लिए महत्त्व रखते हैं। कथावस्तु कहीं भी वर्णनों के क्रम में अवरूद्ध नहीं होती। दण्डी के चित्रण में सामान्य समाज की प्रधानता है। जिसमें निम्न कोटि का जीवन बिताने वाले धूर्त, जादूगर, चालाक, चोर, तपस्वी, सिंहासनच्युत राजा, पतिवञ्चक नारी, ठगने वाली वेश्याएँ, ब्राह्मण, व्यापारी और साधु। दण्डी का हास्य और व्यंग्य भी उच्च कोटि का है। दण्डी अपने वर्णनों में कहीं सहज और कहीं गम्भीर प्रतीत होते हैं।

दण्डी की सबसे बड़ी विशेषता सरल और व्यावहारिक किन्तु ललित पदों से युक्त गद्य लिखने में है। वे लम्बे समासों, कठोर ध्वनियों और शब्दाडम्बर से दूर रहते हैं। भाषा के प्रयोग में ऐसी स्वाभाविकता किसी अन्य गद्य कवि में नहीं मिलती। दण्डी का पद-लालित्य संस्कृत आलोचकों में विख्यात है— **दण्डिनः पदलालित्यम्।** *दशकुमारचरित* की विषयवस्तु भी किसी आधुनिक रोमांचकारी उपन्यास से कम रोचक नहीं है।

सुबन्धु

बाणभट्ट ने *हर्षचरित* की प्रस्तावना में *वासवदत्ता* को कवियों का दर्पभंग करने वाली रचना कहा है। इसी प्रकार *कादम्बरी* को उन्होंने दो कथाओं (*वासवदत्ता* तथा *बृहत्कथा*) से उत्कृष्ट कहा है। इससे ज्ञात होता है कि सुबन्धु बाण से पहले हो चुके थे। *वासवदत्ता* सुबन्धु की उत्कृष्ट गद्य रचना है, इसमें कथानक बहुत संक्षिप्त है। राजकुमार कन्दर्पकेतु स्वप्न में अपनी भावी प्रियतमा को देखता है और अपने मित्र के साथ उसकी खोज में निकल जाता है। वह विन्ध्यावटी में एक मैना के मुख से वासवदत्ता का वृत्तान्त सुनता है। उधर वासवदत्ता भी स्वप्न में कन्दर्पकेतु को देखकर उसके प्रति प्रेमासक्त हो जाती है। दोनों पाटलिपुत्र में मिलते हैं। प्रेमी-युगल जादू के घोड़े पर चढ़कर भाग जाते हैं और विंध्याचल में पहुँचकर सो जाते हैं। राजकुमार जब जागता है, तब वासवदत्ता को नहीं पाता। बहुत ढूँढ़ने के बाद वह एक प्रतिमा को देखता है। स्पर्श करते ही प्रतिमा वासवदत्ता बन जाती है। बाद में दोनों का विवाह हो जाता है।

इस संक्षिप्त कथानक को विस्तृत वर्णन और कल्पनाशक्ति से सुबन्धु बहुत फैलाते हैं। उनका लक्ष्य रोचक और सरस कथा का आख्यान नहीं है, अपितु वे वर्णन-कौशल से चमत्कार उत्पन्न कर गौरव अर्जित करना चाहते हैं। नायक-नायिका के रूप का वर्णन करने में, उनके गुण-गान में, उनकी तीव्र विरह-वेदना, मिलन की आकांक्षा और संयोग-दशा के चित्रण में सुबन्धु ने पर्याप्त शक्ति लगाई है। इस कार्य में सुबन्धु के व्यापक अनुभव तथा पाण्डित्य ने बड़ी सहायता की है।

Chapter-7.indd 66 12-08-2016 2:09:29 PM

सुबन्धु अपने श्लेष के प्रयोग पर बहुत गर्व करते हैं। वे इस कथा के अक्षर-अक्षर में श्लेष भरने का दावा करते हैं। अन्य अलंकारों का भी उन्होंने प्रचुर प्रयोग किया है। यत्र-तत्र पद्यों का प्रयोग करके अपनी शैली को उन्होंने बहुत रोचक बनाया है। *वासवदत्ता* वास्तव में सुबन्धु की शैली का चमत्कार दिखाने का सुन्दर अवसर देती है। लम्बे समासों का प्रयोग तथा अनुप्रासों का अत्यधिक उपयोग सुबन्धु के शैली की विशेषता है। समासों में स्वरमाधुर्य है और अनुप्रासों में संगीत है। अपने युग के अनुरूप उन्होंने चमत्कार-प्रदर्शन किया है।

बाणभट्ट

संस्कृत गद्य साहित्य में सर्वाधिक प्रतिभाशाली गद्यकार बाण ही हैं। इनके विषय में अन्य संस्कृत-कवियों की अपेक्षा अधिक जानकारी प्राप्त होती है। *हर्षचरित* के आरम्भ में इन्होंने अपना और अपने वंश का पूरा विवरण दिया है। ये वात्स्यायन-गोत्रीय ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम चित्रभानु था। अल्पावस्था में ही ये अनाथ हो गए थे। किंतु विद्वानों के परिवार में जन्म लेने के कारण इन्होंने सभी विद्याओं का अभ्यास किया था। युवावस्था में अनेक कलाओं और विद्याओं के जानकार मित्रों की मण्डली बनाकर इन्होंने पर्याप्त देशाटन किया था। जब अनेक अनुभवों से सम्पन्न होकर बाण अपने ग्राम प्रीतिकूट (शोण के तट पर) लौटे, तो हर्षवर्धन ने अपने अनुज कृष्ण के द्वारा इन्हें अपनी राजसभा में बुलाया। बाण राजकृपा से हर्ष की सभा में रहने लगे। हर्षवर्द्धन का समय 607 ई. से 648 ई. है। इसलिए बाण का भी यही समय होना चाहिए।

बाण ने दो गद्यकाव्य लिखे— *हर्षचरित* तथा *कादम्बरी*। परम्परा बाणभट्ट को *चण्डीशतक* का भी लेखक मानती है।

- **हर्षचरित**—*हर्षचरित* एक आख्यायिका-काव्य है। गद्यकाव्य के उस भेद को आख्यायिका कहते हैं, जिसमें किसी ऐतिहासिक पुरुष या घटनाओं का वर्णन किया जाता है। *हर्षचरित* आठ उच्छ्वासों में विभक्त है। आरम्भिक ढाई उच्छ्वासों में बाण ने अपने वंश का तथा अपना वृत्तान्त दिया है। राजा हर्षवर्द्धन की पैतृक राजधानी स्थाण्वीश्वर का वर्णन कर वे हर्षवर्द्धन के पूर्वजों का वर्णन करते हैं। इसके बाद राजा प्रभाकरवर्द्धन के पूरे जीवन का विवरण देकर वे राज्यवर्द्धन, हर्षवर्द्धन तथा राज्यश्री इन तीनों भाई-बहन के जन्म का भी रोचक वृत्तान्त देते हैं। पञ्चम उच्छ्वास से इस परिवार के संकटों का आरम्भ होता है। प्रभाकरवर्द्धन की मृत्यु, राज्यश्री का विधवा होना, राज्यवर्द्धन की हत्या, राज्यश्री का विन्ध्यावटी में पलायन, हर्षवर्द्धन द्वारा उसकी रक्षा— ये सभी घटनाएँ क्रमश: वर्णित हैं। दिवाकरमित्र नामक बौद्ध संन्यासी के आश्रम में हर्षवर्द्धन व्रत लेता है कि दिग्विजय के बाद वह बौद्ध हो जाएगा। यहीं *हर्षचरित* का कथानक समाप्त हो जाता है।

Chapter-7.indd 67 12-08-2016 2:09:29 PM

बाण ने हर्ष की प्रारंभिक जीवनी ही लिखी, उसके राज्य संचालन की घटनाओं का उल्लेख नहीं किया है। बाण की भेंट हर्ष से तब हुई थी, जब हर्ष समस्त उत्तर-भारत का सम्राट् था, इसलिए यह समस्या बनी हुई है कि बाण ने हर्ष का पूरा जीवनचरित क्यों नहीं लिखा? उन्होंने हर्षवर्द्धन की विशेषताएँ तो बतलाई हैं, उसके साहसिक कार्यों का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन भी प्रारम्भ में ही किया है, किन्तु उसके राज्यकाल की प्रमुख घटनाओं का क्रमबद्ध रूप से वर्णन नहीं किया। इतिहास का संक्षिप्त रूप यहाँ काव्य के विशाल आवरण से ढँक गया है।

हर्षचरित में बाणभट्ट का पाण्डित्य और व्यापक अनुभव प्रकट हुआ है। विस्तृत वर्णन, सजीव संवाद, सुन्दर उपमाएँ, झंकार करती शब्दावली तथा रसों की स्पष्ट अभिव्यक्ति— ये सभी गुण बाण की गद्य-शैली में प्रचुर रूप में प्राप्त होते हैं। राज्यश्री के विवाह-वर्णन में जहाँ आनन्द और उल्लास का सजीव विवरण मिलता है, वहीं प्रभाकरवर्द्धन की मृत्यु मार्मिक रूप से वर्णित है।

- **कादम्बरी**— यह कवि-कल्पित कथानक पर आश्रित होने के कारण कथा नामक गद्यकाव्य है। उच्छ्वास, अध्याय आदि में इसका विभाजन नहीं किया गया है। पूरी कथा का दो-तिहाई भाग ही बाण ने लिखा। इसका एक-तिहाई भाग उनके पुत्र ने लिखकर जोड़ा, जो अपने पिता के अपूर्ण ग्रन्थ से दु:खी था। *कादम्बरी* की कथा एक जन्म से सम्बद्ध न होकर चन्द्रापीड (नायक) तथा पुण्डरीक (उसका मित्र) के तीन जन्मों से सम्बन्ध रखती है। आरम्भ में विदिशा के राजा शूद्रक का वर्णन है। उसकी राजसभा में चाण्डाल कन्या वैशम्पायन नामक एक मेधावी तोते को लेकर आती है। यह तोता राजा को अपने जन्म और जाबालि के आश्रम में अपने पहुँचने का वर्णन सुनाता है। जाबालि ने तोते को उसके पूर्व जन्म की कथा सुनाई थी। तदनुसार राजा चन्द्रापीड और उसके मित्र वैशम्पायन की कथा आती है। चन्द्रापीड दिग्विजय के प्रसंग में हिमालय में जाता है, जहाँ अच्छोद सरोवर के निकट महाश्वेता के अलौकिक संगीत से आकृष्ट होता है। वहाँ कादम्बरी से उसकी भेंट होती है और वह उसके प्रति आसक्त हो जाता है। महाश्वेता एक तपस्वी कुमार पुण्डरीक के साथ अपने अधूरे प्रेम की कहानी सुनाती है। उसी समय चन्द्रापीड अपने पिता तारापीड के द्वारा उज्जैन बुला लिया जाता है, किन्तु वह वियोगजन्य व्यथा से पीड़ित रहता है। पत्रलेखा से कादम्बरी का समाचार सुनकर वह प्रसन्न होता है। यहीं बाण की कादम्बरी समाप्त हो जाती है। महाश्वेता वैशम्पायन को तोता बनने का शाप देती है। यह वैशम्पायन चन्द्रापीड का मित्र है, शाप के बाद वह मर जाता है। इससे चन्द्रापीड

Chapter-7.indd 68 12-08-2016 2:09:30 PM

भी दु:खी होकर मर जाता है। महाश्वेता तथा कादम्बरी, राजकुमार के शरीर की रक्षा करती हैं। अन्त में सभी को जीवन प्राप्त होता है।

कादम्बरी में कथा को ही नहीं, वर्णनों को भी बाण ने अपनी कल्पनाशक्ति से फैलाया है। इसमें सभी स्थल बाण की लोकोत्तर शक्ति तथा वर्णन-क्षमता का परिचय देते हैं। काव्यशास्त्र के सभी उपादानों (रस, अलंकार, गुण एवं रीति) का औचित्यपूर्ण प्रयोग करने के कारण कादम्बरी बाण की उत्कृष्ट गद्य रचना है। इसमें विषय की आवश्यकता के अनुसार वर्णन शैली अपनाई गई है। इसलिए उनकी शैली को **पाञ्चाली** कहा जाता है, जिसमें शब्द और अर्थ का समान गुम्फन होता है। बाण ने पात्रों का सजीव निरूपण किया है, रस का समुचित परिपाक दिखाया है और मानव-जीवन के सभी पक्षों पर दृष्टि रखी है। इसलिए आलोचकों ने एक स्वर से कहा है कि **बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्।** अर्थात् उनके वर्णन से कुछ भी नहीं बचा है। *कादम्बरी* में मन्त्री शुकनास ने राजकुमार चन्द्रापीड को जो विस्तृत उपदेश दिया है, वह आज भी तरुणों के लिए मार्गदर्शक है।

अम्बिकादत्त व्यास

- **शिवराजविजय**— एक आधुनिक गद्यकाव्य है, जो महान् देशभक्त शिवाजी के जीवन की प्रमुख घटनाओं पर आधारित आधुनिक उपन्यास की शैली में लिखा गया है। इसके लेखक पं. अम्बिकादत्त व्यास (1858-1900 ई.) हैं। व्यास जी मूलत: जयपुर (राजस्थान) के निवासी थे, किन्तु उनका कार्यक्षेत्र बिहार था। *शिवराजविजय* का कथानक ऐतिहासिक है, जिसमें कवि ने कल्पना का भी प्रचुर प्रयोग किया है। इससे घटनाएँ गतिशील और प्रभावशाली हो गई हैं। व्यास जी की भाषा-शैली में प्रसादगुण, कथा-प्रवाह और कल्पना की विशदता मिलती है। विषयवस्तु की दृष्टि से यह गद्यकाव्य शिवाजी और औरंगजेब के सङ्घर्ष की घटनाओं पर आश्रित है। यशवन्त सिंह, अफजल खाँ आदि कई ऐतिहासिक पात्रों को इसमें चित्रित किया गया है। शिवाजी भारतीय आदर्श, संस्कृति तथा राष्ट्रशक्ति के रक्षक के रूप में दिखाए गए हैं। उनका ऐतिहासिक व्यक्तित्व इस गद्यकाव्य में पूर्णत: चित्रित है। इसमें जहाँ-तहाँ फारसी के शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। पूरी रचना 12 नि:श्वासों में विभक्त है। यह आधुनिक गद्य साहित्य का गौरव ग्रन्थ है।

अन्य गद्यकाव्य

संस्कृत भाषा में गद्य रचना कम हुई है, फिर भी विभिन्न कालों में कवियों ने अपना कौशल गद्यकाव्य की रचना में दिखाया है। इन सभी में प्राय: बाण के अनुकरण की प्रवृत्ति है। धारा

Chapter-7.indd 69 12-08-2016 2:09:30 PM

नगरी के जैन कवि धनपाल (दसवीं शताब्दी ई.) ने *तिलकमञ्जरी* लिखकर बाण की शैली का अनुकरण किया। वे बाण के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित करते हैं। गुजरात-निवासी सोड्ढल (ग्यारहवीं शताब्दी ई.) ने *उदयसुन्दरीकथा* आठ उच्छ्वासों में लिखी, जो कल्पित कथानक पर आधारित है। आधुनिक काल में पण्डिता क्षमाराव (1890—1954 ई.) का नाम गद्य लेखकों में अग्रणी है। उन्होंने *कथामुक्तावली*, *विचित्रपरिषद्यात्रा* इत्यादि कई गद्यकाव्य लिखे हैं।

ध्यातव्य बिन्दु

- संस्कृत में गद्य का आरम्भ ब्राह्मण तथा उपनिषद् ग्रन्थों से हुआ।
  गद्यकाव्य के महत्त्वपूर्ण कवि—
  दण्डी
  सुबन्धु
  बाणभट्ट
- दण्डी द्वारा विरचित *दशकुमारचरित* कथा-काव्य है। जिसमें दशकुमारों की कथा वर्णित है।

दण्डी की अन्य रचनाएँ—

काव्यादर्श
अवन्तिसुन्दरीकथा

- **सुबन्धु**— सुबन्धु द्वारा रचित *वासवदत्ता* गद्यकाव्य है। इसमें राजकुमार कन्दर्पकेतु और राजकुमारी वासवदत्ता का प्रणय चित्रित है।
- **बाणभट्ट**— गद्य साहित्य में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कवि हैं। इनके दो प्रसिद्ध गद्यकाव्य हैं। *हर्षचरित* और *कादम्बरी*।
  कादम्बरी बाणभट्ट की उत्कृष्ट गद्य रचना है।
- **शिवराजविजय**— श्री अम्बिकादत्त व्यास द्वारा रचित *शिवराजविजय* आधुनिक गद्यकाव्य है।
- इनके अतिरिक्त संस्कृत में अनेक गद्यकाव्य हैं—
  धनपाल द्वारा रचित— तिलकमञ्जरी
  क्षमाराव द्वारा रचित— कथामुक्तावली
  सोड्ढल द्वारा रचित— उदयसुन्दरीकथा।

Chapter-7.indd 70 12-08-2016 2:09:30 PM

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. संस्कृत भाषा में गद्यकाव्य की रचनाएँ कम होने के क्या कारण हैं?
प्र. 2. छठी शताब्दी के कुछ महत्त्वपूर्ण गद्य कवियों के नाम लिखिए।
प्र. 3. दण्डी के काव्य की कौन-सी विशेषताएँ प्रसिद्ध हैं?
प्र. 4. *दशकुमारचरित* का लेखक कौन है?
प्र. 5. दण्डी ने अपने काव्य में किन-किन सामान्य चरित्रों के आधार पर समाज का चित्र खींचा है?
प्र. 6. *वासवदत्ता* किसकी रचना है?
प्र. 7. *वासवदत्ता* का कथानक पचास शब्दों में लिखिए।
प्र. 8. बाणभट्ट किस राजा की राजसभा में रहते थे?
प्र. 9. *हर्षचरित* तथा *कादम्बरी* किस लेखक की रचनाएँ हैं?
प्र. 10. आख्यायिका की विशेषताएँ बताइए।
प्र. 11. *हर्षचरित* के नामकरण की सार्थकता बताइए।
प्र. 12. बाण की गद्य-शैली की क्या विशेषता है?
प्र. 13. *कादम्बरी* का नायक कौन है?
प्र. 14. *कादम्बरी* का कथानक पचास शब्दों में लिखिए।
प्र. 15. "बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्" इसका आशय क्या है?
प्र. 16. शिवाजी के जीवन की प्रमुख घटनाओं पर लिखित संस्कृत में कौन-सा गद्यकाव्य है?
प्र. 17. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(क) संस्कृत गद्य का आरम्भ.. ग्रन्थों और .... से माना जाता है।

(ख) संस्कृत गद्य साहित्य में सर्वाधिक प्रतिष्ठित और प्रतिभाशाली गद्यकार .... ही हैं।

(ग) बाणभट्ट के पिता का नाम .... था।

(घ) सुबन्धु अपने काव्य में .... अलंकार के प्रयोग पर बहुत गर्व करते थे।

(ङ) *शिवराजविजय* में यत्र-तत्र .... के शब्दों का प्रयोग किया गया है।

प्र.18. गद्य काव्यों और कवियों को मिलाइए—

गद्यकाव्य	**कवि**
उदयसुन्दरीकथा	धनपाल
तिलकमंजरी	सोड्ढल
कथामुक्तावली	पण्डिता क्षमाराव

Chapter-7.indd 71 12-08-2016 2:09:30 PM

चम्पूकाव्य

संस्कृत साहित्य में गद्यकाव्य तथा पद्यकाव्य के अतिरिक्त दोनों के मिश्रण के रूप में चम्पूकाव्य का भी उदय हुआ। यद्यपि यह स्वरूपत: नीति-कथाओं के समान गद्य और पद्य से समन्वित होता है, किन्तु नीति-कथाओं और चम्पू में मौलिक अन्तर है। चम्पू मूलत: एक काव्य है, जिसमें कवि अलङ्करण के सभी साधनों का उपयोग करता है। एक ओर इसमें गद्यकाव्य का सौन्दर्य होता है, तो दूसरी ओर महाकाव्य में पाए जाने वाले श्लोकों के समान अलङ्कृत पद्य भी रहते हैं। बाह्य सौन्दर्य इसमें मुख्य होता है और कवि की कला का चमत्कार रहता है। विषयवस्तु की प्रधानता नहीं रहती। इसका उद्देश्य काव्यगत आनन्द देना है। नीति-कथाओं और लोक-कथाओं के समान चम्पूकाव्य सरल शैली में नहीं लिखे जाते। गद्य और पद्य दोनों का उत्कर्ष इसमें वर्तमान रहता है— **गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते**। चम्पूकाव्य को गद्यकाव्य के समान ही उच्छ्वासों में विभक्त किया जाता है। संस्कृत में समय-समय पर लिखे गए कुछ प्रमुख चम्पूकाव्यों का विवरण इस प्रकार है—

1. नलचम्पू और मदालसाचम्पू

ये दोनों त्रिविक्रमभट्ट द्वारा लिखे गए चम्पूकाव्य हैं। इनका काल दसवीं शताब्दी ई. का पूर्वार्ध माना जाता है। त्रिविक्रमभट्ट राष्ट्रकूट नरेश इन्द्रराज के संरक्षण में रहते थे। *नलचम्पू* को *दमयन्तीकथा* भी कहते हैं। इसमें नल और दमयन्ती की प्रणय कथा वर्णित है। इसमें सात उच्छ्वास हैं। रचना अपूर्ण प्रतीत होती है, क्योंकि नल द्वारा दमयन्ती के निकट सन्देश ले जाने तक की ही कथा इसमें वर्णित है। *नलचम्पू* सरस तथा प्रसादपूर्ण रचना है। इसमें श्लेष की अधिकता है। त्रिविक्रमभट्ट के श्लेष बहुत सरल और आकर्षक हैं। इन्होंने विरोध और परिसंख्या अलंकारों का भी प्रचुर प्रयोग किया है।

इनकी दूसरी रचना *मदालसाचम्पू* है, जो प्रणय-कथा है। इसमें कुवलयाश्व से मदालसा का प्रेम वर्णित है। कुवलयाश्व से मदालसा का विवाह होता है, किन्तु तुरन्त वियोग भी हो जाता है। अन्त में उसे मदालसा की प्राप्ति होती है। कला की दृष्टि से उत्कृष्टता होने पर भी कथा के विकास और रोचकता की दृष्टि से यह कृति लोकप्रिय रही है।

Chapter-7.indd 72 12-08-2016 2:09:30 PM

2. यशस्तिलकचम्पू

यह जैन कवि सोमप्रभसूरि की रचना है। लेखक का काल दसवीं शताब्दी ई. का उत्तरार्द्ध है। यह ग्रन्थ अत्यन्त विस्तृत है। इसमें आठ उच्छ्वास हैं। जैन सिद्धान्तों को इसमें काव्य-रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस चम्पूकाव्य का नायक राजा यशोधर है। पत्नी की धूर्तता से राजा की मृत्यु होती है। नाना योनियों में जन्म लेकर अन्तत: वह जैन धर्म में दीक्षित होता है। यह कथा गुणभद्र के उत्तरपुराण पर आश्रित है। इसी कथा पर पुष्पदन्त ने *जसहरचरिउ* नामक अपभ्रंशकाव्य तथा वादिराजसूरि ने संस्कृत काव्य *यशोधरचरित* लिखा था। इस कृति द्वारा सोमप्रभसूरि के गहन अध्ययन, प्रगाढ़ पाण्डित्य, भाषा पर स्वच्छन्द प्रभुत्व तथा काव्य के क्षेत्र में अभिनव प्रयोगों की रुचि का पता लगता है। इसके आरम्भिक श्लोकों में कवि ने अनेक पूर्ववर्ती कवियों का उल्लेख किया है।

एक अन्य जैन कवि हरिचन्द्र ने राजकुमार जीवन्धर को चरितनायक बनाकर *जीवन्धरचम्पू* लिखा। इनका काल भी दसवीं शताब्दी ई. है। यह चम्पू 11 लम्बकों में विभक्त है। जैन धर्म के सिद्धान्तों को इसमें सरल भाषा में प्रतिपादित किया गया है।

3. उदयसुन्दरीकथा

यह छ: उच्छ्वासों में नागराजकुमारी उदयसुन्दरी तथा प्रतिष्ठान के राजा मलयवाहन के विवाह का वर्णन करने वाला चम्पूकाव्य है। इसके रचयिता का नाम सोड्ढल है। लेखक का समय 1040 ई. के आसपास है। *उदयसुन्दरीकथा* पर बाणभट्ट की शैली का बहुत प्रभाव है। सोड्ढल ने इसकी रचना *हर्षचरित* के आदर्श पर की है।

4. रामायणचम्पू

इसे *चम्पूरामायण* भी कहते हैं। इसे मूलत: राजा भोज ने लिखा, किन्तु उन्होंने केवल सुन्दरकाण्ड तक ही इसकी रचना की। युद्धकाण्ड की रचना लक्ष्मणभट्ट ने की तथा उत्तरकाण्ड की वेंकटराज ने। भोज का काल ग्यारहवीं शताब्दी ई. पूर्वार्द्ध है। इसका आधार वाल्मीकीय रामायण है। कथानक, भाव, भाषा, गुण-दोष इत्यादि सभी पर वाल्मीकि का प्रभाव लक्षित होता है। इसमें भोज ने कई प्रकार की शैलियाँ अपनायी हैं। कहीं वे माघ की शैली में लिखते हैं, कहीं कालिदास की शैली में। भोज शब्दों के संयोजन में पूर्ण निपुण हैं। इस चम्पू में कलापक्ष के साथ मार्मिक स्थलों के भाव-सौंदर्य को भी प्रकट किया गया है। इसमें गद्य भाग कम है, पद्यों की विपुलता है।

Chapter-7.indd 73 12-08-2016 2:09:30 PM

5. भारतचम्पू

इसके लेखक सोलहवीं शताब्दी ई. के कवि अनन्तभट्ट हैं। इसमें *महाभारत* की कथा का 12 स्तबकों में वर्णन किया गया है। वर्णन अत्यन्त प्रांजल है, किन्तु कहीं-कहीं क्लिष्टता भी है। कल्पना की नवीनता और वैदर्भी शैली का प्रयोग इसका वैशिष्ट्य है। यह चम्पू संस्कृत जगत् में बहुत प्रसिद्ध है।

6. अन्य चम्पूकाव्य

संस्कृत में प्राय: 250 चम्पूकाव्य लिखे गए हैं। इनके कथानक *रामायण, महाभारत, भागवतपुराण, शिवपुराण* तथा जैन साहित्य से लिए गए हैं। *नृसिंहचम्पू* नाम से पृथक्-पृथक् कई कवियों ने ग्रन्थ लिखे। केशवभट्ट ने छ: स्तबकों में, दैवज्ञसूरि ने पाँच उच्छ्वासों में तथा संकर्षण ने चार उल्लासों में *नृसिंहचम्पू* की रचना की। शेषश्रीकृष्ण-रचित *पारिजातहरणचम्पू* कृष्णलीला से सम्बद्ध है। नीलकण्ठदीक्षित कृत *नीलकण्ठविजयचम्पू,* वेंकटाध्वरि कृत *विश्वगुणादर्शचम्पू,* कविकर्णपूर-रचित *आनन्दवृन्दावनचम्पू* तथा जीवगोस्वामी कृत *गोपालचम्पू* कुछ प्रसिद्ध चम्पूकाव्य हैं।

बीसवीं शताब्दी ई. के पूर्वार्द्ध में प्रसिद्ध संस्कृत विद्वान् म. म. हरिहरकृपालु द्विवेदी के जीवन को आधार बनाकर रघुनन्दन त्रिपाठी ने *हरिहरचरितचम्पू* तथा उत्तरार्ध में पण्डित जयकृष्ण मिश्र ने भारत की स्वतन्त्रता पर आधारित संस्कृत का बृहत्तम चम्पू *मातृमुक्तिमुक्तावली* की रचना की।

Chapter-7.indd 74 12-08-2016 2:09:30 PM

ध्यातव्य बिन्दु

- चम्पूकाव्य गद्य और पद्य का मिश्रण है।
- दो प्रमुख चम्पूकाव्य— *नलचम्पू* एवं *मदालसाचम्पू* के रचयिता त्रिविक्रमभट्ट हैं।
- जैन कवि सोमप्रभसूरि द्वारा रचित *यशस्तिलकचम्पू* जैन सिद्धान्तों को काव्यरूप में प्रस्तुत करता है।
- अन्य जैन कवि हरिचन्द्र ने राजकुमार जीवन्धर को नायक बनाकर *जीवन्धरचम्पू* लिखा।
- सोड्ढल रचित *उदयसुन्दरीकथा* में नागराजकुमारी उदयसुन्दरी तथा प्रतिष्ठान के राजा मलयवाहन के विवाह का वर्णन है।
- *रामायणचम्पू* को *चम्पूरामायण* भी कहते हैं जिसके सुन्दरकाण्ड तक की रचना राजा भोज ने युद्धकाण्ड की रचना लक्ष्मणभट्ट ने तथा उत्तरकाण्ड की रचना वेंकटराज ने की।
- अनन्तभट्ट ने *महाभारत* की कथा के आधार पर *भारतचम्पू* की रचना की है।

Chapter-7.indd 75 12-08-2016 2:09:30 PM

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. चम्पूकाव्य किसे कहते हैं?

प्र. 2. नीतिकथा और चम्पू में क्या अन्तर है?

प्र. 3. चम्पूकाव्यों का क्या उद्देश्य है?

प्र. 4. त्रिविक्रमभट्ट के द्वारा लिखे गए दो चम्पूकाव्यों के नाम लिखिए।

प्र. 5. कवि त्रिविक्रमभट्ट किस नरेश के संरक्षण में रहते थे?

प्र. 6. दमयन्तीकथा का दूसरा नाम क्या है?

प्र. 7. *नलचम्पूकाव्य* की विशेषताएँ लिखिए।

प्र. 8. *मदालसाचम्पू* में किसके प्रेम का वर्णन है?

प्र. 9. *यशस्तिलकचम्पू* का लेखक कौन है?

प्र. 10. *जीवन्धरचम्पू* के लेखक कौन थे? वे किस शताब्दी में हुए?

प्र. 11. सोड्ढल की रचना पर किस कवि की शैली का प्रभाव पड़ा है?

प्र. 12. भोज ने अपने चम्पू में किन-किन कवियों की शैली अपनाई है?

प्र. 13. *महाभारत* की कथा के आधार पर लिखित प्रसिद्ध चम्पू का नाम लिखिए।

प्र. 14. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(क) *यशस्तिलकचम्पू* में .... धर्म के सिद्धान्तों का वर्णन है।

(ख) *यशस्तिलकचम्पू* का नायक .... है।

(ग) सोड्ढल की रचना का नाम .... है।

(घ) राजा भोज ने .... चम्पू की रचना की।

(ङ) *भारतचम्पू* के लेखक .... हैं।

प्र. 15. चम्पू और लेखक के नामों को मिलाइए—

क	**ख**
पारिजातहरणचम्पू	जीवगोस्वामी
आनन्दवृन्दावनचम्पू	तिरूमलाम्बा
गोपालनचम्पू	कविकर्णपूर
वरदाम्बिकापरिणयचम्पू	दैवज्ञसूरि
विश्वगुणादर्शचम्पू	शेषश्रीकृष्ण
नृसिंहचम्पू	वेंकटाध्वरि

Chapter-7.indd 76 12-08-2016 2:09:30 PM

अष्टम अध्याय

कथा साहित्य

नीतिकथा और लोककथा

संस्कृत भाषा में प्राचीनकाल से ही नीतिकथाओं और लोककथाओं का साहित्य लिखा जाता रहा है। कथा के द्वारा बालकों को शिक्षित करने एवं जन-सामान्य का मनोरञ्जन करने की प्रवृत्ति सभी देशों में है। प्राचीन भारत में भी कथा के माध्यम से कल्पना शक्ति को बढ़ाने का प्रयास किया गया है। मनोरञ्जन के विविध माध्यमों में कथा कहना और सुनना बहुत समर्थ तथा शक्तिशाली साधन है। ब्राह्मण-ग्रन्थों, उपनिषदों, बौद्ध-जातकों तथा पुराणों में अनेक कथाएँ दी गई हैं, जिनमें शिक्षा और मनोरञ्जन दोनों उद्देश्य पूरे होते हैं। भारत का प्राचीनतम कथासङ्ग्रह *पञ्चतन्त्र* है। उसके बाद भी कथा साहित्य की परम्परा अविच्छिन्न चलती है।

पञ्चतन्त्र

पञ्चतन्त्र में पशु-पक्षियों तथा मनुष्यों को भी पात्र बनाकर कथाएँ कही गई हैं। इन कथाओं में उपदेश देने की अद्भुत क्षमता है। *पञ्चतन्त्र* की सभी कहानियों में नैतिक शिक्षा दी गई है। आचार और नीति में कुशलता प्रदान करना इन कथाओं का मुख्य उद्देश्य है। *पञ्चतन्त्र* में ही कहा गया है कि शिक्षा से दूर भागने वाले राजकुमारों को आचार-व्यवहार का ज्ञान देने के लिए ये कथाएँ कही गई हैं। नीति शिक्षा यहाँ पद्यों द्वारा की गई है।

पञ्चतन्त्र में कथाओं को परस्पर सम्बद्ध करके इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि कथा के अन्तिम श्लोक में अगली कथा का संकेत मिलता है और पुन: वह सङ्केतित कथा चल पड़ती है। इसी प्रकार कथा में कथा को जन्म देकर एक शृंखला बनाई गई है। मुख्य कथा का सूत्र स्मरण रखना होता है। कथा में उत्सुकता बढ़ाने का प्रयास *पञ्चतन्त्र* में सर्वत्र प्राप्त होता है। इसमें पाँच खण्ड हैं। इन खण्डों को *तन्त्र* कहा गया है। ये हैं— मित्रभेद, मित्रसम्प्राप्ति, काकोलूकीय, लब्धप्रणाश तथा अपरीक्षितकारक। इनमें कुल सत्तर कथाएँ मिलती हैं तथा 900 श्लोक हैं।

पञ्चतन्त्र के लेखक का नाम विष्णुशर्मा है। इनके व्यक्तित्व तथा समय के विषय में कुछ कहना कठिन है। बहुत से लोग विष्णुशर्मा को कौटिल्य या चाणक्य से सम्बद्ध मानते हैं। *पञ्चतन्त्र* के अनुसार वे सभी शास्त्रों में पारंगत थे और वैदिक धर्म के अनुयायी थे। अर्थशास्त्र का सार उन्होंने इस ग्रंथ में प्रस्तुत किया है। महिलारोप्य नामक नगर के राजा अमरसिंह के तीन मूर्ख पुत्रों को छः मास में राजनीति और व्यवहार में पटु बनाने के लिए *पञ्चतन्त्र* लिखा गया था। *पञ्चतन्त्र* का प्रचार विदेशों में भी हुआ है। ईसा की छठी शताब्दी में इसका अनुवाद पहलवी भाषा में हुआ था, जिससे एक ईसाई पादरी ने सीरियन भाषा में अनुवाद किया। यही अनुवाद यूरोप और पश्चिमी एशिया की भाषाओं में *पञ्चतन्त्र* के अनुवाद का आधार बना। इण्डोनेशिया, थाईलैण्ड तथा अन्य पूर्वी देशों में भी *पञ्चतन्त्र* की कथाएँ अनुवादों के माध्यम से पहुँचीं। इस प्रकार यूरोप और एशिया की अधिकांश भाषाओं में *पञ्चतन्त्र* अपनी रोचकता के कारण पहुँच गया।

इसमें अत्यन्त सरल भाषा का प्रयोग है। यह संस्कृत के प्रारम्भिक छात्रों के लिए भाषा और शैली को सीखने का उत्तम साधन है। मध्यपूर्व में इसकी प्रसिद्धि बुद्धिविषयक पुस्तक (अक्ल की किताब) के रूप में है।

हितोपदेश

पञ्चतन्त्र का अनुसरण करते हुए नारायण पंडित ने नीति-कथाओं के संग्रह के रूप में *'हितोपदेश'* नामक एक लघुग्रन्थ लिखा है। इनका समय चौदहवीं शताब्दी ई. माना जाता है। *हितोपदेश* की 43 कथाओं में 25 *पञ्चतन्त्र* से ली गई हैं। नारायण पण्डित के आश्रयदाता बंगाल के राजा धवलचन्द्र थे। *हितोपदेश* में चार परिच्छेद हैं— *मित्रलाभ, सुहृद्भेद, विग्रह* और *सन्धि*। कथा से कथा आरम्भ करने की पद्धति इसमें भी *पञ्चतन्त्र* के समान ही है। बंगाल में रचित इस ग्रन्थ की लोकप्रियता सम्पूर्ण भारत में है। इसमें अनेक रोचक और शिक्षाप्रद श्लोक आए हैं, जैसे-मूर्खों को उपदेश देने से उनका क्रोध बढ़ता है, शान्त नहीं होता **(उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये)।** वह माता शत्रु है और वह पिता वैरी है, जिसने अपने बच्चे को नहीं पढ़ाया। जिस प्रकार हंसों के बीच बगुला नहीं सुशोभित होता, उसी प्रकार अशिक्षित बालक सभा में शोभा नहीं पाता—

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः।
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा।।

हितोपदेश पञ्चतन्त्र की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय है। इसके उपदेश हृदय पर शीघ्र प्रभाव डालते हैं।

Chapter-8.indd 78 12-08-2016 2:10:43 PM

बृहत्कथा

यह गुणाढ्य के द्वारा पैशाची भाषा में लिखी गई कथा थी। मूल ग्रन्थ अब उपलब्ध नहीं है। गुणाढ्य का काल ईसा की प्रथम शताब्दी माना जाता है। कश्मीर की जनश्रुति के अनुसार *बृहत्कथा* श्लोकों में थी, किन्तु दण्डी इसे गद्य रचना के रूप में संकेतित करते हैं। गुणाढ्य ने लोक-जीवन में प्रचलित कथाओं का संकलन करके उसकी रचना की थी। इसका नायक उदयन का पुत्र नरवाहनदत्त है और नायिका मदनमञ्जूषा है, जिसका अपहरण मानसवेग कर लेता है। मन्त्री गोमुख की सहायता से राजकुमार मदनमञ्जूषा को पाकर विद्याधरों का राजा बनता है। आलोचकों ने उस पर *रामायण* के सीता-हरण का प्रभाव बतलाया है। अनेक संस्कृत कवियों ने इसके लेखक गुणाढ्य की प्रशंसा की है। *बृहत्कथा* के कथानक को जानने के साधन संस्कृत भाषा में लिखे गए कतिपय ग्रन्थ हैं, जैसे— *बृहत्कथामञ्जरी, कथासरित्सागर* इत्यादि।

बृहत्कथा श्लोकसंग्रह

यह बुधस्वामी के द्वारा बृहत्कथा का संक्षिप्त रूपान्तर है। इनमें आज 28 सर्ग प्राप्त होते हैं, जिनमें 4500 श्लोक हैं। बुधस्वामी का काल छठी या सातवीं शताब्दी ई. माना जाता है। ये नेपाल के निवासी थे। नायक और नायिका के चरित्र और उनके पारस्परिक सम्बन्ध का इसमें अधिक संगत निर्वाह हुआ है। इसकी शैली सरल, स्पष्ट और गतिशील है। काव्य के अलंकरण घटनाक्रम को अवरुद्ध नहीं करते।

बृहत्कथामञ्जरी

बृहत्कथा का यह संक्षिप्त संस्कृत संस्करण क्षेमेन्द्र द्वारा महाकाव्य के रूप में लिखा गया है। इसमें 7500 श्लोक हैं। क्षेमेन्द्र (995—1070 ई.) कश्मीरी कवि थे। इन्होंने *महाभारत* और *रामायण* के जिस प्रकार संक्षिप्त संस्करण बनाए, उसी पद्धति से उन्होंने *बृहत्कथामञ्जरी* भी लिखी। मूल कथाओं में काट-छाँट होने से दुरूहता उत्पन्न हो गई है। अत: वर्णन प्राय: शुष्क हो गए हैं। नरवाहनदत्त पर केन्द्रित इस काव्यात्मक कथा में अनेक उपकथाएँ दी गई हैं, जिससे मूल कथावस्तु शिथिल हो गई है। क्षेमेन्द्र ने इसमें अनेक विच्छिन्न कथाओं को परस्पर गूँथने का प्रयास किया है।

कथासरित्सागर

यह *बृहत्कथा* का सबसे बड़ा उपलब्ध संस्कृत संस्करण है, जिसमें 24,000 श्लोक हैं।

Chapter-8.indd 79 12-08-2016 2:10:43 PM

इसके लेखक सोमदेव कश्मीर के निवासी थे। ये क्षेमेन्द्र के समकालिक थे। उन्होंने राजा अनन्त की पत्नी सूर्यमती के विनोद के लिए 1063 तथा 1081 ई. के बीच इस ग्रन्थ की रचना की थी। इस ग्रन्थ का विभाजन लम्बकों और तरङ्गों में किया गया है।

सोमदेव ने इसमें सरस एवं अलङ्कृत शैली का प्रयोग किया है। कश्मीर के विदूषकों और सामान्य जनों की कहानियाँ भी इसमें जोड़ी गई हैं। अन्धविश्वास, जादूगरी, शैवमत, बौद्धमत, कर्मवाद, शिवपूजा, मातृपूजा इत्यादि का चित्रण इस ग्रन्थ में कुशलता से किया गया है। सोमदेव की कथा-शैली सरल और प्रवाहमय है। कठिन शब्दों और जटिल कथानकों का प्रयोग ये नहीं करते। कुल मिलाकर *कथासरित्सागर* अत्यन्त लोकप्रिय है।

वेतालपञ्चविंशतिका

यह लोकप्रिय कथाओं का संग्रह है। इसका प्राचीनतम रूप *बृहत्कथामञ्जरी* और *कथासरित्सागर* में मिलता है। इसमें 25 कहानियाँ दी गई हैं। इसके कई संस्करण प्राप्त होते हैं। पहला संस्करण शिवदास का है जिसमें कहीं-कहीं श्लोक भी मिलते हैं। इस प्रकार यह गद्य-पद्यात्मक संस्करण है। दूसरा संस्मरण बिल्कुल गद्यात्मक है, जो जम्भलदत्त के द्वारा बनाया गया है। ये दोनों संस्करण चौदहवीं शताब्दी के पहले ही बन चुके थे। इसकी कथाएँ इतनी लोकप्रिय हैं कि भारत की सभी भाषाओं में अनुवाद के रूप में पाई जाती हैं।

इसमें विक्रमसेन (विक्रमादित्य) की कथाएँ हैं। कोई सिद्ध पुरुष राजा को रत्नगर्भित फल देता है और उसकी सिद्धि में सहायता के लिए राजा को एक वृक्ष पर लटकते हुए शव को लाने के लिए कहता है। वह शव किसी वेताल के वश में है, जो शव ले जाते समय राजा को चुप रहने के लिए कहता है, किन्तु वेताल ऐसी विचित्र कथाएँ सुनाता है कि राजा को बोलना ही पड़ता है। वेताल के प्रश्न अत्यन्त जटिल हैं, किन्तु राजा का उत्तर भी बड़ा सुन्दर होता है। इस प्रकार ग्रन्थ पहेली और उसके उत्तर के रूप में है। इन कथाओं से बुद्धि की परीक्षा होती है।

सिंहासनद्वात्रिंशिका (द्वात्रिंशत्पुत्तलिका)

यह एक मनोरञ्जक कथा-संग्रह है, जिसमें 32 पुतलियाँ राजा भोज को 32 कहानियाँ सुनाती हैं। राजा भोज भूमि में गड़े हुए विक्रमादित्य के सिंहासन को उखाड़ता है और उस पर बैठना चाहता है, किन्तु उस सिंहासन में जड़ी हुई 32 पुतलियाँ एक-एक करके विक्रमादित्य के पराक्रम को सुनाती हैं और राजा भोज को अयोग्य सिद्ध करके उस पर बैठने से रोकती हैं। इस कथा के दो संस्करण प्राप्त होते हैं— दक्षिण भारतीय और उत्तर

Chapter-8.indd 80 12-08-2016 2:10:43 PM

भारतीय। उत्तर भारतीय संस्करण में भी तीन पाठ मिलते हैं— जैन पाठ, बंगाली पाठ तथा लघु पाठ। दक्षिण भारतीय संस्करण *विक्रमचरित* कहलाता है। इसके भी पद्यबद्ध और गद्यबद्ध दो पाठ हैं। इनमें कौन सा संस्करण मौलिक है, कहा नहीं जा सकता।

शुकसप्तति

यह एक लोकप्रिय रचना है, जिसमें 70 कहानियाँ संकलित हैं। इसका वक्ता एक तोता है। मदनसेन नामक व्यापारी अपनी पत्नी से दृढ़ अनुराग रखता है, किन्तु उसे कार्यवश परदेश जाना पड़ता है। जाते समय वह पत्नी की देखभाल के लिए तोते को छोड़ जाता है।

जब नववधू अपने सती-धर्म को छोड़ने के लिए उद्यत होती है, तब तोता प्रत्येक रात को एक कहानी सुनाता है। कहानी से मनोरञ्जन तो होता है, वियोग की पीड़ा भी दूर होती है और वह स्त्री पथभ्रष्ट होने से बच जाती है। सत्तरहवीं कहानी पूरी होते ही उसका पति विदेश से लौट आता है। इन कहानियों में दुश्चरित्र स्त्रियों की चतुरता का वर्णन है। ये सभी कहानियाँ उपदेशप्रद, रोचक तथा सरल हैं। इनकी रचना गद्य में हुई है, किन्तु कहीं-कहीं पद्य भी हैं।

इस ग्रन्थ के दो पाठ मिलते हैं— एक पाठ चिन्तामणि भट्ट रचित है और दूसरा किसी जैन मतावलम्बी लेखक का है।

अन्य कथा ग्रन्थ

संस्कृत भाषा के कथा ग्रन्थ कई प्रकार के हैं। बौद्धों, जैनों तथा वैदिक धर्म वाले लेखकों ने अपने-अपने क्षेत्रों में प्रचलित कथाएँ गद्य-पद्य में लिखीं। इनमें कुछ का उद्देश्य तो शुद्ध मनोरञ्जन था, किन्तु अधिकांश लेखकों ने धार्मिक एवं नैतिक उपदेश के लिए ही कथाएँ लिखीं। बौद्ध लोक कथाओं का प्राचीनतम ग्रन्थ *अवदान शतक* है, जिसका चीनी भाषा में अनुवाद तीसरी शताब्दी ई. में हो गया था। अत: यह इसके पूर्व की रचना है। इसकी कहानियाँ उपदेशों से भरी हैं। दूसरा प्रमुख कथा ग्रन्थ *दिव्यावदान* है, जिसमें साहित्यिक सौन्दर्य तो नहीं, किन्तु कथाएँ रोचक हैं। अशोक के पुत्र कुणाल की करुण कथा इसमें आई है, जिसकी आँखें उसकी विमाता ने निकलवा ली थी। इसका रचनाकाल दूसरी शताब्दी ई. है। आर्यशूर कृत *जातकमाला* भी बौद्ध कथा साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। इसमें बोधिसत्त्व की 34 कथाएँ हैं। इसमें महायान धर्म के अनुसार बोधिसत्त्व के दिव्य कर्मों का वर्णन किया गया है। इसका उद्देश्य भी आचारपरक शिक्षा देना था। *जातकमाला पञ्चतन्त्र*

Chapter-8.indd 81 12-08-2016 2:10:43 PM

के समान गद्य-पद्यात्मक रचना है, किन्तु इसकी शैली कुछ अलङ्कृत है और लम्बे समास भी आए हैं। इसका समय तीसरी-चौथी शताब्दी ई. है।

जैनों ने भी अनेक कथाएँ लिखीं। इनकी अधिकांश कथाएँ प्राकृत में हैं, किन्तु संस्कृत में भी उनके कुछ कथा ग्रन्थ मिलते हैं। सिद्धार्थ (900 ई.) की *उपमितिभवप्रपञ्चकथा* में प्रतीकात्मक रूप से आत्मा का वर्णन है। मेरुतुङ्ग ने *प्रबन्ध चिन्तामणि* की रचना 1305 ई. में की थी। इसमें पाँच प्रकाश हैं, जिनमें कई प्राचीन राजाओं, विद्वानों और कवियों का वृत्तान्त लिखा गया है। एक अन्य जैन कवि राजशेखर (1350 ई.) ने प्रबन्धकोश लिखा, जिसमें 24 प्रसिद्ध व्यक्तियों की जीवनी है।

विद्यापति (चौदहवीं शताब्दी ई.) ने *पुरुष-परीक्षा* की रचना लोगों को लोकनीति का ज्ञान देने के लिए की थी। इसमें 44 कथाएँ हैं, जो मानवीय गुणों का प्रतिपादन करती हैं। सोलहवीं शताब्दी में वल्लालसेन ने *भोजप्रबन्ध* लिखा, जिसमें राजा भोज और कालिदास के विषय में प्रचलित दन्तकथाओं का गद्य-पद्यात्मक संग्रह है। इस प्रकार सभी मतावलम्बियों की अपनी-अपनी कथाएँ हैं, जिनसे मनोरञ्जन ओर नीतिशिक्षा की प्राप्ति होती है। ये कथाएँ आज भी नवयुवकों को जीवन-यापन की दिशा देने में पूर्ण समर्थ हैं।

Chapter-8.indd 82 12-08-2016 2:10:43 PM

ध्यातव्य बिन्दु

- कथा के द्वारा बालकों को शिक्षित करने के लिए संस्कृत में भी अनेक लोक-कथाएँ और नीतिकथाएँ लिखी गई हैं।
- विष्णुशर्मा द्वारा रचित *पञ्चतन्त्र* में पशु-पक्षियों तथा मनुष्यों को पात्र बनाकर कथाएँ कही गई हैं। इसमें पञ्च तन्त्र हैं— मित्रभेद, मित्रसंप्राप्ति, काकोलूकीय, लब्धप्रणाश तथा अपीरीक्षितकारक।
- हितोपदेश— नारायण पण्डित द्वारा रचित *हितोपदेश* में *पञ्चतन्त्र* का अनुसरण करते हुए नीतिकथाएँ संकलित हैं। इसमें चार परिच्छेद हैं— मित्रलाभ, सुहृद्भेद, विग्रह और सन्धि।
- बृहत्कथा— गुणाढ्य ने पैशाची प्राकृत में *बृहत्कथा* की रचना की।
- बृहत्कथाश्लोकसंग्रह— बुधस्वामी ने संस्कृत भाषा में *बृहत्कथाश्लोकसंग्रह* ग्रन्थ की रचना की जो *बृहत्कथा* का संक्षिप्त रूपान्तर है।
- बृहत्कथामञ्जरी— कश्मीरी कवि क्षेमेन्द्र ने महाकाव्य की शैली में *बृहत्कथा* का संस्कृत रूपान्तर किया है।
- कथासरित्सागर— सोमदेव द्वारा रचित *कथासरित्सागर बृहत्कथा* का संस्कृत में सबसे बड़ा संस्करण है।
- वेतालपञ्चविंशतिका— *बृहत्कथामञ्जरी* और *कथासरित्सागर* पर आधारित वेतालपञ्चविंशतिका में राजा विक्रम के द्वारा वेताल को ढोने और उस वेताल के द्वारा कही हुई 25 कथाओं का संग्रह है।
- सिंहासनद्वात्रिंशिका— *सिंहासनद्वात्रिंशिका* में 32 पुतलियाँ राजा भोज को 32 कहानियाँ सुनाती हैं।
- शुकसप्तति— इसमें तोता प्रत्येक रात्रि में सत्तर कहानियाँ सुनाता है, जिससे व्यापारी मदनसेन की पत्नी पथभ्रष्ट होने से बच जाती है।
- इन कथा-ग्रन्थों के अतिरिक्त बौद्धों, जैनों तथा वैदिक धर्मावलम्बियों ने भी अनेक कथा-ग्रन्थों की रचना की है—
- बौद्धकथा ग्रन्थों में— अवदानशतक, दिव्यावदान

  आर्यशूर — जातकमाला

  राजशेखर — प्रबन्धकोश

Chapter-8.indd 83 12-08-2016 2:10:43 PM

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. *पञ्चतन्त्र* में कितने तन्त्र हैं? उनके नाम लिखिए।
प्र. 2. *पञ्चतन्त्र* की कथाओं का प्रचार किन-किन देशों में हुआ?
प्र. 3. *हितोपदेश* किसकी रचना है?
प्र. 4. *हितोपदेश* में कितने परिच्छेद हैं? उनके नाम लिखिए।
प्र. 5. *हितोपदेश* की रचना कहाँ हुई थी?
प्र. 6. *बृहत्कथा* के कथानक को जानने के लिए संस्कृत भाषा में कौन-कौन से ग्रन्थ हैं?
प्र. 7. *बृहत्कथा* श्लोक संग्रह किसकी रचना है? उसके श्लोकों की संख्या लिखिए।
प्र. 8. *वेतालपञ्चविंशतिका* में कितनी कहानियाँ हैं?
प्र. 9. *सिंहासनद्वात्रिंशिका* का दूसरा नाम क्या है?
प्र. 10. *शुकसप्तति* में वक्ता कौन है?
प्र. 11. संस्कृत के कथा ग्रन्थों का मुख्य उद्देश्य क्या था?
प्र. 12. जैनों के तीन कथा ग्रन्थों का मुख्य उद्देश्य क्या था?
प्र. 13. रिक्त स्थान भरिए—

(क) भारत का प्राचीनतम कथा संग्रह .... है।
(ख) कवि नारायण पण्डित के आश्रयदाता बंगाल के राजा .... थे।
(ग) *बृहत्कथा* की रचना .... ने .... भाषा में की।
(घ) बौद्ध लोक-कथाओं का प्राचीनतम ग्रन्थ .... शतक है।
(ङ) अशोक के पुत्र कुणाल की करुण कथा .... कथा ग्रन्थ में आई है।
(च) *जातकमाला* का .... कथा साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है।
(छ) पुरुष-परीक्षा कथा ग्रन्थ .... की रचना है।

प्र. 14. कथा ग्रन्थ और लेखकों को मिलाइए—

कथा ग्रन्थ	**लेखक**
भोजप्रबन्ध	क्षेमेन्द्र
बृहत्कथामञ्जरी	सोमदेव
कथासरित्सागर	वल्लालसेन

प्र. 15. कवि और उनके काल को ठीक-ठीक मिलाइए—

कवि (लेखक)	**काल**
नारायण पण्डित	प्रथम शताब्दी
गुणाढ्य	ग्यारहवीं शताब्दी
क्षेमेन्द्र	900 ई.
सिद्धार्थ	चौदहवीं शताब्दी

Chapter-8.indd 84 12-08-2016 2:10:43 PM

नवम अध्याय

नाट्य-साहित्य

संस्कृत भाषा में विपुल नाट्य-साहित्य है। नाट्य-कृति में जीवन की विभिन्न अवस्थाओं का अनुकरण किया जाता है। दृश्यकाव्य होने के कारण नाट्य को रूपक भी कहते हैं। नाट्याचार्यों ने दस प्रकार के रूपक बतलाए हैं। इनमें सबसे उत्कृष्ट नाटक माना गया है। अत: प्राय: लोग नाट्य, रूपक, रूप और नाटक का प्रयोग समान अर्थ में करते हैं। संस्कृत भाषा में बहुत प्राचीन काल से रूपक लिखे जाते रहे हैं। यह परम्परा आज तक चल रही है। लिखने के साथ-साथ बहुत से रूपकों का अभिनय भी होता रहा है। राजसभाओं में विशिष्ट अवसरों पर संस्कृत रूपकों का अभिनय होता था। इसी प्रकार ग्रामों और नगरों में भी नाटक-मण्डलियाँ जनता के मनोरंजन के लिए नाटक खेलती थीं। जन सामान्य में संस्कृत का प्रयोग शिथिल हो गया तब लोक-प्रचलित भाषाओं में नाटक खेले जाने लगे। आज स्थिति यह हो गई है कि संस्कृत नाटक विशिष्ट तथा प्रबुद्ध वर्गों के बीच ही अभिनीत होते हैं।

संस्कृत रूपकों की उत्पत्ति कैसे हुई? इस पर पाश्चात्त्य विद्वानों ने पुत्तलिका नृत्य, धार्मिक नृत्य, वीर पूजा, यूनानी प्रभाव इत्यादि सिद्धान्त दिए हैं। भरत ने अपने नाट्यशास्त्र में आख्यान दिया है कि ब्रह्मा ने *ऋग्वेद* से पाठ्य (संवाद), *सामवेद* से गीत, *यजुर्वेद* से अभिनय तथा *अथर्ववेद* से रस लेकर नाट्य-वेद नामक नई विधा (जिसे पंचम वेद कहा गया) विकसित की। शिव और पार्वती ने क्रमश: ताण्डव और लास्य नामक नृत्य की व्यवस्था करके इस विद्या को समृद्ध किया। नाट्य शास्त्र के अनुसार भरत के पुत्रों और शिष्यों ने अप्सराओं और गन्धर्वों के साथ मिलकर अमृतमन्थन और त्रिपुरदाह नामक रूपकों का अभिनय किया था। ये ही प्रथम रूपक थे। वस्तुत: संस्कृत नाटकों की उत्पत्ति इसी देश में जनसामान्य के मनोरंजन के लिए हुई है।

नाट्यशास्त्र रूपकों के सम्बन्ध में व्यापक विधान करता है। इसमें रूपकों के भेद, कथा-वस्तु, पात्र, रस, अभिनय, गीत, नृत्य, रंगमंच की व्यवस्था, भाषा का प्रयोग आदि

विषयों के विस्तृत नियम बतलाए गए हैं। इसका समय प्रथम शताब्दी ई. पू. से पहले माना गया है। इसमें नियमों की व्यापकता देखते हुए कहा जा सकता है कि बहुत प्राचीन काल में ही नाटक से सम्बद्ध विज्ञान विकसित हो गया था। इससे नाटकों के पर्याप्त मात्रा में लिखे जाने का भी अनुमान होता है। यहाँ कुछ प्रमुख संस्कृत नाटकों का परिचय दिया जा रहा है।

भास के नाटक

सन् 1912 ई. में टी. गणपति शास्त्री को त्रिवेन्द्रम (केरल) में 13 रूपकों की प्राप्ति हुई, जिन्हें उन्होंने भास की कृतियाँ बतलाकर प्रसिद्ध किया। इन रूपकों को 'भासनाटकचक्र' का संयुक्त नाम दिया गया। इसके पूर्व तक भास का नाम प्रसिद्ध संस्कृत नाटककार के रूप में जाना जाता था, किन्तु उनकी कृतियाँ नहीं मिली थीं। आरम्भ में उन सभी रूपकों को भासकृत मानने में विद्वानों को आपत्ति हुई, किन्तु धीरे-धीरे यह विवाद समाप्त हो गया। इन रूपकों में परस्पर इतना अधिक साम्य पाया गया कि इन्हें भासरचित मानने में कोई आपत्ति नहीं हुई।

भास के काल के विषय में विवाद है। गणपति शास्त्री ने उनका काल तीसरी शताब्दी ई. पू. माना है। कुछ भारतीय विद्वान् उनका स्थितिकाल 400 ई. पू. तक ले जाते हैं। अधिसंख्य विद्वानों का यह विचार है कि भास कालिदास (ई.पू. प्रथम शताब्दी) के पूर्ववर्ती हैं, क्योंकि कालिदास ने अपने नाटक *मालविकाग्निमित्रम्* में भास का नाम स्मरण किया है।

भास की रचनाओं को चार भागों में बाँटा जाता है। *प्रतिमा नाटक* और *अभिषेक* रामायण पर आश्रित हैं। *बालचरित, पञ्चरात्र, मध्यमव्यायोग, दूतवाक्य, दूतघटोत्कच, कर्णभार* तथा *ऊरुभंग* नामक रूपक *महाभारत* पर आश्रित हैं। *स्वप्नवासवदत्त* तथा *प्रतिज्ञायौगन्धरायण* उदयन और *वासवदत्ता* की प्रसिद्ध कथा पर आश्रित हैं। *अविमारक* और *चारुदत्त* कल्पित रूपक हैं। इन रूपकों में *स्वप्नवासवदत्त* सर्वाधिक विख्यात है। नाट्य-कला की दृष्टि से भी इसका महत्त्व है। भास के सभी रूपक नाट्य-कला की विकासावस्था के सूचक हैं। भाषा की सरलता, छोटे वाक्यों का प्रयोग, अभिनय की सुगमता, उचित हास्य-प्रयोग तथा कला की दृष्टि से भास के नाटक बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। *चारुदत्त* चार अंकों का रूपक है, जो बाद में शूद्रक के *मृच्छकटिक* की रचना का आधार बना। भास की कल्पना शक्ति तथा कथानक को सजाने का कौशल बहुत उत्कृष्ट है। भास के रूपकों में उस काल की सामाजिक और सांस्कृतिक सूचनाएँ पर्याप्त रूप से मिलती हैं। इनमें पात्रों का सजीव अंकन किया गया है तथा रस की योजना भी उत्कृष्ट रूप में हुई है।

Chapter-9.indd 86 12-08-2016 2:11:33 PM

कालिदास के नाटक

कालिदास ने तीन नाटक लिखे थे— *मालविकाग्निमित्र, विक्रमोर्वशीय* तथा *अभिज्ञानशाकुन्तल।* इनमें अन्तिम नाटक संस्कृत वाङ्मय में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

- **मालविकाग्निमित्र**— यह एक ऐतिहासिक नाटक है, जिसमें शुंगवंशीय राजा अग्निमित्र का दासी के वेश में रहने वाली विदर्भ-राजकुमारी मालविका के प्रति प्रेम वर्णित है। इसमें पाँच अंक हैं। अग्निमित्र की महारानी धारिणी शरणागत मालविका को अपना लेती है और नृत्य आदि ललित-कलाओं की शिक्षा दिलाती है। राजा अपने अन्त:पुर में उसका नृत्य देखकर मुग्ध हो उठता है। अन्त:पुर में विरोध और तनाव होने पर भी विदूषक की सहायता से राजा और मालविका की भेंट हो जाती है। अन्तत: महारानी धारिणी अपने आप मालविका का हाथ अग्निमित्र के हाथ में दे देती है। इसमें अग्निमित्र के पिता पुष्यमित्र के द्वारा किए गए अश्वमेध यज्ञ का भी संकेत है तथा अग्निमित्र के पुत्र वसुमित्र की यवनों पर विजय का भी वर्णन है। इस नाटक में राजप्रासाद के प्रणय-षडयन्त्रों का सजीव चित्रण है। प्रेम-प्रपंच की घटनाएँ चुभते संवादों और रसपूर्ण विनोद से भरी हैं। कालिदास की इस प्रथम नाट्य कृति में उनके कलात्मक विकास का बीज निहित है।
- **विक्रमोर्वशीय**— यह कालिदास का दूसरा नाटक है। इसमें राजा पुरुरवा और अप्सरा उर्वशी की प्रेम-कथा का वर्णन है। यह कथा *ऋग्वेद* और ब्राह्मण-ग्रन्थों में भी आई है। परम्परा से मिले हुए कथानक को कालिदास ने बड़े कौशल से पाँच अंकों में फैलाया है। पुरुरवा स्वर्ग की अप्सरा उर्वशी को देखकर मुग्ध हो जाता है और उर्वशी का भी नायक के प्रति अनुराग होता है। महारानी राजा को उर्वशी से प्रेम करने की अनुमति देती है और उर्वशी को भी एक वर्ष के लिए पुरुरवा के साथ रहने की अनुमति मिल जाती है। चतुर्थ अंक में उर्वशी एक लता के रूप में बदल जाती है। पुरुरवा विलाप करता है। राजा के प्रेम से प्रभावित होकर इन्द्र उर्वशी को आजीवन राजा के साथ रहने की अनुमति दे देते हैं। इस नाटक में शृङ्गार के संयोग और विप्रलम्भ दोनों रूपों का अत्यन्त मार्मिक प्रयोग हुआ है। इसमें कालिदास की नाट्यकला और काव्यकला भी अधिक विकसित दिखाई पड़ती है। प्रकृति का मानवीय भावों के साथ अधिक सामंजस्य इसमें दिखाया गया है। उदाहरण के लिए उर्वशी के लता-रूप में परिणत हो जाने पर महाराज पुरुरवा सामने बहती नदी को ही अपनी प्रेयसी समझ बैठते हैं और उन्मादग्रस्त होकर उसका वर्णन करते हैं।

Chapter-9.indd 87 12-08-2016 2:11:33 PM

- **अभिज्ञानशाकुन्तल**— यह कालिदास का अमर नाटक है, जिसने समस्त संसार के लोगों को प्रभावित किया है। इसमें सात अंक है। दुष्यन्त और शकुन्तला की प्रेम-कथा इसमें चित्रित है। दुष्यन्त हस्तिनापुर का राजा है तथा शकुन्तला कण्व मुनि के आश्रम में पलने वाली एक सुन्दर कन्या है। आश्रम में दुष्यन्त कण्व की अनुपस्थिति में शकुन्तला से गान्धर्व विवाह करता है। कुछ दिन वहाँ रहकर वह राजधानी लौट जाता है। जाते समय वह शकुन्तला को शीघ्र बुला लेने का वचन देता है, किन्तु दुर्वासा के द्वारा शकुन्तला को दिए गए शाप के कारण वह उस वचन को भूल जाता है। इधर कण्व आश्रम में लौटकर गर्भवती शकुन्तला को पतिगृह भेजने की तैयारी करते हैं। आश्रम के सभी चेतन व अचेतन पदार्थ इस दृश्य से व्याकुल हैं। चतुर्थ अंक में शकुन्तला की बिदाई का यह दृश्य उत्कृष्ट है। दुर्वासा के शाप के कारण दुष्यन्त शकुन्तला को पहचान नहीं पाता। उसके द्वारा दी गई अँगूठी भी शकुन्तला खो चुकी है। इसलिए पहचान का कोई उपाय भी नहीं रहता। अन्तत: शकुन्तला मारीच आश्रम में ले जाई जाती है, जहाँ वह भरत नाम के पुत्र को जन्म देती है। इधर जब दुष्यन्त को वह अँगूठी मिल जाती है तब सब कुछ स्मरण हो जाता है। वह बहुत पश्चात्ताप करता है। संयोगवश इन्द्र की सहायता करके लौटते समय दुष्यन्त मारीच आश्रम में जाता है और उसकी शकुन्तला तथा भरत से भेंट हो जाती है। इस प्रकार नाटक की सुखद समाप्ति होती है। इस नाटक में कालिदास की नाट्यकला अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँची है। घटनाओं का संयोजन, प्रेम का क्रमिक विकास, प्रकृति का मनोरम चित्रण, शकुन्तला की विदाई का कारुणिक दृश्य, विदूषक का हास्य, संवादों की अभिव्यंजना, शृङ्गार-रस का यथेष्ट निष्पादन, दुर्वासा के शाप की कल्पना—ये सभी मिलकर इस नाटक को बहुत ऊँचाई पर पहुँचाते हैं। कालिदास उपमा का प्रयोग करने में अत्यन्त कुशल हैं।

भारतीय परम्परा में इस नाटक के चतुर्थ अंक को और उसके भी चार श्लोकों को श्रेष्ठ बतलाया गया है।

काव्येषु नाटकं रम्यं, तत्र रम्या शकुन्तला।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम्।।

जर्मन महाकवि गेटे ने इस नाटक की बहुत प्रशंसा की है कि वसन्त का पुष्प और ग्रीष्म का फल यदि एक साथ देखना हो, तो शकुन्तला में देखें। मानव-जीवन के मार्मिक पक्षों का निरूपण इसमें बहुत कुशलता से हुआ है।

Chapter-9.indd 88 12-08-2016 2:11:33 PM

अश्वघोष का शारिपुत्रप्रकरण

इसके लेखक अश्वघोष (प्रथम शताब्दी ई.) हैं। यह रूपक नौ अंकों में लिखा गया था। इसके कुछ अंश ताल-पत्रों पर लिखित मध्य एशिया में मिले हैं। इन पत्रों को संकलित करके प्रो. ल्यूडर्स ने वर्तमान शताब्दी के आरम्भ में जर्मनी में इनका प्रकाशन किया था। इसमें शारिपुत्र और मौद्गलायन द्वारा बौद्ध धर्म स्वीकार किए जाने की कथा है। आंशिक रूप से प्राप्त होने के कारण इसके कथानक का पूरा ज्ञान तो नहीं मिलता, किन्तु इसके विदूषक का प्राकृत-प्रयोग, छन्दों का प्रयोग, नाटक का अंकों में विभाजन इत्यादि तत्त्व संस्कृत नाट्य-विज्ञान के विकास का संकेत देते हैं। इस नाटक के साथ दो अन्य नाटकों के भी खण्डित अंश मिले थे। कुछ आधुनिक विद्वान् इन्हें भी *शारिपुत्रप्रकरण* का ही अंश मानते हैं। इसमें कीर्ति, धृति आदि प्रतीकात्मक पात्रों का सर्वप्रथम प्रयोग है। अश्वघोष के इस नाटक में शैली का संयम उनके महाकाव्यों के समान ही मिलता है।

शूद्रक का मृच्छकटिक

शूद्रक-रचित *मृच्छकटिक* 10 अंकों का रूपक है, जिसे प्रकरण नामक भेद में रखा जाता है। प्रकरण में कथावस्तु कल्पित और सामाजिक होती है, राजकीय वातावरण से यह दूर रहती है। व्यापारजीवी ब्राह्मण चारुदत्त इसका नायक है, जो उदारता के कारण निर्धन हो गया है। इसकी नायिका वसन्तसेना उज्जयिनी की प्रसिद्ध गणिका है। वह चारुदत्त से प्रेम करती है। उसके प्रेम में उन्मत्त राजा का श्यालक शकार इसका विरोध करता है। वह वसन्तसेना का गला दबा देता है और हत्या के झूठे आरोप में चारुदत्त को न्यायालय में पहुँचा देता है, किन्तु वसन्तसेना मरती नहीं। इसी बीच राजविप्लव होता है और पालक के स्थान पर आर्यक राजा बनता है। अकस्मात् ही जीवित वसन्तसेना के वध्यस्थान पर उपस्थित हो जाने के कारण, चारुदत्त को दी गई मृत्युदण्ड की सजा समाप्त हो जाती है और रूपक की सुखात्मक परिणति होती है।

चारुदत्त का पुत्र रोहसेन मिट्टी की गाड़ी का खिलौना नहीं चाहता, स्वर्णशकट चाहता है। नायिका वसन्तसेना उसकी गाड़ी पर अपने सोने के आभूषण डाल देती है। मिट्टी की गाड़ी का कथानक बहुत मार्मिक है। अत: इस रूपक का नाम *मृच्छकटिक* (मृत्-मिट्टी, शकटिक-खिलौने की गाड़ी) पड़ा है। यह प्रकरण विशुद्ध सामाजिक कथावस्तु पर आश्रित है। इसलिए किसी नगर के राजपथ पर घटी घटनाओं का इसमें यथार्थ चित्र मिलता है।

Chapter-9.indd 89 12-08-2016 2:11:33 PM

इसमें चारुदत्त जैसे पात्र के गुणों पर मुग्ध होकर वसन्तसेना जैसी गणिका अपने व्यवसाय को छोड़ देती है। दूसरी ओर इसमें शकार जैसा खलनायक भी है, जो राजा का साला होने के कारण अहंकारी है और दुष्टता करता रहता है। इसमें जुआ खेलने वाले जुआरी, घर में काम करने वाली दासी, राजतन्त्र की दुर्गति करने वाला राजा, चोरी करके अपनी प्रेमिका को आभूषण देने वाला प्रेमी, मित्र की निर्धनता में भी साथ देने वाला हास्य-पात्र विदूषक, पतिव्रता धूता (चारुदत्त की पत्नी) और धन से अधिक सद्गुणों की पूजा करने वाली गणिका वसन्तसेना जैसे अनेक पात्र हैं, जो इस प्रकरण में रोचकता और रोमांच उत्पन्न करते हैं। अपने युग के समाज और संस्कृति को यह सजीव रूप में उपस्थित करने वाला एक क्रान्तिकारी रूपक है।

मृच्छकटिक के लेखक शूद्रक के व्यक्तित्व और काल के विषय में बहुत विवाद है। इसकी प्रस्तावना में शूद्रक के राज्य करने और उसकी मृत्यु का भी उल्लेख है। निश्चित रूप से यह प्रस्तावना बाद में जोड़ी गई है। शूद्रक को कुछ लोग काल्पनिक पात्र मानते हैं। सामान्यत: तीसरी-चौथी शताब्दी ई. के उज्जैन का चित्र अंकित होने के कारण *मृच्छकटिक* की रचना इस काल में मानी जा सकती है।

विशाखदत्त का मुद्राराक्षस

यह विशाखदत्त-रचित सात अंकों का नाटक है, जो राजनीतिक कथानक से संबद्ध है। इसकी कथावस्तु मौर्य-वंश की स्थापना से जुड़ी है। विशाखदत्त का समय पाँचवी-छठी शताब्दी माना जाता है। लेखक राजनीति तथा अनेक शास्त्रों का महान् पण्डित था। इस नाटक में चाणक्य के द्वारा नन्द-राजाओं के विध्वंस का वर्णन किया गया है। इसके बाद चन्द्रगुप्त मौर्य को पाटलिपुत्र के सिंहासन पर बैठाया जाता है। चाणक्य स्वयं राजनीति से संन्यास लेना चाहता है। इसलिए वह नन्दों के भूतपूर्व मन्त्री राक्षस को चन्द्रगुप्त का प्रधानमंत्री बनाने का प्रयत्न करता है, किन्तु राक्षस नन्दों के प्रति स्वामिभक्ति रखता है। वह न चाणक्य को प्रतिष्ठित होते देखना चाहता है, न चन्द्रगुप्त को। वह मलयकेतु नामक राजा के साथ मिलकर चन्द्रगुप्त को राज्यच्युत करने की योजना बनाता है। इसलिए चाणक्य का काम बहुत कठिन है, फिर भी वह अपनी कूटनीति से राक्षस को असहाय बना देता है, मित्रों से उसे पृथक् कर देता है और अन्तत: राक्षस चन्द्रगुप्त का मन्त्री पद स्वीकार करने के लिए विवश हो जाता है। चाणक्य की कूटनीति में सर्वाधिक सहायता राक्षस की मुद्रा (मुहर के रूप में प्रयुक्त होने वाली अँगूठी) से मिलती है, जो संयोगवश चाणक्य के हाथ

Chapter-9.indd 90 12-08-2016 2:11:33 PM

लग जाती है। यह मुद्रा ही राक्षस की पराजय का कारण बनती है। इसके आधार पर नाटक का नामकरण हुआ है।

इस नाटक में चाणक्य और राक्षस की कूटनीतियों का संघर्ष दिखाया गया है। यह परम्परा से हटकर लिखा गया नाटक है, क्योंकि इसमें न कोई नायिका है और न शृंगार रस ही है। यहाँ राजनीतिक संघर्ष की भव्य क्रीड़ा है, जहाँ दो परस्पर विपक्षी राजनीतिज्ञ भिड़े हुए हैं। राक्षस की पराजय इसलिए होती है कि वह भावुक और स्वामिभक्त है। चाणक्य उसकी योग्यता पर मुग्ध है। इसलिए स्वयं प्रधानमंत्री न बनकर वह राक्षस को ही इस पद पर बैठाने के लिए प्रयत्न करता है। संस्कृत के सभी नाटकों की अपेक्षा कथानक की सुव्यवस्थित अन्विति में यह नाटक आगे है। घटनाएँ योजना के अनुसार चलती हैं। उनमें विलक्षण सजावट है। अन्त में राक्षस का मन्त्रीपद स्वीकार करना सभी के लिए लाभदायक होता है; पाटलिपुत्र का राज्य, योग्य राजा और योग्य मन्त्री पाकर दृढ़ होता है। इस प्रकार चाणक्य का त्याग और राष्ट्रभक्ति भी इसमें प्रदर्शित है। इसमें प्रदर्शित कूटनीति आज के युग में भी अनुकरणीय है।

हर्ष के रूपक

राजा हर्ष या हर्षवर्धन का समय सातवीं शताब्दी ई. का पूर्वार्द्ध है। ये स्थाण्वीश्वर (कुरूक्षेत्र के पास) के इतिहास प्रसिद्ध राजा थे। उन्होंने बाण, मयूर आदि कवियों को आश्रय दिया था। इनके समय में चीनी यात्री ह्वेनसांग भारत आया था। इन्होंने तीन रूपक लिखे, जिनमें दो नाटिकाएँ हैं— *प्रियदर्शिका* और *रत्नावली* तथा एक नाटक है। नागानन्द

- **प्रियदर्शिका**— *प्रियदर्शिका* और रत्नावली एक ही प्रकार की कथावस्तु पर आश्रित नाटिकाएँ हैं। प्रत्येक में चार अंक हैं। दोनों के नायक उदयन हैं, परन्तु नायिका पृथक्-पृथक् हैं। *प्रियदर्शिका* नाटिका में प्रेमिका का नाम आरण्यका है, जो बाद में *प्रियदर्शिका* कही जाती है। राजा उदयन महारानी के भय से छिप-छिपकर नायिका से मिलता है। नायिका राजप्रासाद में ही शरणागत के रूप में रहती है। विदूषक राजा के प्रेम-व्यापार में सहायक होता है।
- **रत्नावली**— इस नाटिका की नायिका सागरिका है, क्योंकि उसकी रक्षा सागर से की गई थी। यही बाद में *रत्नावली* कही जाती है। उदयन का चरित्र धीरललित नायक का है, जो निश्चिन्त, कला-प्रेमी तथा सुखजीवी है। ऐसा प्रतीत होता है कि *प्रियदर्शिका*

Chapter-9.indd 91 12-08-2016 2:11:33 PM

नाटिका का संशोधन करने के लिए हर्ष ने रत्नावली की रचना की थी। दोनों पर कालिदास के *मालविकाग्निमित्र* का बहुत प्रभाव है।

- **नागानन्द**— यह दोनों से कथानक और प्रभाव में भिन्न है। यह जीमूतवाहन की कथा से सम्बद्ध है। इसमें पांच अंक हैं। इसके पूर्वार्द्ध में जीमूतवाहन और मलयवती की प्रेम-कथा का वर्णन है, किन्तु उत्तरार्द्ध में जीमूतवाहन के आत्मत्याग की कथा है। वह गरुड़ से नाग की रक्षा करता है और शंखचूड़ के स्थान पर स्वयं गरुड़ का भक्ष्य बनता है। गरुड़ उसके त्याग से प्रसन्न होकर सभी नागों को जीवित कर देते हैं। इस प्रकार यह महायान बौद्ध धर्म के आदर्श के अनुकूल बोधिसत्त्व की कथा को नाटक के रूप में प्रस्तुत करता है। मानव-जाति को अहिंसा की शिक्षा देना इसका उद्देश्य है। इस नाटक को हर्ष ने उस समय लिखा था, जब वे बौद्ध मत स्वीकार कर चुके थे। बौद्धों के बीच इस नाटक का बहुत प्रचार रहा है। नाटक दु:खान्त रूप धारण कर लेता, किन्तु गौरी देवी के दिव्य प्रसाद की कथा के समावेश से सुखान्त बन जाता है।

हर्ष ने अपने रूपकों को सरल भाषा में प्रसादगुण से युक्त शैली में लिखा है। उन्होंने जहाँ नाटिकाओं में शृंगार रस की धारा बहायी है, वहाँ *नागानन्द* में शान्त रस को मुख्य रस रखा है। कला और कथानक की दृष्टि से उत्कृष्ट न होने पर भी ऐतिहासिक दृष्टि से हर्ष के रूपकों का महत्त्व है। नाट्य-संविधान की दृष्टि से *रत्नावली* बहुत महत्त्व रखती है, क्योंकि काव्यशास्त्र के आचार्यों ने इस नाटिका के अनेक स्थलों को प्रचुर मात्रा में उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है।

भवभूति के रूपक

भवभूति कालिदास के बाद दूसरे उत्कृष्ट नाटककार माने जाते हैं। सभी नाटककारों की अपेक्षा उन्होंने अपने विषय में अधिक सूचना दी है। वे विदर्भ-प्रदेश के निवासी थे। वे *यजुर्वेद* की तैत्तिरीय शाखा के अध्येता ब्राह्मण-वंश में उत्पन्न हुए थे। उनका दूसरा नाम श्रीकण्ठ था। उनका समय 700 ई. के आसपास माना जाता है। भवभूति कई शास्त्रों के पण्डित तथा अद्भुत शैलीकार थे। इन्होंने तीन रूपक लिखे जिनमें *महावीरचरित* और *उत्तररामचरित* राम की कथा पर आश्रित नाटक हैं, *मालतीमाधव* प्रकरण है।

- **महावीरचरित**— इसमें सीता-विवाह से आरम्भ करके राज्याभिषेक तक राम के जीवन की घटनाएँ सात अंकों में वर्णित हैं। इसका प्रमुख विषय है राम को नष्ट करने के लिए किए गए रावण के प्रयत्नों की विफलता तथा राम का सकुशल अयोध्या

Chapter-9.indd 92 12-08-2016 2:11:33 PM

लौट आना। नाटक की कथावस्तु राम-रावण के बीच राजनीतिक षड्यन्त्र के आधार पर विकसित हुई है। इसमें रावण का मन्त्री माल्यवान् महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। रावण का राम के प्रति क्रोध तभी से है, जब उसे सीता और जनक द्वारा सीता के वर के रूप में अस्वीकार कर दिया गया था। अन्य राक्षसों के वध से रावण बौखला उठता है। परशुराम और बालि की कथाएँ राम को नष्ट करने की माल्यवान् की योजना का अंश हैं। राम को वनवास दिलाने में मन्थरा वेश में शूर्पणखा कैकेयी के पास जाती है। यह भी भवभूति की कल्पना है। अन्त में रावण और माल्यवान् की युद्धनीति विफल हो जाती है। इस नाटक में भवभूति नाटककार से अधिक कवि के रूप में प्रकट होते हैं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के प्रभाव में रहकर भवभूति ने इसकी रचना की है। इसलिए राजनीतिक षड्यन्त्र और नाट्यकला में सामंजस्य नहीं रह पाया है।

- **मालतीमाधव**— यह 10 अंकों का एक प्रकरण है। इसमें भूरिवसु की पुत्री मालती तथा देवरात के पुत्र माधव के विवाह की मुख्य कथा है। दोनों के विवाह का निश्चय उन दोनों के पिता तभी कर चुके थे, जब वे स्वयं विद्यार्थी थे, किन्तु वे अपनी योजना कार्यान्वित नहीं कर सके थे। कारण यह था कि भूरिवसु जिस राजा का मन्त्री था, वह राजा मालती का विवाह अपने चचेरे भाई नन्दन के साथ कराना चाहता था। इसलिए कामन्दकी नामक योगिनी को मालती और माधव के विवाह का भार दिया जाता है। इसके साथ-साथ मकरन्द और मदयन्तिका का प्रेम-प्रसंग भी चलता है। यहाँ मुख्य प्रेमी गौण हो गए हैं और गौण प्रेमी अधिक रोचक हो गए हैं। मालती का अपहरण कापालिकों द्वारा किया जाता है और अघोरघण्ट नामक कापालिक मालती की बलि देने की तैयारी करता है। संयोगवश माधव अघोरघण्ट को मारकर मालती को बचा लेता है। उन दोनों का गुप्त विवाह हो जाता है। उधर मकरन्द का मालती के वेश में नन्दन से विवाह कराया जाता है, जिससे नाटक में हास्य-तत्त्व की सृष्टि होती है।

भवभूति इस नाटक की रचना में कामशास्त्र तथा नाट्यशास्त्र के प्रभाव में थे। इसीलिए उन्होंने प्रेम की सभी सूक्ष्म अवस्थाओं का वर्णन किया है तथा विभिन्न रसों के परिपाक का भी प्रयास किया है। इस नाटक में शृंगार मुख्य रस है, किन्तु भयानक, अद्भुत, रौद्र आदि रस भी यथेष्ट हैं। श्मशान, तान्त्रिक साधना आदि का निरूपण इसमें बहुत रोचक और काव्यात्मक है।

Chapter-9.indd 93 12-08-2016 2:11:33 PM

- **उत्तररामचरित**— यह भवभूति का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। **उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते**। इसमें राम के उत्तरवर्ती जीवन के करुण पक्ष का नाट्य रूप प्रस्तुत किया गया है। इसमें सात अंक हैं। रावण को मारकर जब राम अयोध्या लौटते हैं, तब उनके सुख के दिन क्षणिक रूप में आते हैं, क्योंकि वे गुप्तचर से सीता के विषय में लोकापवाद सुनते हैं। राम के आदेश से लक्ष्मण सीता को गंगा तट पर वन में छोड़ देते हैं। सीता गर्भवती हैं। वह वाल्मीकि के आश्रम में पहुँच जाती हैं, जहाँ उनके कुश और लव दो पुत्र होते हैं। राम सीता के त्याग से भीतर-ही-भीतर घुटते रहते हैं, किन्तु अपने दु:ख को प्रकट नहीं कर पाते। शम्बूक का वध करने के लिए वे दण्डकारण्य पहुँचते हैं, जहाँ पंचवटी के दृश्य को देखकर विह्वल हो उठते हैं। भवभूति ने इस नाटक के तृतीय अंक में छाया-दृश्य की योजना की है, जिसमें सीता अदृश्य राम को देखती है। राम का भीतरी भाव यहाँ मुक्त रूप से प्रकट होता है। राम अयोध्या में अश्वमेध यज्ञ करते हैं। यज्ञ का अश्व भ्रमण करते हुए वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचता है, जहाँ लव उसे पकड़ लेता है। लक्ष्मण का पुत्र चन्द्रकेतु अश्वरक्षक है, इसलिए लव से उसका युद्ध होता है। लव जृम्भास्त्र का प्रयोग करता है, जिससे राम की सेना सो जाती है। राम स्वयं युद्धभूमि में आकर अपने पुत्रों को पहचानते हैं। सप्तम अंक में अयोध्या में वाल्मीकि द्वारा रचित रामविषयक नाटक का अभिनय होता है, जिसमें सीता के परित्याग के बाद की घटनाएँ दिखाई जाती हैं। नाटक के बीच नाटक का यह प्रयोग गर्भनाटक कहलाता है। इसमें सीता को लोकापवाद से मुक्त करके राम से मिला दिया जाता है। इस प्रकार नाटक की सुखद परिणति होती है।

इस नाटक में भवभूति ने नाट्य तथा काव्य का अद्भुत सामंजस्य दिखाया है। इस नाटक का कथानक करुण रस से भरा है। इसमें निम्न कोटि का हास्य बिल्कुल नहीं है। *अभिज्ञानशाकुन्तल* में जहाँ आनन्द और सौन्दर्य का वातावरण है, वहाँ *उत्तररामचरित* गम्भीर और कारुणिक वातावरण प्रस्तुत करता है। इसलिए इस नाटक में वर्णित प्रकृति भी भयावह और विस्मय उत्पन्न करने वाली है। गम्भीरता, आध्यात्मिकता और दाम्पत्य-प्रेम की उदात्तता में भवभूति अद्वितीय हैं।

अपने तीन रूपकों में भवभूति एक योजना के अनुसार काम करते हैं। *महावीरचरित* जहाँ जीवन के प्रथम चरण से सम्बद्ध नायक और नायिका को चुनकर वीर रस को मुख्य रस बनाता है, वहाँ *मालतीमाधव* नायक-नायिका और शृङ्गार रस को प्रमुखता देता है।

Chapter-9.indd 94 12-08-2016 2:11:33 PM

उत्तररामचरित में नायक-नायिका की प्रौढ़ावस्था के कारण करुण रस को चुना गया है। इस प्रकार सम्पूर्ण जीवन को उन्होंने तीन नाटकों में व्यवस्थित किया है।

भट्टनारायण का वेणीसंहार

इसके लेखक भट्टनारायण हैं। इनका समय सातवीं या आठवीं शताब्दी ई. है। भट्टनारायण बंगाल के राजा आदिशूर के द्वारा निमन्त्रित पाँच कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में से एक थे। वेणीसंहार छ: अंकों का वीर रस प्रधान नाटक है। इसका कथानक *महाभारत* पर आश्रित है। दु:शासन द्वारा हाथों से घसीटकर द्यूतभवन में लाई गई द्रौपदी की वेणी (खुले केश) का दु:शासनवध के बाद भीम द्वारा रक्त-रंजित हाथों से बाँधा जाना इस नाटक का मुख्य कथानक है, जिससे इसका नामकरण भी हुआ है। भीम ने प्रतिज्ञा की थी कि जिस वेणी को दु:शासन ने खींचा है, उसे उसी के रक्त से रंजित हाथों से मैं बाँधूंगा। बहुत बड़ा कथानक हो जाने से कहीं-कहीं इसका स्वरूप कथात्मक हो गया है। भट्टनारायण ने भीम, द्रौपदी, कर्ण तथा अश्वत्थामा के चरित्र-चित्रण बहुत कुशलतापूर्वक किए हैं। नाटक के बीच में दुर्योधन और भानुमती के प्रेम का दृश्य बहुत प्रभावपूर्ण है, किन्तु विद्वानों ने नाटक के वीर रस प्रधान वातावरण में इसे अनुचित कहा है।

कथानक के संयोजन में नाटककार कोई योगदान नहीं कर सका है, किन्तु कुछ रोचक और प्रभावपूर्ण दृश्य उसने अवश्य दिए हैं। भट्टनारायण की शैली ओजोगुण से परिपूर्ण गौडी है, जिसमें लम्बे समास भरे हैं। वीर रस प्रधान होने के कारण इसकी बहुत प्रसिद्धि है। नाट्यशास्त्रियों ने इससे बहुत उद्धरण दिए हैं।

अन्य नाटक

संस्कृत भाषा में लिखे गए नाटकों की संख्या हजार से भी अधिक है। इसमें प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है। रूपकों के विभिन्न भेदों की रचना संस्कृत में होती रही है। इस प्रकार प्रकरण, भाण, प्रहसन, व्यायोग इत्यादि विविध रूपकों का लेखन होता रहा है। सर्वाधिक प्रचलित रूपक नाटक ही है। संस्कृत में कुछ नाटक प्रतीकात्मक भी हैं, जो भावात्मक विषयों को (जैसे— मोह, काम, क्रोध, विवेक, शान्ति, भक्ति) पात्र बनाकर लिखे गए हैं। ऐसे नाटकों में जयन्त भट्ट (नवीं शताब्दी ई.) का *आगमडम्बर* अथवा *षण्मतनाटक*, कृष्णमिश्र (ग्यारहवी शताब्दी ई.) का *प्रबोधचन्द्रोदय*, यश:पाल (तेरहवीं शताब्दी ई.) का *मोहराजपराजय*, वेदान्तदेशिक (चौदहवीं शताब्दी ई.) का *संकल्पसूर्योदय*, कर्णपूर (सोलहवीं शताब्दी ई.) का *चैतन्यचन्द्रोदय* इत्यादि प्रमुख हैं।

Chapter-9.indd 95 12-08-2016 2:11:33 PM

भट्टनारायण के बाद जितने नाटककार हुए, उन्होंने प्राय: लक्षण-ग्रन्थों के आधार पर नाटक लिखे। इससे इस विधा का स्वाभाविक विकास समाप्त हो गया। ऐसे नाटककारों में मुरारि *(अनर्घराघव)*, दामोदर मिश्र *(हनुमन्नाटक)*, राजशेखर *(बालरामायण, बालभारत, कर्पूरमञ्जरी* तथा *विद्धशालभञ्जिका* इत्यादि प्रमुख हैं।

प्राचीन काल के चार भाणों का एक संग्रह मद्रास से 1922 ई. में प्रकाशित हुआ था। इसमें शूद्रक का पद्मप्राभृतक, वररुचि की *उभयाभिसारिका*, ईश्वरदत्त का *धूर्तविटसंवाद* तथा श्यामिलक का *पादताडितक* भाण थे। इनमें समाज के तथाकथित उच्च-वर्ग की विरूपता तथा निम्न-वर्ग का सजीव और रोचक चित्रण है। सातवीं शताब्दी के पल्लव नरेश महेन्द्रविक्रम का *मत्तविलासप्रहसन* तात्कालिक धार्मिक पाखण्ड का वर्णन करता है। बारहवीं शताब्दी ई. के वत्सराज ने छ: प्रकार के रूपकों की रचना की थी। ये हैं— *किरातार्जुनीय* (व्यायोग), *रुक्मिणीहरण* (ईहामृग), *त्रिपुरदाह* (डिम), *समुद्रमन्थन* (समवकार), *कर्पूरचरित* (भाण) तथा *हास्यचूडामणि* (प्रहसन)। इसी प्रकार विभिन्न युगों में विभिन्न प्रकार के रूपक लिखे गए।

आधुनिक काल में संस्कृत नाटकों के कथानक में विविधता पाई जाती है। महापुरुषों की जीवनी, प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनाएँ, राजनीतिक व्यवस्थाएँ, सामाजिक कुरीतियाँ इत्यादि विविध विषयों के कथानक नाटकों में लिए जाते हैं।

Chapter-9.indd 96 12-08-2016 2:11:33 PM

ध्यातव्य बिन्दु

- रूपक दृश्य-काव्य का एक नाम है जिसके दस प्रकार हैं। रूपक के दस प्रकारों में नाटक सबसे प्रमुख है।
- आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक पौराणिक मतों को स्वीकार किया है। भरत मुनि के अनुसार ब्रह्मा ने नाट्य वेद को उत्पन्न किया और शङ्कर तथा पार्वती ने इसे समृद्ध किया।
- टी. गणपति शास्त्री ने भास के तेरह नाटकों की खोज की। जिसका विभाजन चार भागों में किया गया है—

(क) रामायण पर आश्रित—	1. प्रतिमा	2. अभिषेक
(ख) महाभारत पर आश्रित—	1. बालचरित	2. पञ्चरात्र
	3. मध्यमव्यायोग	4. दूतवाक्य
	5. दूतघटोत्कच	6. कर्णभार
	7. ऊरुभंग	
(ग) उदयन की कथा पर आश्रित	1. स्वप्नवासवदत्त	
	2. प्रतिज्ञायौगन्धरायण	
(घ) कल्पित रूपक	1. अविमारक	2. चारुदत्त

- कालिदास के तीन प्रमुख नाटक हैं— *मालाविकाग्निमित्र, विक्रमोर्वशीय* और *अभिज्ञानशाकुन्तल*
- अश्वघोष के द्वारा रचित शारिपुत्र प्रकरण में शारिपुत्र और मौद्गलायन के द्वारा बौद्ध धर्म स्वीकार किए जाने की कथा है।
- शूद्रक-रचित *मृच्छकटिक* दस अंकों का सामाजिक रूपक है।
- विशाखदत्त द्वारा रचित *मुद्राराक्षस* सात अंकों का राजनीतिक नाटक है।
- हर्ष ने तीन रूपक लिखे थे, जिसमें दो नाटिकाएँ— *प्रियदर्शिका* और *रत्नावली* तथा एक नाटक *नागानन्द* है।
- भवभूति ने तीन रूपक लिखे हैं, जिनमें *महावीरचरित* और *उत्तररामचरित* राम की कथा पर आश्रित नाटक हैं और *मालतीमाधव* प्रकरण है।
- भट्टनारायण ने *वेणीसंहार* की रचना की जिसकी विषयवस्तु महाभारत पर आधारित है।
- संस्कृत भाषा में अन्य नाटकों की संख्या हजार से अधिक है।

Chapter-9.indd 97 12-08-2016 2:11:33 PM

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. रूपक किसे कहते हैं? उसके भेदों का उल्लेख कीजिए।
प्र. 2. रूपकों में नाटक का स्थान बताइए।
प्र. 3. संस्कृत नाटक का उद्भव कैसे हुआ?
प्र. 4. नाट्यशास्त्र का लेखक कौन है?
प्र. 5. रूपकों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में भरतमुनि ने क्या कहा है?
प्र. 6. *शारिपुत्रप्रकरण* को किस कथा के आधार पर लिखा गया?
प्र. 7. भास के सर्वाधिक प्रसिद्ध नाटक का नाम लिखिए।
प्र. 8. *मृच्छकटिक* किस प्रकार का रूपक माना जाता है? उसकी कथावस्तु का आधार क्या है?
प्र. 9. कालिदास ने कितने नाटक लिखे हैं? उनके नाम लिखिए।
प्र. 10. कालिदास का कौन-सा नाटक सारे संसार में प्रसिद्ध है और क्यों?
प्र. 11. *मुद्राराक्षस* नाटक की रचना किसने की? इसमें किन पात्रों के बीच संघर्ष हुआ?
प्र. 12. अन्य नाटकों और *मुद्राराक्षस* में क्या अन्तर है?
प्र. 13. भवभूति कौन थे? उनकी प्रसिद्धि का कारण बताइए।
प्र. 14. *उत्तररामचरित* में क्या वर्णन किया गया है? उसमें कितने अंक हैं?
प्र. 15. टिप्पणी लिखिए—
(क) गर्भनाटक
(ख) लव और कुश
(ग) चंद्रकेतु
(घ) वाल्मीकि
प्र. 16. हर्षवर्द्धन की सभा में कौन-कौन कवि थे?
प्र. 17. *प्रियदर्शिका* और *रत्नावली* नाटिकाएँ किसने लिखीं?
प्र. 18. भट्टनारायण किस समय में हुए? उनका कौन-सा नाटक प्रसिद्ध है?
प्र. 19. नीचे लिखे नाटकों के लेखकों के नाम लिखिए—
(क) प्रबोधचन्द्रोदय
(ख) मोहराजपराजय
(ग) प्रियदर्शिका
(घ) अनर्घराघव
(ङ) संकल्पसूर्योदय
(च) हनुमन्नाटक
प्र. 20. राजशेखर की रचनाएँ कौन-कौन सी हैं?
प्र. 21. वत्सराज ने कितने प्रकार के रूपकों की रचना की थी?
प्र. 22. आधुनिक संस्कृत नाटकों के कथानक किन विषयों पर आधारित हैं? स्पष्ट कीजिए।

Chapter-9.indd 98 12-08-2016 2:11:33 PM

दशम अध्याय

आधुनिक संस्कृत साहित्य

संस्कृत साहित्य की धारा निरन्तर प्रवाहित हो रही है। भारत में सम्राट् पृथ्वीराज के अनन्तर बारहवीं शताब्दी मुस्लिम शासनसत्ता स्थापित हो जाने के बाद राजदरबारों में अरबी-फारसी का वर्चस्व स्थापित हो गया, किन्तु संस्कृत में रचनाएँ होती ही रहीं। मुगलकाल में अनेक उत्कृष्ट महाकाव्य तथा अन्य रचनाएँ की गईं, जिनमें *आसफविलास:*, *जहाँगीरचरितम्*, *शेकशुभोदयम्*, *पारसीकप्रकाश:*, *चिमनीचरितम्* आदि मुख्य हैं।

कुछ विद्वानों का मानना है कि संस्कृत रचना का युग सत्रहवीं शताब्दी के साथ समाप्त हो गया। प्राय: लोग पण्डितराज जगन्नाथ को ही संस्कृत का अन्तिम कवि तथा अलंकारशास्त्री आचार्य मानते हैं। विद्वानों द्वारा लिखित संस्कृत साहित्य के इतिहास ग्रंथों ने इस भ्रान्ति को पुष्ट किया। ए.बी. कीथ, बलदेव उपाध्याय, चन्द्रशेखर पाण्डेय तथा कृष्णमाचारी आदि किसी भी लेखक ने अपने ग्रन्थ में उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी ई. की रचनाधर्मिता को सम्मिलित नहीं किया है। स्वातंत्र्योत्तर-काल में इस ओर विद्वानों का ध्यान गया है। अनेक सत्य उभर कर सामने आये हैं, जैसे—

1. पिछली शताब्दी (1901–2000 ई.) से अब तक संस्कृत में प्राय: 350 महाकाव्यों की सर्जना हुई है। कुछ महाकाव्य तो 64 और 84 सर्ग के भी हैं।
2. पाश्चात्त्य काव्यशास्त्र की अनेक लोकप्रिय विधाएँ— गीतिकाव्य (Lyrical Poetry), लघुकथा (Short Story), उपन्यास (Novel), एकांकी (One- act play) तथा सानेट आदि उन्नीसवीं शताब्दी ई. अर्थात् ब्रिटिश शासनकाल में ही संस्कृत में भी लोकप्रिय हुईं तथा रचनाधर्म के रूप में भी प्रतिष्ठित हो गईं।

पं. अम्बिकादत्त व्यास ने उन्नीसवीं शताब्दी में ही अपना प्रसिद्ध उपन्यास शिवराजविजय लिखा। हरिदास सिद्धान्तवागीश, मूलशंकर माणिक्यलाल याज्ञिक तथा मथुरानाथ दीक्षित के नाटकों की रचना भी अगले चरण में हुई। उमापति द्विवेदी, काशीनाथ तथा हरिदास सिद्धान्तवागीश के महाकाव्य (*पारिजातहरण*, *रुक्मिणीहरण*) भी इसी काल की रचनाएँ हैं।

आधुनिक संस्कृत साहित्य की तीसरी सबसे बड़ी विशेषता थी— व्यवस्था के प्रति विद्रोह। यह विद्रोह 1835 ई. में लागू लार्ड मैकाले की भाषा नीति का परिणाम था। ज्ञातव्य है कि प्रारम्भिक चरण में गवर्नर जनरल हेस्टिंग्ज तथा कार्नवालिस ने संस्कृत को ही राजभाषा पद पर रखा। शासकीय संरक्षण पाते ही संस्कृत की प्रसुप्त रचनाधर्मिता पुन: प्रबुद्ध हो उठी। चार्ल्स विल्किंस ने *गीता* को अंग्रेजी में अनूदित किया। अंग्रेजी व्याकरण को *इंगलैण्डीयव्याकरणसार:* के रूप में प्रस्तुत किया गया। *विवादसारार्णव:* नामक एक कानून का ग्रन्थ हेस्टिंग्ज ने तैयार करवाया तथा स्वयं उसे अंग्रेजी में भी अनूदित किया। कार्नवालिस ने काशी में अपने रेजिडेण्ट लार्ड जोनाथन डंकन की संस्तुति पर 1791 ई. में बनारस संस्कृत पाठशाला की स्थापना की, जो आज सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के नाम से प्रसिद्ध है।

परन्तु लार्ड मैकाले ने संस्कृत को ब्रिटिश राज्य के विस्तार में बाधक माना तथा इंग्लैण्ड की संसद से नई भाषा नीति पारित करा दी। अब अंग्रेजी राजभाषा बन गई। इसका सम्पूर्ण भारत में घोर विरोध हुआ। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, अप्पाशास्त्री राशिवडेकर, स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा महर्षि अरविन्द आदि ने समय-समय पर संस्कृत का पक्ष लेकर घोर संघर्ष किया।

उन्नीसवीं शताब्दी की संस्कृत कविता में यही संघर्ष व्यवस्था के प्रति विद्रोह के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। 1884 ई. में कांग्रेस की स्थापना के बाद यह संघर्ष 'स्वाधीनता संग्राम आन्दोलन' के रूप में परिवर्तित हो जाता है और सम्पूर्ण संस्कृत रचनाधर्मिता इसी एक बिन्दु पर केंद्रित हो उठती है।

कुछ लोग 'आधुनिक संस्कृत साहित्य' शीर्षक के औचित्य पर प्रश्न उठाते हैं। उनका तर्क यह है कि आधुनिकता किसका धर्म है? काल का अथवा साहित्य का? इसका उत्तर यही है कि अतीत, अनागत तथा वर्तमान— ये काल के ही धर्म हैं। परन्तु इन्हीं कालखण्डों से जुड़ा साहित्य भी उपचारवश प्राचीन, वर्तमान तथा भावी कहा जा सकता है। इस प्रकार 'आधुनिक संस्कृत साहित्य' का अर्थ हुआ आधुनिक काल से जुड़ा संस्कृत साहित्य।

अब दूसरा प्रश्न यह है कि 'आधुनिक काल' संस्कृत रचना में कब आया? इस सन्दर्भ में प्रो. राजेन्द्र मिश्र, डॉ. जगन्नाथपाठक एवं प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी आदि ने गहन विचार किया है। प्रो. राजेन्द्र मिश्र सन् 1784 ई. में सर विलियम जोन्स द्वारा अंग्रेजी में किए गए *अभिज्ञानशाकुन्तल* के अनुवाद से ही संस्कृत रचना में आधुनिक काल का अवतरण मानते हैं। इसके कई कारण हैं, जो क्रमश: प्रस्तुत हैं—

Chapter-10.indd 100 12-08-2016 2:45:08 PM

1. शाकुन्तल के अंग्रेजी अनुवाद से ही चिरकाल से अवरुद्ध संस्कृत रचनाधर्मिता का पुनरारम्भ हुआ। मौलिक सर्जना, समीक्षा, भाषान्तर तथा शोध की संभावना के द्वार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर खुले।
2. संस्कृत को विश्वभाषा (Universal Language) की मान्यता मिली।
3. संस्कृत रचना में, पारम्परिक प्रतिपाद्य का स्थान नवयुगीन चेतना ने ले लिया।
4. पाश्चात्त्य जगत् के काव्यशास्त्रीय मानदण्ड संस्कृत में घुलमिल कर एकाकार हो गए।
5. आधुनिक संस्कृत साहित्य प्राचीन काव्य शास्त्रीय निर्देशों, बन्धनों तथा लक्षणों से मुक्त होकर लिखा जाने लगा।
6. आधुनिक सर्जना भाषा की सरलता, नवयुगीन सामाजिक चेतना से जुड़ाव, अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं की समीक्षा तथा वैदेशिक छन्दों एवं काव्यविधाओं की स्वीकृति के कारण उत्तरोत्तर लोकप्रिय हुई है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य कविता, कहानी, नाट्य तथा समीक्षादि किसी भी क्षेत्र में भारत की अन्य भाषाओं में प्रणीत आधुनिक साहित्य के समक्ष अथवा उससे भी परतर प्रतीत होता है।

पहले सप्रमाण निरूपित किया गया है कि विगत एक सौ वर्षों की अवधि में संस्कृत साहित्य की सभी प्राचीन विधाओं के अतिरिक्त, पाश्चात्त्य साहित्य में प्रमुख विधाओं से भी प्रभावित साहित्य की रचना पर्याप्त परिमाण में हुई है। सम्पूर्ण भारत में विभिन्न विद्वानों तथा कवियों ने संस्कृत के सर्वांगपूर्ण विकास की दृष्टि से सहस्राधिक ग्रन्थों की रचना की है, जिनमें अनेक कृतियाँ प्रकाशित हैं। उन पर समीक्षा ग्रन्थ भी आधुनिक भाषाओं में लिखे गए हैं। यहाँ अब संस्कृत की मौलिक साहित्यिक कृतियों तथा उनके लेखकों का सामान्य निर्देश किया जा रहा है—

- **अर्वाचीन महाकाव्य**— साहित्यिक विधाओं में महाकाव्य रचना सबसे अधिक हुई है। न केवल प्राचीन कथानकों पर अपितु आधुनिक घटनाओं, महापुरुषों तथा ऐतिहासिक विषयों पर भी संस्कृत महाकाव्य प्राचीन लक्षणों का ध्यान रखते हुए लिखे गए हैं। उमापति द्विवेदी कृत *पारिजातहरण*; प्रभुनाथ शास्त्री कृत *गणपतिसम्भव*; कृष्ण प्रसाद शर्मा कृत *श्रीकृष्णचरितामृत*; विन्ध्येश्वरी प्रसाद कृत *कर्णार्जुनीय*; वसन्त त्र्यम्बक शेवडे कृत शुम्भवध; काशीनाथ द्विवेदी कृत रुक्मिणीहरण; रेवाप्रसाद

Chapter-10.indd 101 12-08-2016 2:45:08 PM

द्विवेदी कृत *सीताचरित*; राजेन्द्रमिश्र कृत *वामनावतरण* तथा *जानकीजीवन* इत्यादि प्राचीन कथाओं पर आधुनिक दृष्टिकोण से रचे गए महाकाव्य हैं।

अन्य कथानकों पर आश्रित महाकाव्यों में श्रीधर भास्कर वर्णेकर कृत *शिवराज्योदय*; उमाशंकर त्रिपाठी कृत *छत्रपतिचरित*; माधव श्रीहरि अणे कृत *तिलकयशोऽर्णव*; सत्यव्रतशास्त्री कृत *बोधिसत्त्वचरित* एवं *इन्दिरागान्धिचरित;* विश्वनाथ केशव छत्रे कृत *सुभाषचरित;* ब्रह्मानन्दशुक्ल कृत नेहरूचरित; साधुशरणमिश्र कृत गान्धिचरित; पद्मशास्त्री कृत *लेनिनामृत;* रेवाप्रसाद द्विवेदी कृत *स्वातन्त्र्यसम्भव;* वसन्त त्र्यम्बक शेवड़े कृत *स्वामिविवेकानन्दचरित;* रामकुबेर मालवीय कृत *मालवीयचरित;* हरिहरप्रसाद द्विवेदी कृत *गोस्वामितुलसीदासचरित;* द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री कृत *स्वराज्यविजय;* शिवगोविन्द त्रिपाठी कृत *गान्धिगौरव;* अमीरचन्द्रशास्त्री कृत *नेहरूचरित;* रामभद्राचार्य कृत *भार्गवराघवीय* ओगेटि परीक्षित शर्मा कृत *प्रतापरायनीय*; जी. बी. पलसुले कृत *वीरसावरकरचरित* इत्यादि उल्लेखनीय हैं।

- **खण्डकाव्य**— गीतिकाव्य आधुनिक काल में अपेक्षाकृत लघुकाव्य तथा गीत्यात्मक काव्य भी पर्याप्त रूप से लिखे गए हैं। संस्कृत पत्रिकाओं में प्रकाशित प्रकीर्ण काव्यों की संख्या भी निरंतर प्रवर्धमान है। कुछ गीतों तथा काव्यों में नवीन दृष्टि तथा छन्द के बन्धन को शिथिल करने की प्रवृत्ति भी प्राप्त होती है, फिर भी अधिसंख्य कवि प्राचीन छन्दों तथा गीतों के रूप में ही संस्कृत रचनाएँ करते हैं, भाव की दृष्टि से उनमें प्रत्यग्रता तथा नवीनता अवश्य रहती है। ऐसे काव्यों में विषयवस्तु का वैविध्य दिखाई पड़ता है।

आधुनिक खण्डकाव्यों में म. म. भट्टमथुरानाथशास्त्री कृत *गीतवैभव;* क्षमाराव कृत *सत्याग्रहगीता;* सत्यव्रत शास्त्री कृत *थाइदेशविलास*, *शर्मण्यदेश*, *सुतरां विभाति* (जर्मनी की यात्रा का वर्णन); आचार्यबच्चूलाल अवस्थी कृत *प्रतानिनी;* श्रीधर भास्कर वर्णेकर द्वारा रचित *भारतरत्नशतक*, *रामकृष्णपरमहंसीय, स्वातन्त्र्यवीरशतक* इत्यादि; जगन्नाथ पाठक कृत *कापिशायनी* एवं *आर्यासहस्राराम;* बटुकनाथ शास्त्री कृत *कल्लोलिनी;* शिवजी उपाध्याय कृत *शक्तिशतक* तथा *कुम्भशतक;* राधावल्लभ त्रिपाठी कृत *सम्प्लव, सन्धान, लहरीदशक, शारदापाद किङ्किणी* एवं आवाहन; भारतभारती तथा राजेन्द्रमिश्र प्रणीत वाग्वधूटी, मृद्वीका, श्रुतिम्भरा एवं मत्तवारणी; शालभञ्जिकादि; श्रीनिवास रथ कृत *तदेव गगनं सैव धरा*; भास्कराचार्य त्रिपाठी कृत, *लघुरघुकाव्य;* हरिदत्तशर्मा कृत

Chapter-10.indd 102 12-08-2016 2:45:08 PM

गीतकन्दलिका, उत्कलिका, *लसल्लतिका* एवं *निर्झरिणी* जनार्दन प्रसाद पाण्डेयमणि कृत *निस्यन्दिनी*, *रागिणी*; रमाकान्त शुक्ल कृत *भाति मे भारतम्*; इच्छाराम द्विवेदी कृत *गीतमन्दाकिनी;* हर्षदेव माधव कृत *निष्क्रान्ता:* सर्वे: कालोऽस्मि: रामसुमेर यादव कृत इन्दिरासौरभम्; निरञ्जन मिश्र कृत *केदारघाटी*, *विधवा वभूव* आदि उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक संस्कृत गीतिकारों में जानकीवल्लभ शास्त्री अपनी अभिनव दृष्टि के कारण विशेष उल्लेखनीय हैं। *काकली* (1935) इनकी गीतियों का सुन्दर सङ्कलन है। इनका अन्य काव्य *बन्दीमन्दिर* कालिदास के *मेघदूत* की भावदृष्टि से अनुप्राणित है। *मेघदूत* की अनुकृति पर दूतकाव्यों की रचना आधुनिक युग में भी पर्याप्त रूप से हुई है, जैसे— श्रीनारायणरथ कृत कपोतदूत; अभिराजराजेन्द्र कृत *मृगाङ्कदूत;* राजगोपाल आयंगर कृत *काकदूत;* दयानिधिमिश्र कृत *सूर्यदूत* इत्यादि। पण्डित रामावतार शर्मा ने *मेघदूत* के विडम्बनाकाव्य (Parody) के रूप में *मुद्गरदूत* की रचना 1910 ई. में की थी।

- **गद्यकाव्य**— आधुनिक गद्यकाव्य भाषा शैली की दृष्टि से कई धाराओं में विभक्त हैं। कुछ लेखक बाणभट्ट की पाञ्चाली शैली को अपना आदर्श मानते हैं, तो कुछ दण्डी की सरल तथा ललित पदावली में आस्था रखते हैं। कुछ लेखक सर्वथा अलंकार रहित विशुद्धोक्ति का विन्यास करते हैं। सामान्यत: आधुनिक संस्कृत निबन्धों में तथा कुछ लघुकथाओं में यही शैली मिलती है। राजेन्द्र मिश्र ने पुनर्नवा कथा संग्रह की भूमिका में आधुनिक गद्य-निर्मित के चार रूप निर्णीत किए हैं— लघुकथा, दीर्घकथा, कथानिका (कहानी) तथा उपन्यास (प्राचीन विधा की कथा तथा आख्यायिका)।

जहाँ तक गद्यकाव्य की विधाओं का प्रश्न है, इस विषय में आधुनिक संस्कृत गद्य लेखक पाश्चात्त्य साहित्यधारा से अधिक प्रभावित हैं। तदनुसार उपन्यास तथा लघुकथा जैसी विधाएँ संस्कृत में भी बहुत लोकप्रिय हैं। कथा एवं आख्यायिका के रूप में जो प्राचीन गद्य विधाएँ थीं, वे प्राय: उपेक्षित हैं।

आधुनिक संस्कृत गद्यकाव्यों में पण्डित अम्बिकादत्त व्यास लिखित *शिवराजविजय;* पंडिता क्षमाराव कृत *कथामुक्तावली* एवं *विचित्रपरिषद्यात्रा;* श्रीपाद हसूरकरकृत उपन्यास *दावानल, सिन्धुकन्या, अजातशत्रु* तथा *चैन्नम्मा;* मेधाव्रत रचित कुमुदिनीचन्द्र; श्रीकृष्ण गोस्वामी कृत *उद्वेजिनी* तथा *आम्रपाली;* केशवचन्द्रदाश कृत *शीतलतृष्णा, दिशा-विदिशा* आदि; रामजी उपाध्याय कृत *द्वासुपर्णा* तथा *पाथेय*; रामशरण त्रिपाठी कृत

कौमुदीकथाकल्लोलिनी (सिद्धान्तकौमुदी के नियमों के उदाहरणों के रूप में रचित); रामकरण शर्मा कृत *सीमा* तथा *रयीश;* मोहनलाल शर्मा कृत *पद्मिनी;* रामसुमेर कृत *बज्रमणि* उपन्यास इत्यादि प्रमुख हैं। संस्कृत लघुकथाओं के अनेक सङ्कलन प्रकाशित हैं, जिनमें राजेन्द्र मिश्र प्रणीत *चित्रपर्णी* उल्लेखनीय है। आधुनिक कथाकारों में राधावल्लभ त्रिपाठी, राजेन्द्र मिश्र, प्रभुनाथ द्विवेदी, प्रशस्यमित्र शास्त्री, बनमाली बिस्वाल, अशोक पुरनाटुकर आदि प्रमुख हैं।

- **आधुनिक नाट्य रचनाएँ**— आधुनिक संस्कृत साहित्यकारों ने विपुल मात्रा में संस्कृत नाट्यकृतियों की रचनाएँ की हैं। बहुत-सी रचनाओं का अभिनय भी विभिन्न विशिष्ट अवसरों पर होता रहता है। कुछ नाट्यकृतियाँ इसी उद्देश्य से लिखी गई हैं। इनमें कहीं-कहीं आधुनिक सामाजिक समस्याओं का भी चित्रण किया गया है। कुछ नाटकों की रचना आधुनिक तथा मध्यकालीन महापुरुषों के जीवनचरित को लेकर की गई हैं। अनेक नाटक प्राचीन कथाओं को भी अभिनव दृष्टि से प्रस्तुत करते हैं। प्रमुख संस्कृत रूपकों में मथुरा प्रसाद दीक्षित कृत *वीरप्रताप, शंकरविजय, गान्धिविजय* एवं भारतविजय; हरिदाससिद्धान्तवागीश कृत *मेवाड़प्रताप, बंगीयप्रताप* एवं *शिवाजीचरित*; रामजी उपाध्याय कृत सीताभ्युदय एवं *कैकेयीविजय*; रेवाप्रसाद द्विवेदी कृत *यूथिका, सप्तर्षि-कांग्रेस*; वासुदेव द्विवेदी कृत *भोजराजसंस्कृतसाम्राज्य;* राजेन्द्र मिश्र कृत *प्रमद्वरा*, *विद्योत्तमा*, *प्रशान्तराघव* तथा *लीलाभोजराम, चतुष्पथीय* आदि राधावल्लभत्रिपाठी कृत *प्रेमपीयूष तण्डुलप्रस्थीय, प्रेक्षणसप्तक* (एकांकी) आदि हैं। दीपक भट्टाचार्य कृत *धरित्रीपति-निर्वाचन* (राजनीति की मूल्यहीनता पर आधारित); वीरेन्द्रकुमारभट्टाचार्य कृत *शार्दूलशकट, वेष्टनव्यायोग* (घेराव और हड़ताल पर आश्रित), *लक्षणव्यायोग* (नक्सलवाद का चित्रण), *शरणार्थिसंवाद* (बांग्लादेशी शरणार्थी समस्या पर) तथा शिवजी उपाध्याय कृत *यौतक* (दहेज पर आधारित), *स्वातन्त्र्यशौर्य, प्रतिभापलायन, कालकूट* (ड्रग्स पर आश्रित) विषयवस्तु की नवीनता की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। राजेन्द्र मिश्र कृत *प्रत्यक्षरौरव* में अपराध समस्या, *क्रीतानन्द* में भिक्षा समस्या, *वादनिर्णयन* में झूठे मुकदमों की समस्या तथा *स्वयंवरकेन्द्र* में कन्या विवाह समस्या पर प्रकाश डाला है। कुछ लेखकों ने बहुत अधिक संख्या में एकांकी नाटक, प्रहसन इत्यादि के द्वारा संस्कृत नाट्यसाहित्य को समृद्ध किया है, उदाहरणार्थ— राजेन्द्रमिश्र ने लगभग 75 ऐतिहासिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा व्यंग्यात्मक एकांकी लिखे हैं। हास्य-व्यंग्य-प्रधान प्रहसनों में

Chapter-10.indd 104 12-08-2016 2:45:08 PM

वेंकटाचलम् कृत *विकटकवि*; के.के.आर. नायर कृत *आलस्यकर्मीय;* बटुकनाथ शर्मा कृत *पाण्डित्यताण्डव*; मधुसूदन कृत *पण्डितचरितप्रहसन;* महालिंगशास्त्री *कृत मर्कटमर्दलिका*; राधावल्लभ कृत *मशकधानी*; राजेन्द्रमिश्र कृत नवरसप्रहसन, मण्डूकप्रहसन, इन्द्रजाल तथा वाणीघटकमेलक इत्यादि प्रमुख हैं। संस्कृत नाट्यों की प्रस्तुति आकाशवाणी तथा दूरदर्शन जैसे संचार-साधनों के द्वारा निरन्तर होती रहती है। आदि शंकराचार्य तथा *भगवद्गीता* जैसे पूर्ण चलचित्रों का संस्कृत में निर्माण करके संस्कृत की जनप्रियता की सिद्धि श्री जी.वी. नैयर ने सम्यक् रूप से की है।

- **पत्र-पत्रिकाएँ**— आधुनिक संस्कृत साहित्य को संस्कृत पत्रकारिता का बहुत बड़ा योगदान है। इस समय संस्कृत पत्रकारिता अपने शिखर पर पहुँच चुकी है। वस्तुत: संस्कृत पत्रकारिता अन्य भाषाओं की तुलना में कुछ विशिष्ट महत्त्व रखता है। संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से ही आज कन्याकुमारी से हिमालय तक भारत सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, भौगोलिक ऐक्यक अनुभव कर रहा है। संस्कृतपत्रकारिता का आविर्भाव उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में (वर्ष 1866) हुआ। काशी के क्वीसिंह कॉलेज के प्राचार्य सर ग्रिफिथ ने *काशीविद्यासुधानिधि* नामक पत्रिका (जिसका प्रचलित नाम 'पण्डितपत्रिका' था) का शुभारम्भ किया। किन्तु इस पत्रिका के माध्यम से केवल आङ्ल दार्शनिक ग्रन्थों तथा अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का संस्कृतानुवाद अथवा विशिष्ट विषय-प्रतिपादक अन्य ग्रन्थ ही प्रकाशित होते थे। वस्तुत: इस पत्रिका का प्रमुख उद्देश्य था दुर्लभ एवं अप्रकाशित ग्रन्थों का प्रकाशन। इस पत्रिका में अनेक प्राचीन प्रामाणिक संस्कृत ग्रन्थ प्रकाशित हैं। इस प्रकार पत्रकारिता के अनेक विशिष्ट लक्षण इस पत्रिका में दृष्टिगोचर नहीं होते थे।

  अत: संस्कृत पत्रकारिता का उद्भव वर्ष 1873 में पंडित हृषिकेश भट्टाचार्य के सम्पादकत्वन में लाहौर से प्रकाशित *विद्योदय* नामक मासिक पत्र से हुआ मानना अधिक युक्तिसंगत है। यही मासिक पत्रिका बाद में बङ्गप्रदेश से प्रकाशित हुई, जिसके माध्यम से कविता, कथा, ललित निबन्ध, समाचार-पत्र आदि का प्रकाशन होने लगा। इसी वर्ष पटना-जनपद के बांकीपुर से दामोदर शास्त्री ने *विद्यार्थी* नामक संस्कृत-मासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया। इतिहास विदों का मानना है कि वर्ष 1875 में *षड्-दर्शनचिन्तंनिका, प्रयागधर्म-प्रकाश:, षड्धर्मामृतवर्षिणी* आदि तीन पत्रिकाओं का प्रकाशन होने लगा।

Chapter-10.indd 105 12-08-2016 2:45:08 PM

वर्ष 1879 में *कामधेनुः*, वर्ष 1881 में *विद्यार्थी*, वर्ष 1882 में *काव्य नाटकादर्श*, वर्ष 1885 में *ब्रह्मविद्या*, वर्ष 1888 में *विद्यामार्तण्डः*, *ग्रन्थमाला* और *आर्यसिद्धान्ताः* नाम से तीन संस्कृत-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुई। इसके बाद वर्ष 1888 में केरल से *विज्ञान-चिन्तामणिः* 1889 में *उषा*, वर्ष 1891 में *मानवधर्म-प्रकाशः*, वर्ष 1893 में *संस्कृत-चन्द्रिका*, वर्ष 1895 में *कविः*, वर्ष 1899 में *शास्त्रहमुक्तावली*, वर्ष 1900 में *देवगोष्ठी*, *विद्यार्थिचिन्तामणिः* वर्ष 1901 में *भारतधर्मः*, *ग्रन्थप्रदर्शिनी*, *श्रीकाशी* वर्ष 1902 में *रसिकरञ्जिनी*, वर्ष 1903 में काशी से *सूक्तिसुधा*, वर्ष 1904 में *मित्रगोष्ठीष*, वर्ष 1904 में जयपुर से *संस्कृंतरत्नोकरः*, वर्ष 1905 में *मिथिलामोदः, विशिष्टाद्वैतिनी* और *विद्वद्गोष्ठीर* वर्ष 1906 में *सूनृतवादिनी* नामक साप्ताहिक संस्कृत पत्रिका काशी से प्रकाशित हुईं। इसी वर्ष *केरल-ग्रन्थमाला, सद्धर्मः, प्रकटनपत्रिकाएँ, वीरशैवप्रभाकरः, बालमनोरमा, विद्यावती, वीरशैवमतप्रकाशः, विश्श्रुतम्, विद्वन्म्नोरञ्जनी* इत्यादि संस्कृत-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं। 1 जून 1907 में त्रिवेन्द्रम से *जयन्तीं* नामक प्रथम संस्कृत-दिनपत्र का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसी वर्ष *षड्दर्शिनी*, 'संस्कृरतम्' नामक पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

वर्ष 1914 में *बहुश्रुतम्*, वर्ष 1915 में *गीर्वाणभारती,* वर्ष 1918 में *संस्कृत साहित्य परिषद्*, वर्ष 1927 में काशी से *ब्राह्मण-महासम्मेलनम्* वर्ष 1934 में *संस्कृतपद्यवाणी*, हैदराबाद से, *कौमुदी* बङ्गल के धुलजोड़ा से *संस्कृत-साहित्यम्,* वर्ष 1935 में बेलगाम से *मधुरवाणी* कोलकाता से *मञ्जूषा* वर्ष 1936 में हरिद्वार से *दिवाकर*, वर्ष 1937 में मुम्बुई के भारतीयविद्याभवन से *भारतीविद्या* वर्ष 1939 में *ज्योमतिष्म्ती* नाम से सचित्र हास्य परक संस्कृतपत्र प्रकाशित हुए। वर्ष 1941 में *अमृतवाणी* नाम से वार्षिक पत्रिका बैंगलूरू से प्रकाशित हुई। वर्ष 1942 में *सरस्वशतीसुमनः* नाम से वाराणसेय-संस्कृति-विश्वविद्यालय से एक संस्कृत पत्रिका प्रकाशित हुई। वर्ष 1944 में काशी से *अमरभारती* नाम से पत्रिका प्रकाशित हुई, जिसका मुख्य उद्देश्य था राष्ट्रभाषा रूप में संस्कृत को ही प्रतिष्ठापित करना। वर्ष 1947 में *वार्तापत्र-अन्वी क्षणसमिति* (Press Enquiry Committee) की संरचना हुई। इस समिति द्वारा आदिष्ट् था कि संविधान सभा के 'मौलिक अधिकारों' को ध्यान में रख कर वार्तापत्रों की नियमावली की समीक्षा करनी होगी।

Chapter-10.indd 106 12-08-2016 2:45:08 PM

इस प्रकार ऊपर वर्णित इन प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में राष्ट्र के संस्कृत कवि, लेखक एवं पत्रकारों के कथा-साहित्य प्रकाशित हुए। भारत में सर्वप्रथम संस्कृत-पत्रिकाओं का विवरण डा. अर्नेस्ट हास ने दिया पत्रिकाओं का सामान्य परिचय देकर। बाद में मैक्समूलर ने स्व्कीय ग्रन्थ में संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन विषय का उल्लेख किया। उन्होंने लिखा कि "संस्कृत ही एक ऐसी भाषा है जो आज भी देश के एक प्रदेश से अन्य प्रदेश तक लोगों के द्वारा बोली एवं समझी जाती है।" एल.डी. बर्नेट् ने अपने ग्रन्थ में पत्र-पत्रिकाओं का यथाशक्य विवरण दिया, जो वर्ष 1886 ई. से 1928 ई. तक प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं का ही है।

विपुलता की दृष्टि से तथा विविधता की दृष्टि से आधुनिक संस्कृत लेखनों को नवीन स्वरूप प्रदान करने का कार्य जो इन पत्रिकाओं ने किया। उनके विशिष्ट संकेत हम इन तथ्यों से पा सकते हैं कि हमारे पास कुछ इस प्रकार की विद्या थी जो पूर्व से अज्ञात थी परन्तु पत्रकारिता के कारण संस्कृत भाषा में प्रसिद्धि पाईं। पुस्तक समीक्षा कार्य, समाचार समीक्षा कार्य, ललित निबन्ध लेखन कार्य, व्यंग्य-विनोद लेखन कार्य आदि विविध कार्य पत्रकारिता का ही फलस्वरूप हैं। विद्वानों का मानना है कि व्यंग्य विनोद-लेखन का प्रारंभ जयपुर से प्रकाशित *संस्कृत रत्नाकर:* के माध्यम से सम्पादक स्व. भट्टमथुरानाथ शास्त्री ने किया है। शास्त्री जी ने पत्रिका के रिक्तस्थानों में विनोदवाटिका इस शीर्षक से व्यंग्य-विनोद लेखन का प्रकाशन प्रारम्भ किया था। इस प्रकार विश्व में कार्टूनों का स्थान शिखर प्राप्त है, पर वह पत्रकारिता का ही अभूतपूर्व फल है। कार्टून एवं हास्य-विनोद आदि विनोदविधा ने आधुनिक संस्कृत साहित्य में किसी एक विधा का प्रतिनिधित्व करते हुए गौरवास्पद स्थान प्राप्त किए हैं।

आधुनिक स्वतन्त्र भारत में संस्कृत पत्रकारिता के क्षेत्र में अनेक नूतन मासिक, द्वैमासिक, साप्ताहिक, पाक्षिक संस्कृत-पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। पर स्वतन्त्रतापूर्व काल में ऐसी स्थिति नहीं रही। संस्कृत में दैनिक वार्तापत्र का प्रकाशन सर्वथा दुष्कर कार्य था। तथापि 1 जनवरी 1907 से *जयन्ती* नामक प्रथम संस्कृत दिनपत्र केरल के त्रिवेन्द्रम नगर से प्रकाशित हुआ। कोमल मारुताचार्य और लक्ष्मी नन्द स्वामी इस संस्कृत दैनिकपत्र के सम्पादक रहे। किन्तु अर्थाभाव के कारण कुछ दिनों के बाद ही इस पत्र का प्रकाशन स्थगित हो गया।

Chapter-10.indd 107 12-08-2016 2:45:09 PM

अब तक अपने ही देश में 300 से अधिक संस्कृत पत्रिकाएँ (जिन में से कुछ ऑनलाइन भी हैं) संस्कृत भाषा में प्रकाशित हो चुकी हैं। उनमें से 100 से अधिक तो आज की तिथि में प्रकाशित हो रही हैं और पढ़ी भी जा रही हैं। इनमें से कुछ पत्रिकाएँ वार्षिक हैं तो कुछ दैनिक भी हैं। स्वातन्त्र्योत्तरकाल में संस्कृत पत्रकारिता के क्षेत्र में दैनिक (मैसूर से *सुधर्मा*, कानपुर से *नवप्रभातम्* आदि), साप्ताहिक (वाराणसी से गाण्डीवम्, अयोध्या से *संस्कृत-साकेतम्* आदि), पाक्षिक (मुम्बई से संविद, *संस्कृतभवितव्यतम्* आदि), मासिक (जयपुर से भारती, बेंगलुरू से *सम्भाषणसन्देश:*, लखनऊ से सर्वगन्धा, वाराणसी से *सूर्योदय:* आदि), द्वैमासिक (वालेशोर से *अमृतभाषा*, पुरी से *लोकभाषासुश्री* आदि), त्रैमासिक (जयपुर से *स्वररमङ्गला*, लखनऊ से *अजस्रा* आदि), षाण्मासिक (प्रयाग से *कथासरित्* तथा भोपाल से *पद्यबन्ध* आदि) तथा वार्षिक (नई दिल्ली से संस्कृत *प्रतिभा* आदि) संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन नियमित हो रहा है। प्रयाग से ही 1999 से आज तक आधुनिक संस्कृत साहित्य की समीक्षा पत्रिका प्रकाशित हो रही है। इसके अतिरिक्त 100 से अधिक शोधपत्रिकाएँ हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत तीनों भाषाओं में प्रकाशित हो रही हैं।

Chapter-10.indd 108 12-08-2016 2:45:09 PM

ध्यातव्य बिन्दु

- पण्डितराज जगन्नाथ (सत्तरहवीं शताब्दी ई.) के बाद भी रचनाकार्य आज तक जारी है।
- फ़ारसी और अंग्रेजी को राजभाषा पद मिलने एवं राष्ट्रीय संरक्षण के अभाव में संस्कृत रचना में शैथिल्य।
- वृहद भारतीय जनता के संस्कृत से अनुराग के कारण संस्कृत की प्रतिष्ठा में निरन्तरता।
- बिहार, बंगाल व ओडिशा में ब्रिटिश शासकों द्वारा संस्कृत को राजभाषा पद की प्राप्ति।
- 1784 ई. में सर विलियम जोन्स द्वारा कालिदास के नाटक अभिज्ञानशाकुन्तल का अंग्रेजी में अनुवाद तथा यहीं से संस्कृत का आधुनिक काल आरम्भ।
- 1793 ई. में जॉन फोस्टर द्वारा जोन्स के अनुवाद का जर्मन भाषा में रूपान्तर।
- जर्मन कवि गेटे द्वारा शाकुन्तल नाटक की भूरि-भूरि भावपूर्ण प्रशंसा।
- आधुनिक काल में महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक, एकांकी, कथानिका, लघुकथा, उपन्यास आदि के रूप में लेखन कार्य जारी।
- आधुनिक साहित्य में आदर्शवाद के साथ यथार्थ का समाधानपरक चित्रण।
- आधुनिक रचनाओं में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं विश्व के परिदृश्य की संवेदना का बहुल अङ्कन।
- आधुनिक संस्कृत साहित्य में अन्य भाषाओं की प्रख्यात कृतियों का संस्कृतानुवाद।

अभ्यास-प्रश्न

प्र.1. नीचे लिखी रचनाओं के लेखकों के नाम लिखिए—

(क) *पारिजातहरण*

(ख) *श्रीकृष्णचरितामृत*

(ग) *रुक्मिणीहरण*

(घ) *सीताचरित*

(ङ) *जानकीजीवन*

प्र. 2. नीचे लिखी रचनाओं की काव्यविधा को लिखिए—

(क) *वामनावतरण*

(ख) *गणपतिसम्भव*

(ग) *बोधिसत्त्वचरित*

(घ) *सन्ध्या*

(ङ) *कुम्भशतक*

प्र. 3. गद्यकाव्य और लेखकों को मिलाइए—

गद्यकाव्य	**लेखक**
कथामुक्तावली	रामकरण शर्मा
दावानल	रामशरण त्रिपाठी
नलिनी	क्षमाराव
कौमुदीकथाकल्लोलिनी	रामनपिल्लई
सीमा	श्रीपादहसूरकर

प्र. 4. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(क) रेवा प्रसाद द्विवेदी कृत .... महाकाव्य है।

(ख) संस्कृत लघु कथा संग्रह .... से प्रकाशित है।

(ग) शार्दूलशकट वीरेन्द्रकुमार भट्टाचार्य कृत .... है।

(घ) राधावल्लभ त्रिपाठी कृत .... नाटक है

(ङ) प्रमद्वरा नाटक .... रचित है।

प्र. 5. नीचे लिखे लेखकों की रचनाओं के नाम लिखिए—

शिवजी उपाध्याय

रामावतार शर्मा

जानकी वल्लभ शास्त्री

बटुकनाथ शास्त्री

राजेन्द्रमिश्र

प्र.6. संस्कृत चलचित्रों का नामोल्लेख कीजिए।

Chapter-10.indd 110 12-08-2016 2:45:09 PM

एकादश अध्याय

संस्कृत कवयित्रियाँ

कवयित्री का तात्पर्य है काव्य रचना करने वाली महिला। पुरुषों की ही तरह महिलाएँ भी काव्य रचना करती रही हैं। कुछ कवयित्रियों ने तो स्फुट पद्य ही लिखे परन्तु कतिपय ने उत्कृष्ट कोटि की प्रबन्ध रचनाएँ भी की, जिनमें महाकाव्य तथा चम्पू काव्यादि सम्मिलित हैं।

कवयित्रियों की परम्परा वैदिक युग में ही प्रारम्भ हो गई थी। *ऋग्वेद* में जहाँ मंत्रद्रष्टा ऋषियों के दर्शन होते हैं, वहीं अपाला, विश्ववारा, काक्षीवती, घोषा आदि ऋषियों की पुत्रियाँ एवं लोपामुद्रा आदि ऋषिपत्नियाँ वेद मन्त्रों का दर्शन करने वाली ऋषिकाओं के रूप में दृष्टिगत होती हैं। श्रद्धा, कामायनी, शची, पौलोमी तथा अदिति आदि देवकोटि की कवयित्रियाँ हैं। सार्पराज्ञी आदि को हम देवमानवेतर कोटि की ऋषिका मान सकते हैं।

पुरुष कवियों की ही तरह इन कवयित्रियों ने भी अपनी कविता में अद्भुत संवेदनाएँ प्रकट की हैं। कहीं अम्भृण ऋषि की कन्या ब्रह्मसाक्षात्कार-जन्य अपनी गहन आध्यात्मिक अनुभूतियों को व्यक्त करती है, तो कहीं शची इन्द्राणी सपत्नी-निवारण जैसे लौकिक विषय की चर्चा करती है। शची की भावनाएँ सामान्य नारी मनोविज्ञान से जुड़ी हैं। वह अपने सौभाग्य को कथमपि खण्डित नहीं देखना चाहती। अपाला महामुनि कृशाश्व की पत्नी तथा अत्रि की पुत्री है। वह शरीरदोष के कारण पति-परित्यक्ता है। उसकी कविता में उसकी जीवनव्यथा अनुस्यूत है। अश्विनी कुमारों की असीम कृपा से अपाला पुनः सौभाग्यवती बन जाती है।

वैदिक कवयित्रियों की यही परम्परा लौकिक संस्कृत कविता में भी सतत रूप से मिलती है। *रामायण, महाभारत* तथा *पुराणों* के अनन्तर संस्कृत कविता उत्तरोत्तर समाज सापेक्ष होती चली गई है। कवियों ने देव संस्कृति तथा देव समाज के साथ ही साथ मानव संस्कृति तथा मानव समाज को भी कविता का विषय बनाना प्रारंभ किया। यद्यपि कविता की इस धारा में वर्चस्व तो पुरुष कवियों का ही दिखाई देता है, तथापि सांस्कारिकी

कवि प्रतिभा से युक्त कुछ महिलाएँ भी पुरुषों के समकक्ष काव्य सर्जना में निरत दिखाई देती हैं। जिनमें विज्जका (विज्जिका, विजयाङ्का), शिलाभट्टारिका, मधुरवाणी, मारुला, मोरिका, विकटनितम्बा, देवकुमारिका, फल्गुहस्तिनी, तिरुमलाम्बा, रामभद्राम्बा तथा प्रभुदेवी आदि प्रमुख हैं।

इन कवयित्रियों में अधिकांश के तो स्फुटपद्य मात्र मिलते हैं जो परवर्ती आलंकारिकों द्वारा उद्धृत किये गये हैं। दशम शताब्दी ई. में उत्पन्न आचार्य राजशेखर की पत्नी *अवन्तिसुन्दरी* तो काव्यशास्त्रिय चिन्तन में भी अग्रसर थीं। स्वयं राजशेखर ने काव्यमीमांसा में, अवन्तिसुन्दरी के मतों तथा सिद्धान्तों की सोदाहरण व्याख्या की है। *गंगादेवी ने मधुराविजयमहाकाव्य,* रामभद्राम्बा ने *वरदाम्बिकापरिणय* चम्पू तथा *तिरुमलाम्बा* ने *वीरकम्परायचरित* की रचना कर अपनी प्रबन्धात्मक सर्जना प्रतिभा का भी परिचय दिया है। तंजौर-नरेश रघुनाथनायक की सभा कवयित्री मधुरवाणी ने नरेश द्वारा लोकभाषा में प्रणीत *रामायण* का संस्कृत में रूपान्तर किया था। *यादवराघवपाण्डवीयम्* के रचनाकार पं. अनन्ताचार्य की पुत्री त्रिवेणी की वेदान्त दर्शन में अबाधित गति थी। इन्होंने प्रबोध-चन्द्रोदय की शैली में शान्तरस प्रधान *रंगाभ्युदय, सम्पत्कुमारविजय* जैसे उत्कृष्ट प्रतीकात्मक रूपकों की रचना की। तमिलनाडु के कुम्भकोणम् की कवयित्री *ज्ञानसुन्दरी* (19वीं–20वीं शताब्दी) प्रणीत *हालास्यचम्पू* में छैः स्तबक हैं। जिनमें शिव के अवतार सुन्देरश्वर और देवी मीनाक्षी के परिणय का मनोहारी वर्णन किया गया है।

आधुनिक संस्कृत सर्जना में भी महिला कवयित्रियों का योगदान अभिनन्दनीय है। बीसवीं शताब्दी की काव्य-रचयित्रियों में पण्डिता क्षमाराव का नाम सर्वोपरि है। विदेशी शासन से मुक्ति की उत्कट कामना और तात्कालिक भारतीय समाज में महात्मा गान्धी के बढ़ते प्रभाव से समाज में संचरित जनजागृति को आधार बनाकर पुणे निवासी शंकर पाण्डुरंग की पुत्री क्षमाराव ने संस्कृत जगत को अनेक उत्कृष्ट रचनाएँ प्रदान कीं। इनमें *सत्याग्रहगीता, स्वराजविजय, उत्तरसत्याग्रहगीता, तुकारामचरित, शंकरजीवनाख्यान, ज्ञानेश्वरचरित, रामदासचरित* महाकाव्य हैं। भारतभूमि के महापुरुषों और सन्तचरितों को इनमें प्रस्तुत किया गया है। *मीरालहरी* खण्डकाव्य है। *कथापंचक* (पद्यात्मक) *ग्रामज्योति* (पद्यात्मक) *कथामुक्तावली* (गद्यात्मक) कथा संग्रह हैं। ये रचनाएँ मानवीय संवेदनाओं और राष्ट्रप्रेम का जीवन्त निदर्शन हैं। इनमें विधवा-विवाह, बाल-विवाह, संतानहीनता, मद्यपान, जुआखोरी आदि विविध सामाजिक विषयों को सशक्तता के साथ उठाया गया है।

Chapter-11.indd 112 24-08-2016 9:51:56 AM

आधुनिक युग की इस अविच्छिन्न शृंखला में रवीन्द्रभारती विश्वविद्यालय की उपकुलपति पद को गौरवान्वित कर चुकी रमाचौधुरी ने *पल्लीकमल, देशदीप, मेघमेदुरमेदनीय, यतीन्द्रयतीन्द्र, निवेदितनिवेदित, भारततात, गणदेवता* आदि 25 नाटकों का प्रणयन कर प्रचुर ख्याति पाई है। नाट्यरचना के माध्यम से संस्कृत के प्रचार-प्रसार में आजीवन संलग्न रहने वाली पण्डिता क्षमाराव की पुत्री *लीलाराव दयालु* (मुम्बई) ने *अनूप, कृपाणिका, कपोतालय, जयन्तुकुमायुनीयाः, गणेशचतुर्थी, होलिकोत्सव, मीराचरित* आदि 24 एकांकियों का प्रणयन किया और स्वदेश में ही नहीं, अपितु नेपाल, पेरिस आदि देशों में भी इनका अभिनय कराया। *वनमाला भवालकर* (सागर) ने *पाददण्ड* (एकांकी) *रामवनगमन, पार्वतीतपश्चर्या, अन्नदेवता* आदि नृत्यनाटिकाओं का संस्कृत में प्रणयन किया है। *श्रीसत्यसाईसदाचारसंहिता* साईंबाबा की स्तुति में प्रणीत भावपूर्ण स्तोत्र रचना है। *कमला पाण्डेय* ने11 सर्गों में *रक्षत गंगाम्* महाकाव्य का प्रणयन किया है और गंगा में बढ़ते प्रदूषण पर अपनी चिन्ता व्यक्त की है। व्याकरणशास्त्र पर असाधारण अधिकार रखने वाली पुष्पा दीक्षित (जबलपुर) की *अग्निशिखा* और *शाम्भवी* प्रौढ़ व मधुर पद्य रचनाएँ हैं। मिथिलेश कुमारी मिश्रा (पटना) ने सुभाषचन्द्र के जीवन पर *चन्द्रचरित* नामक महाकाव्य की सर्जना की है। इन्होंने शान्त रस प्रधान *आम्रपाली* नाटिका के पाँच अंकों में वैशाली की नगर वधू आम्रपाली द्वारा बौद्ध धर्म अपनाकर आत्मिक शान्ति पाने की कथा को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। इनका *दशमस्त्वमसि* दस मनोरंजक एकांकियों का संग्रह है।

नलिनी शुक्ला *'व्यथिता'* (कानपुर) ने *राधानुनय* (नृत्यनाटिका) *मुक्तिमहोत्सव* (नाट्य), *पार्वतीतपश्चर्या* (ऑपेरा) *कथासप्तक* (कथासंग्रह), *भावाञ्जलि, वाणीशतक* (पद्य) आदि काव्यों का प्रणयन किया है।

कुछ कवयित्रियों ने ललित ग्राम्य गीतों की लोकधुन पर पावस, वसन्त आदि विषयों पर संगीतमय रचनाएँ लिखी हैं। नलिनीशुक्ला विरचित *कजरी* की कतिपय पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

श्रावण आगत एषः।
घनघनगर्जितनादितमुरजः श्रावण आगत एषः।
नृत्यति विह्वलमुग्धशिखावलरुन्नतपुच्छसुवेशः।
निर्झरिणी,पारिजात पृ.9

Chapter-11.indd 113 24-08-2016 9:51:56 AM

समवृत्त, विषमवृत्त, दण्डकादि अल्प प्रचलित छन्दों में भी महिलाओं के द्वारा प्रणीत रचनाएँ उपलब्ध होती हैं। कमलापाण्डेय का एक दण्डक छन्द उद्धृत है—

जय सुरधुनि! कोटिपापौघसंहारि-शंकारि संसारभीहारि-
चेतस्तमोहारि-मोहारि-चिद्वारि-चंचच्चमत्कारकल्लोलितालोक-कूलंकषे!
हे जगद्वन्दिते! भ्राजतां भूतले भासतां भारते,
देवि गंङ्गे! नमो देवि गंङ्गे नमो, देवि गंङ्गे नमः।।-श्रीगङ्गादण्डकम्, पद्यसं- 3

यहाँ आरम्भिक दो 'न' गणों के बाद 27 'र' गणों का प्रयोग हुआ है।

सावित्रीदेवी शर्मा ने *संस्कृतगीतांजलि* में अयोध्या नरसंहार से फैली धर्मान्धता को आधार बनाकर धर्मनिरपेक्षता के छद्म आवरण में अपनी स्वार्थ सिद्धि करने वाले राजनेताओं की भर्त्सना की है। इसी परम्परा में कमलारत्नम्, महाश्वेता चतुर्वेदी, शशि तिवारी, नवलता, कमल अभ्यंकर, सिम्मी कंधारी, शशि तिवारी (आगरा) वेदकुमारी घई (जम्मू), रमाबाई, सुधासहाय, इलाघोष, वीणापाणि आदि महिला रचनाकारों की सर्जनात्मक रचनाएँ समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। इनमें समसामयिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया है। अधिकांश कवयित्रियों ने चाहे वे किसी भी कालखण्ड से सम्बद्ध हों, उन्होंने मानव-हृदय की सूक्ष्मतम अनुभूतियों को सशक्त व सरस अभिव्यक्ति दी है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि संस्कृत काव्य सर्जना के क्षेत्र में महिला रचनाकारों की एक दीर्घ परम्परा विद्यमान है। गद्य, पद्य, नाट्य, चम्पू, महाकाव्य, नृत्यनाटिका(ऑपेरा), नाटिका, संगीतिका, लोकगीत, कथा आदि महत्त्वपूर्ण विधाओं में असाधारण साहित्यिक वैशिष्ट्य से मण्डित रचनाओं से संस्कृत साहित्य को समद्ध बनाने का स्तुत्य कार्य महिलाओं ने भी किया है। प्राचीन-मध्यकालीन कवयित्रियों की रचनाएँ जहाँ पारम्परिक छन्दों में मिलती है, वहीं आधुनिक कवयित्रियों ने अपनी रचनाओं में पारम्परिक छन्दों के साथ-साथ गीति, गजल, कजरी, मुक्तछन्द आदि के निर्बाध प्रयोग किए हैं। सामाजिक, धार्मिक, राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं राजनीतिक विविधतापूर्ण विषयों को इनकी रचनाओं में पर्याप्त स्थान मिला है।

Chapter-11.indd 114 24-08-2016 9:51:57 AM

द्वादश अध्याय

शास्त्रीय साहित्य

वाङ्मय दो प्रकार का होता है— शास्त्र एवं काव्य। काव्य का विवेचन पूर्व अध्यायों में हो चुका है। अब शास्त्र का विवेचन किया जा रहा है। वैदिक वाङ्मय को यथार्थ रूप में समझने के लिए अत्यन्त प्राचीनकाल में ही व्याकरण, ज्योतिष, गणित जैसे शास्त्रों का विकास हुआ। सामान्यतया ऐसे साहित्य को शास्त्र कहते हैं, जो ज्ञान अथवा विज्ञान के तथ्यों का विवेचन करता है और उसे 'स्वीकार न करना समुचित नहीं माना जाता है। उदाहरणार्थ व्याकरण के नियमों को समुचित नहीं माना जाता है। व्याकरण के नियमों को न मानने पर वैसा किया हुआ प्रयोग सही नहीं माना जाता है। इसी प्रकार वैदिक साहित्य में बिखरे हुए विभिन्न विचारों से धर्मशास्त्र, आयुर्वेद, दर्शनशास्त्र, काव्य शास्त्र, वास्तुशास्त्र इत्यादि अनेक शास्त्र विकसित हुए। ये शास्त्र विभिन्न युगों में अपने समय की आवश्यकता के अनुसार विभिन्न विभागों में बँट गए और इन शास्त्रों से सम्बद्ध अनेक ग्रन्थ लिखे गए तथा इन पर टीकाएँ भी लिखी गईं। टीकाओं में मूलग्रन्थों के भावों को समझने के अतिरिक्त नए तथ्य भी आए। कुछ टीकाएँ संक्षिप्त थीं, तो कुछ बहुत विस्तृत भाष्यों के रूप में थीं। इसी प्रकार विभिन्न शास्त्रों में ग्रन्थों की संख्या बढ़ गई। किसी भी एक शास्त्र के सभी ग्रन्थों को पढ़ पाना भी किसी व्यक्ति के लिए सरल नहीं है। इसी से शास्त्रीय साहित्य की विशालता समझी जा सकती है।

शास्त्रीय साहित्य का विकास वस्तुत: वैदिक युग से ही आरंभ होता है। वैदिक मन्त्रों का शुद्ध उच्चारण करके उन्हें सही अर्थों में समझने के लिए तीन विभिन्न शास्त्रों का जन्म हुआ— शिक्षा, व्याकरण तथा निरुक्त। वैदिक काल में ये तीनों शास्त्र पृथक्-पृथक् प्रचलित थे, किन्तु लौकिक संस्कृत के काल में ये तीनों व्याकरण में ही समाविष्ट हो गए। इससे व्याकरण शास्त्र का क्षेत्र बढ़ गया।

वैदिक यज्ञों में वेदिका तथा यज्ञशाला के निर्माण के क्रम में गणित तथा भवन-विज्ञान (वास्तुशास्त्र) का उद्भव हुआ। *अथर्ववेद* में चिकित्सा से सम्बद्ध बहुत से संकेत मिलते हैं। परवर्ती युग में उनका विकास आयुर्वेद के रूप में हुआ।

वैदिक साहित्य में अनेक स्थानों पर जनसामान्य के सामाजिक और धर्म-संबंधी विचार व्यक्त किए गए थे। उनका संकलन करके धर्मशास्त्र बनाया गया। *ऋग्वेद* और *अथर्ववेद* में जो दार्शनिक चिन्तन पाए जाते हैं, उनका विकास उपनिषदों में हुआ और यही चिन्तन आगे चलकर दर्शनशास्त्र के रूप में उभरा। दर्शनशास्त्र, सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा एवं वेदान्त— इन छ: आस्तिक तथा चार्वाक, जैन एवं बौद्ध— इन तीन नास्तिक दर्शनों के रूप में विकसित हुआ।

वेदों में नर-नारी के प्रेम को कई रूपों में निर्दिष्ट किया गया है। इन विचारों से कामशास्त्र का विकास हुआ। काव्य में अलंकारों के प्रयोगों का विवेचन करने के लिए काव्यशास्त्र का आविर्भाव हुआ। राजनीति का विवेचन यद्यपि पहले धर्म-शास्त्र के अंग के रूप में होता था, किंतु बाद में यह अर्थशास्त्र के नाम से पृथक् शास्त्र बन गया। इस प्रकार संस्कृत भाषा में अनेक शास्त्र विकसित हुए।

आरम्भिक अवस्था में ये शास्त्र इधर-उधर बिखरे हुए थे, किन्तु कालक्रम से इन्हें आकर ग्रन्थों के रूप में व्यवस्थित किया गया। शास्त्रों के अध्ययन की समृद्ध परम्परा भारतवर्ष में रही है। यही हमारा प्राचीन विज्ञान है, दर्शन है और भारतीय मेधा का उत्कर्ष है। अपने शास्त्रीय साहित्य पर आज भी संस्कृत वाङ्मय को गर्व है।

प्रमुख शास्त्रीय ग्रन्थों का परिचय

1. **शब्दकोश विज्ञान**— वैदिक युग से ही शब्दकोश-निर्माण की पद्धति चलती आ रही है। वैदिक शब्दों के संग्रह को *निघण्टु* कहा जाता है। समय-समय पर विविध कोशों की रचना भारत में होती रही है। इनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध *नामलिङ्गानुशासन* है, जो कोशकार अमरसिंह के नाम पर *अमरकोश* के नाम से अधिक विख्यात है। इसकी रचना प्राय: तीसरी शताब्दी ई. में हुई थी। इस ग्रन्थ में तीन काण्ड हैं, जिनमें वैज्ञानिक ढंग से वर्गीकरण करके पर्यायवाची शब्दों का श्लोकबद्ध संग्रह किया गया है। यद्यपि बाद में भी हलायुध की *अभिधानरत्नमाला,* यादव प्रकाश का *वैजयन्तीकोश,* महेश्वर का *विश्वप्रकाश,* हेमचन्द्र की *अभिधानचिन्तामणि* आदि कोश ग्रन्थ लिखे गए, किन्तु *अमरकोश* का महत्त्व आज भी अक्षुण्ण है। इस पर प्राय: 40 टीकाएँ लिखी गईं।

आधुनिक काल में वर्णमाला के क्रम से शब्दों को सजाकर दो महान् कोश लिखे गए, जिनमें ताराचंदवागीश (छ: भागों में) तर्कवाचस्पति के द्वारा संकलित *वाचस्पत्यम्*

Chapter-12.indd 116 12-08-2016 2:14:05 PM

तथा राधाकान्तदेव द्वारा पाँच भागों में प्रस्तुत कराया गया *शब्दकल्पद्रुम* विशेष उल्लेखनीय है।

2. **छन्द:शास्त्र**— इस शास्त्र का प्राचीनतम ग्रन्थ पिङ्गलाचार्य के द्वारा लिखित छन्द:सूत्र है। इसमें वैदिक और लौकिक दोनों प्रकार के छन्दों के नियम सूत्र रूप में लिए गए हैं। क्षेमेन्द्र ने *सुवृत्ततिलक* नामक लघु पुस्तक में छन्दों के पद्यबद्ध लक्षण दिए हैं, जो उदाहरण का काम भी करते हैं। इन्होंने संस्कृत के विभिन्न कवियों के द्वारा प्रयुक्त कई छंदों की प्रशंसा भी की है। केदारभट्ट (पन्द्रहवीं शताब्दी ई.) का *वृत्तरत्नाकर* तथा गंङ्गादास कृत *छन्दोमञ्जरी* छन्द:शास्त्र के अन्य सुप्रचलित ग्रन्थ हैं।

3. **व्याकरणशास्त्र**— वैदिक साहित्य में शब्दों के उच्चारण, प्रकृति-प्रत्यय के रूप में शब्दों का विभाजन, वचन, काल आदि के विषय में कई स्थलों पर विवेचन है। इससे व्याकरणशास्त्र का विकास हुआ। यद्यपि शाकटायन, शौनक, शाकल्य, स्फोटायन इत्यादि कई प्राचीन व्याकरण शास्त्री हुए, किन्तु आज सर्वप्रथम उपलब्ध ग्रन्थ पाणिनि की *अष्टाध्यायी* ही है। आठ अध्यायों में पाणिनि ने लौकिक संस्कृत और वैदिक संस्कृत से सम्बद्ध प्राय: 4,000 सूत्र लिखे हैं। इस ग्रंथ में दोनों भाषाओं का सर्वाङ्गपूर्ण विवरण दिया गया है। पाणिनि के सूत्र अत्यन्त संक्षिप्त हैं, किन्तु व्यापक रूप से संस्कृत भाषा के नियमों को प्रस्तुत करते हैं। पाणिनि का समय प्राय: 500 ई. पू. माना जाता है। इन सूत्रों पर संक्षिप्त टिप्पणियों के रूप में वार्तिक लिखने वाले कात्यायन (350 ई. पू.) हुए, जिन्होंने कहीं-कहीं सूत्रों में दिए गए नियमों को आगे बढ़ाया और कहीं उनमें संशोधन का सुझाव दिया। इसके बाद पतञ्जलि (150 ई. पू.) हुए, जिन्होंने पाणिनि के सूत्र और कात्यायन के वार्तिक दोनों पर संयुक्त रूप से *महाभाष्य* नामक आलोचनात्मक ग्रन्थ लिखा। इन तीनों आचार्यों को समुदित रूप से व्याकरणशास्त्र में त्रिमुनि अथवा मुनित्रय कहा जाता है।

अष्टाध्यायी तथा *महाभाष्य* पर अनेक व्याख्याएँ लिखी गईं, इनमें वामन और जयादित्य की *काशिकावृत्ति* अष्टाध्यायी की श्रेष्ठ व्याख्या के रूप में प्रसिद्ध है। कुछ समय के बाद पाणिनि के सूत्रों को सरलता की दृष्टि से नए रूप में व्यवस्थित करके प्रक्रियाग्रन्थ लिखे गए, जिनमें रामचन्द्र (1400 ई.) की *प्रक्रियाकौमुदी* और भट्टोजिदीक्षित (1600 ई.) की *सिद्धान्तकौमुदी* प्रसिद्ध हैं। पाणिनीय व्याकरण में प्रवेश के लिए वरदराज कृत *लघुसिद्धान्तकौमुदी* जैसे सरल ग्रन्थ भी लिखे गए। *सिद्धान्तकौमुदी* पर टीकाओं का प्राचुर्य है, जिनका अध्ययन नव्य व्याकरण के अन्तर्गत होता है।

Chapter-12.indd 117 12-08-2016 2:14:05 PM

पाणिनीय व्याकरण के अन्तर्गत कुछ दार्शनिक ग्रन्थ भी लिखे गए जिनमें भाषा के अर्थ-पक्ष या दर्शन पर विचार किया गया। इन ग्रन्थों में भर्तृहरि (500 ई.) का *वाक्यपदीय,* कौण्डभट्ट (1650 ई.) का *वैयाकरणभूषणसार* तथा नागेशभट्ट (1700 ई.) की *वैयाकरणसिद्धान्तमञ्जूषा* प्रसिद्ध हैं।

पाणिनि के अतिरिक्त अन्य वैयाकरणों ने भी विभिन्न व्याकरण-सम्प्रदायों को प्रवर्तित किया। इनमें कातन्त्र, चान्द्र, शाकटायन, हैम, सारस्वत तथा सौपद्म सम्प्रदाय भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित हैं। प्राचीन वैयाकरणों के विषय में यह श्लोक प्रचलित है—

इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नापिशली शाकटायनः।
पाणिन्यमरजैनेन्द्रा जयन्त्यष्टादिशाब्दिकाः।।

4. **धर्मशास्त्र**— आचार-व्यवहार की शिक्षा के लिए वैदिक धर्म-सूत्रों पर आश्रित अनेक स्मृतियाँ लिखी गईं। इनमें वर्णाश्रम व्यवस्था, राजा के कर्त्तव्य, विवाद का निर्णय आदि विविध विषयों पर प्रकाश डाला गया है। यह सामान्य धारणा है कि स्मृतियाँ श्रुतियों अर्थात् वेदों का अनुसरण करती हैं। इन स्मृतियों के आधार पर ही हिन्दुओं के दीवानी और फौजदारी कानून बने हुए हैं। यद्यपि प्राचीन स्मृतियों के बहुत से नियम आज अपना अर्थ और महत्त्व खो चुके हैं, तथापि आज भी भारतीय सामाजिक व्यवस्था मूलत: स्मृतियों पर आश्रित है। इसलिए स्मृतियों के अध्ययन की अपनी उपयोगिता है।

स्मृति-ग्रंथों में सर्वाधिक महत्त्व *मनुस्मृति* का है। इसमें 12 अध्याय हैं, जिनमें सभी स्मृतियों की अपेक्षा अधिक व्यापक विषयवस्तु का प्रतिपादन श्लोकों में है। सृष्टि से आरंभ करके मानव समाज के विकास तथा दैनिक जीवन के कर्त्तव्यों का विवेचन करते हुए मोक्ष तक का इसमें विवेचन है। मनु को सभी मानवों का पिता कहा गया है। उन्होंने जीवन की व्यवस्था के लिए अपने नियम दिए हैं।

याज्ञवल्क्यस्मृति (300 ई.) में अपेक्षाकृत अधिक प्रगतिशील विचार दिए गए हैं। इसमें तीन अध्याय हैं— आचार, *व्यवहार* और *प्रायश्चित्त*। इस पर मिताक्षरा व्याख्या सुप्रसिद्ध है, जिसे हिन्दुओं के कुछ वर्गों में सर्वाधिक प्रमाणिक माना जाता है। *नारदस्मृति, विष्णुस्मृति* आदि अन्य कई स्मृतियाँ हैं। धर्मशास्त्र के अन्तर्गत स्मृतियों के अतिरिक्त निबन्ध-ग्रंथों की भी रचना हुई, जिनमें किसी धार्मिक व्यवस्था, अनुष्ठान, विवादग्रस्त विषय आदि का विवेचन हुआ। बारहवीं शताब्दी के बाद ऐसे अनेक निबन्ध लिखे गए। आधुनिक भारतीय कानूनों को अंग्रेजों ने इन निबन्धों के आधार पर ही बनाया था।

Chapter-12.indd 118 12-08-2016 2:14:05 PM

5. **राजनीतिशास्त्र**— प्राचीन भारत में राजनीति को भी बहुत महत्त्व दिया जाता था। कहते हैं कि सुव्यवस्थित राज्य में ही सभी शास्त्र पनपते हैं। इसलिए राज्य को सुदृढ़ करने के लिए राजनीतिशास्त्र से संबद्ध पर्याप्त चर्चा होती रही। *महाभारत* का शान्ति पर्व इस दृष्टि से बहुत महत्त्व का है। प्राचीन धर्मशास्त्री और स्मृतिकार भी राजनीति की विवेचना करते हैं, किन्तु राजनीतिविषयक सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ कौटिल्य का *अर्थशास्त्र* है। इसमें 15 अधिकरण हैं, जिन्हें अध्यायों में विभक्त किया गया है। सम्पूर्ण *अर्थशास्त्र* सूत्रात्मक है। कहीं-कहीं श्लोकों में सूत्र की बातें दोहराई गई हैं।

अर्थशास्त्र में राजा की शिक्षा, मंत्रियों की नियुक्ति, गुप्तचरों की नियुक्ति, विभिन्न विभागीय अधीक्षकों के कर्त्तव्य, राज्य के दुष्ट नागरिकों का दमन, कृत्रिम मूल्य-वृद्धि, मिलावट तथा गलत नाप-तोल को रोकने के उपाय, राज्य के सात अंग, शान्ति और उद्योग, शत्रु पर आक्रमण, युद्ध, दुर्ग का घेरा, विष-प्रयोग आदि अनेक विषयों का साङ्गोपाङ्ग वर्णन है। कौटिल्य ने *अर्थशास्त्र* को कठोर अनुशासनबद्ध राजतन्त्र की दृष्टि से लिखा है। राजा आन्तरिक व्यवस्था रखे, प्रजा की रक्षा करे और युद्ध के लिए सदा तत्पर रहे। *अर्थशास्त्र* इस सिद्धान्त को मानता है कि लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधनों का अच्छा-बुरा होना महत्त्वपूर्ण नहीं है। *अर्थशास्त्र राजतरङ्गिणी* के समान ही संस्कृत वाङ्मय का गौरव ग्रन्थ है।

6. **नीतिशास्त्र**— राजनीति के समान सामान्य व्यावहारिक नीति पर भी संस्कृत भाषा में कई ग्रन्थ लिखे गए हैं। *कामन्दकीयनीतिसार* अर्थशास्त्र के प्रमुख विषयों को श्लोकों में प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार सोमदेवसूरि कृत *नीतिवाक्यामृत* भी *अर्थशास्त्र* पर आश्रित है। *चाणक्यनीतिदर्पण* नीतिश्लोकों का अव्यवस्थित संग्रह है। भोज का *युक्तिकल्पतरु,* चण्डेश्वर का *नीतिरत्नाकर* और *शुक्रनीति* भी व्यावहारिक नीतिशास्त्र के प्रमुख ग्रन्थ हैं।

7. **चिकित्साशास्त्र**— इसे आयुर्वेद कहा जाता है। बौद्ध ग्रन्थों से पता चलता है कि राजगृह में जीवक नामक बहुत बड़ा वैद्य रहता था, जिसने बुद्ध की भी चिकित्सा की थी। संस्कृत भाषा में इस शास्त्र का प्राचीनतम ग्रन्थ *चरकसंहिता* है। इसमें आठ खण्ड और 30 अध्याय हैं। इसकी रचना प्राय: गद्य में है। इसमें शल्य-क्रिया को छोड़कर चिकित्सा के सभी विषयों का प्रतिपादन है। इसका समय प्रथम शताब्दी ई. माना जाता है। इस शास्त्र का दूसरा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ *सुश्रुत-संहिता* है, जिसमें शल्यक्रिया पर बहुत बल दिया गया है। इसमें शल्यक्रिया के उपकरणों का भी परिचय दिया गया

Chapter-12.indd 119 12-08-2016 2:14:05 PM

है। दोनों ग्रन्थ सातवीं-आठवीं शताब्दी में अरबी भाषा में रूपांतरित हो चुके थे।

वाग्भट के दो चिकित्सा–ग्रन्थ मिलते हैं— *अष्टांगसंग्रह* और *अष्टांगहृदयसंहिता*। विद्वानों का मत है कि इन दोनों की रचना वाग्भट नाम के दो व्यक्तियों ने की थी, जो एक ही वंश में हुए थे। नागार्जुनकृत *योगसार,* शार्ङ्गधर-रचित *शार्ङ्गधरसंहिता* (तेरहवीं शताब्दी), भावमिश्र-रचित *भावप्रकाश* इत्यादि इस शास्त्र के अन्य प्रमुख ग्रंथ हैं।

8. **ज्योतिष तथा गणित**— इस क्षेत्र में भारतीयों की उपलब्धि वैदिक युग से ही मिलती है। नक्षत्रों की गणना, ग्रहों का विचार, काल-गणना आदि के क्षेत्र में भारतीय ज्योतिषियों की अद्भुत क्षमता थी। 476 ई. में उत्पन्न आर्यभट्ट ने 121 पद्यों में *आर्यभटीय* नामक ग्रंथ लिखा था। उन्होंने पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूमना सिद्ध किया था। उनके ग्रहण-विषयक सिद्धांत आज भी मान्य हैं। वराहमिहिर ने प्राय: 550 ई. में ज्योतिषशास्त्र के विभिन्न सिद्धांतों पर *पञ्चसिद्धांतिका* नामक ग्रंथ लिखा था। सातवीं शताब्दी में ब्रह्मगुप्त ने *ब्रह्मस्फुटसिद्धांत* की रचना की। भास्कराचार्य (बारहवीं शताब्दी) ने *सिद्धांत-शिरोमणि* नामक सिद्धांतग्रंथ के अतिरिक्त *लीलावती, बीजगणित, ग्रहगणित* तथा *गोलाध्याय* नामक गणित-ग्रंथ लिखे। गणित के क्षेत्र में आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त तथा श्रीधर का भी महान् योगदान है। आर्यभट्ट ने विश्व में पहली बार शून्य अंक एवं दशमलव का आविष्कार किया, जिससे गणित के क्षेत्र में एक नए युग का आरम्भ हुआ।

फलित ज्योतिष के क्षेत्र में वराहमिहिर की *बृहत्संहिता, बृहज्जातक* और *लघुजातक* नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। *विद्यामाधवीय* तथा *ज्योतिर्विदाभरण* नामक ग्रन्थों में फलित ज्योतिष का विवेचन है। कुछ ज्योतिषियों ने शकुनविद्या, भविष्यफल, स्वप्नविज्ञान तथा सामुद्रिक शास्त्र के विषय में भी विभिन्न ग्रंथ लिखे।

9. **दर्शनशास्त्र**— *ऋग्वेद* में कई दार्शनिक सूक्त हैं, जिनमें संसार के मूल तत्त्व और सृष्टि-प्रक्रिया का विवरण मिलता है। बाद में उपनिषदों में इन्हीं विषयों का रोचक विवेचन किया गया। आत्मा, ब्रह्म, जगत्, मृत्यु, जीवन आदि की व्याख्या रोचक उपाख्यानों के द्वारा इनमें की गई। वैदिक साहित्य के बाद दार्शनिक धारा दो भागों में विभक्त हो गई। पहली धारा वैदिक परंपरा को आगे बढ़ाने वाली थी, जिसे आस्तिक कहा गया। दूसरी धारा वैदिक परम्परा के विरोध में चली, जिसे नास्तिक कहा गया।

नास्तिक दर्शन के तीन रूप मिलते हैं— चार्वाक, जैन और बौद्ध। चार्वाक पूर्णत: भौतिकवादी दर्शन है, जिसमें ईश्वर, धर्म, आत्मा, परलोक आदि उन सभी विषयों का

Chapter-12.indd 120 12-08-2016 2:14:06 PM

खण्डन है जो प्रत्यक्ष नहीं है। चार्वाक दर्शन का प्रचार बहुत हुआ, जिससे इसका नाम लोकायत भी पड़ा। बृहस्पति इस दर्शन के प्रणेता माने जाते हैं। इनका कोई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ नहीं मिलता। बौद्ध दर्शन महात्मा बुद्ध के द्वारा आरंभ हुआ। आरंभ में इसके ग्रन्थ पालि भाषा में लिखे गए, किंतु बाद में संस्कृत भाषा मे बौद्ध दर्शन के ग्रन्थ लिखे गए। तिब्बत, चीन, जापान, श्रीलंका, थाइलैण्ड इत्यादि देशों में भी यह धर्म उन देशों की भाषाओं में विकसित हुआ। संस्कृत में महायान धर्म की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें लिखी गईं। बौद्ध दर्शन की चार शाखाएँ हो गईं, जैसे- शून्यवाद, विज्ञानवाद, सौत्रान्तिक एवं वैभाषिक। *सद्धर्मपुण्डरीक, ललितविस्तर, लंकावतारसूत्र, माध्यमिककारिका, अभिधर्मकोश* इत्यादि प्रमुख बौद्ध ग्रन्थ हैं, जो संस्कृत में लिखे गए। जैन धर्म का विकास भी बौद्ध-धर्म के पूर्व ही हो चुका था। इसके अधिकांश ग्रन्थ प्राकृत में हैं, किन्तु बाद में संस्कृत में भी बहुत से जैन ग्रंथ लिखे गए। उमास्वामी या उमास्वाति (100 ई.) का *तत्त्वार्थाधिगमसूत्र* प्रथम संस्कृत रचना है जिसमें जैनों के सिद्धांतों का सर्वांगपूर्ण वर्णन है। जैनों ने संस्कृत भाषा में दर्शन, काव्य, व्याकरण तथा अन्य क्षेत्रों में भी रचनाएँ कीं।

आस्तिक दर्शन के छह रूप मिलते हैं— सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा एवं वेदान्त। इनमें प्रत्येक दर्शन का विशाल साहित्य उपलब्ध है।

मीमांसा का आरंभ जैमिनि के *मीमांसासूत्र* (12 अध्याय) से होता है। इस पर शबरस्वामी ने भाष्य लिखा। इस भाष्य पर प्रभाकर ने *बृहती* टीका लिखी। दूसरी ओर कुमारिल ने इसकी व्याख्या तीन पृथक् पुस्तकों में की। इनमें *श्लोकवार्तिक* और *तन्त्रवार्तिक* प्रसिद्ध हैं। प्रभाकर और कुमारिल ने मीमांसा में दो पृथक् संप्रदाय चलाए, जिनमें कई विषयों पर मतभेद है। मीमांसा दर्शन मुख्यत: वैदिक वाक्यों पर आधारित धर्म की व्याख्या करता है। मीमांसा दर्शन के प्रारम्भिक ज्ञान के लिए लौगाक्षि भास्कर का *अर्थसंग्रह* महत्त्वपूर्ण है। वैदिक ज्ञानकाण्ड पर आश्रित वेदान्त दर्शन वस्तुत: उपनिषदों का तत्त्वचिंतन है, जिसे बादरायण ने अपने *ब्रह्मसूत्र* में निबद्ध किया। इस सूत्र पर शंकराचार्य ने अपना भाष्य लिखा, जिससे अद्वैतवेदान्त का विकास हुआ। शांकरभाष्य पर कई टीकाएँ लिखी गईं, जिनमें वाचस्पति की *भामती* नामक टीका विशेष उल्लेखनीय है। सदानन्द (सत्रहवीं शताब्दी) का सदानन्द कृत *वेदान्तसार* वेदान्त शास्त्र में प्रवेश कराने वाला एक सरल ग्रंथ है। ब्रह्मसूत्र पर अनेक आचार्यों ने अपनी व्याख्याएँ लिखकर अपने-अपने संप्रदाय चलाए। रामानुज (1100 ई.) ने श्रीभाष्य के द्वारा विशिष्टाद्वैत संप्रदाय चलाया और विष्णु की भक्ति को प्रधानता दी। मध्वाचार्य ने द्वैत सिद्धांत और वल्लभाचार्य ने

Chapter-12.indd 121 12-08-2016 2:14:06 PM

शुद्धाद्वैत सिद्धांत का श्रीगणेश किया। वेदान्त के विभिन्न दार्शनिक विचारों को संकलित करके *योगवासिष्ठ* नामक ग्रंथ की रचना मनोहर काव्य शैली में की गई।

न्यायदर्शन का प्रवर्तन गौतम ने *न्यायसूत्र* लिखकर किया, जिसपर वात्स्यायन ने *भाष्य* लिखा। इस भाष्य पर उद्योतकर ने *न्यायवार्तिक* लिखा। इस वार्तिक पर वाचस्पति मिश्र ने *तात्पर्यटीका* लिखी। इस टीका की व्याख्या उदयनाचार्य ने *परिशुद्धि* के नाम से लिखी। वस्तुत: टीका पर टीका लिखने का यह क्रम बौद्ध न्यायदर्शन के विरुद्ध संघर्ष के कारण चला। न्यायशास्त्र के सिद्धांतों का खण्डन बौद्ध लोग अपने ग्रन्थों में करते थे। इसलिए उनके आक्षेपों से रक्षा के लिए न्यायशास्त्रियों ने टीकाएँ लिखीं। जयन्तभट्ट ने न्यायमञ्जरी में न्यायसिद्धांत के विरोधी सभी सिद्धांतों का खंडन किया। गंगेश उपाध्याय (तेरहवीं शताब्दी) ने तत्त्वचिन्तामणि लिखकर न्यायशास्त्र को एक नया रूप दिया, जिसे **नव्य न्याय** कहते हैं। इस ग्रंथ पर व्याख्याओं का विपुल साहित्य लिखा गया। नव्य न्याय से सभी शास्त्रों को सूक्ष्म अभिव्यक्ति में सहायता मिली।

वैशेषिक दर्शन का प्रवर्तन कणाद ने किया। न्याय और वैशेषिक मिलते-जुलते दर्शन हैं। कणाद के वैशेषिक सूत्र की व्याख्याएँ बाद में लिखी गई, किंतु इस दर्शन के प्रशस्तपाद भाष्य में *पदार्थधर्मसंग्रह* को अधिक महत्त्व मिला। इसकी व्याख्याओं के द्वारा इस दर्शन के सिद्धांत प्रचारित हुए। न्याय और वैशेषिक को मिलाकर कई ग्रंथ लिखे गए, जिसमें केशवमिश्र की *तर्कभाषा* और विश्वनाथ की *न्यायसिद्धान्तमुक्तावली* प्रमुख है। अन्नम्भट्ट का *तर्कसंग्रह* इन दर्शनों में प्रवेश के लिए सरलतम ग्रन्थ है।

सांख्यदर्शन का प्रवर्तन महर्षि कपिल ने किया था। इस पर तेरहवीं शताब्दी ई. में विज्ञानभिक्षु ने *सांख्यप्रवचनभाष्य* लिखा। ईश्वरकृष्ण (300 ई.) की *सांख्यकारिका* सर्वाधिक प्रचलित ग्रंथ है। इस पर वाचस्पति ने *तत्त्वकौमुदी* टीका लिखी थी। सांख्य दर्शन में पुरुष और प्रकृति का जो विवेचन किया गया है, उसे व्यावहारिक रूप देने के लिए पतञ्जलि ने योगसूत्र लिखा। इस पर व्यास का भाष्य और कई अन्य व्याख्याएँ भी मिलती हैं।

विभिन्न दर्शनों के सिद्धांतों का संग्रह तथा विवेचन करने वाले ग्रंथ भी समय-समय पर लिखे जाते रहे। इनमें हरिभद्र (आठवीं शताब्दी) का *षड्दर्शन-समुच्चय* तथा माधवाचार्य (चौदहवीं शताब्दी) का *सर्वदर्शनसंग्रह* बहुत प्रसिद्ध हैं।

10. काव्यशास्त्र— काव्यशास्त्र को अलंकारशास्त्र तथा साहित्यशास्त्र भी कहते हैं, इसमें काव्य, नाटकादि के लक्षण, गुण, दोष, रीति, अलंकार, रस, ध्वनि तथा

Chapter-12.indd 122 12-08-2016 2:14:06 PM

शब्दशक्ति पर विचार होता है। इस शास्त्र का विशाल साहित्य उपलब्ध है। इसमें शताधिक मौलिक ग्रंथ लिखे गए हैं, टीकाओं की तो बात ही अलग है।

इस शास्त्र का प्राचीनतम ग्रन्थ भरतमुनि निर्मित *नाट्यशास्त्र* है। यह ग्रन्थ मुख्यत: श्लोकबद्ध है। इसमें 36 अध्याय हैं। मूलत: यह नाट्य एवं रस का विचार करता है, किंतु श्रव्य-काव्य संबंधी बहुत-सी बातें भी इसमें मिलती हैं। उसकी रचना 100 ई. पू. से पहले हो चुकी थी।

भामह (छठी शताब्दी) का *काव्यालंकार* छ: परिच्छेदों में विभक्त है। पूरा ग्रंथ श्लोकबद्ध है। भामह अलंकारों पर बहुत बल देते हैं। दण्डी (छठी शताब्दी) ने तीन परिच्छेदों में *काव्यादर्श* नामक ग्रंथ लिखा, जिसमें उन्होंने काव्य के भेदों की परिभाषाएँ देकर अलंकारों की विवेचना की है। पूरा ग्रन्थ पद्यात्मक है।

वामन (800 ई.) ने *काव्यालंकारसूत्र* नामक ग्रन्थ में रीति को काव्य की आत्मा माना है। यह पाँच अधिकरणों का सूत्रात्मक ग्रंथ है। इसमें दोष, गुण, अलंकार तथा कतिपय विवादास्पद कवि प्रयोगों का विवेचन है। आनन्दवर्धन (850 ई.) का *ध्वन्यालोक* काव्यशास्त्र के क्षेत्र में एक युगान्तरकारी रचना है, जिसमें प्रतीयमान अर्थ को काव्य में महत्त्व दिया गया है, व्यंजना-शक्ति को पृथक् मान्यता दी गई है और ध्वनि को काव्य की आत्मा माना गया है। इस ग्रंथ में चार उद्योत हैं। पूरा ग्रन्थ कारिका और उसकी वृत्ति के रूप में है। कुन्तक ने *वक्रोक्तिजीवित* में वक्रोक्ति सिद्धांत का प्रतिपादन किया और वक्रोक्ति को काव्य का जीवन कहा गया है। इसमें चार उन्मेष हैं। राजशेखर की *काव्यमीमांसा* 18 अध्यायों का ग्रंथ है। इसमें काव्य के निर्माता के व्यक्तित्व के विकास की विवेचना हुई है। कवियों के लिए इसमें व्यावहारिक नियम दिए गए हैं। यह कवि शिक्षा का प्रथम ग्रन्थ है। महिमभट्ट का *व्यक्तिविवेक* आनन्दवर्धन की मान्यता की आलोचना करने के लिए लिखा गया था। धारानरेश भोज (1000 ई.) ने काव्यशास्त्र में *सरस्वतीकण्ठाभरण* तथा *शृंगारप्रकाश* नामक दीर्घकाय ग्रंथ लिखे। इसी काल में कश्मीर में अभिनवगुप्त ने नाट्यशास्त्र की टीका *अभिनवभारती* तथा ध्वन्यालोक पर लोचन टीका लिखी। मम्मट (बारहवीं शताब्दी) ने *काव्यप्रकाश* लिखकर ध्वनि-विरोधियों का खंडन करते हुए काव्य का सर्वांगपूर्ण विवेचन किया। इस ग्रन्थ पर सर्वाधिक टीकाएँ लिखी गईं, जिनसे काव्यप्रकाश के प्रभाव और लोकप्रियता का पता चलता है। विश्वनाथ (चौदहवीं शताब्दी ई.) का *साहित्यदर्पण* काव्यप्रकाश से भी अधिक व्यापक

Chapter-12.indd 123 12-08-2016 2:14:06 PM

रूप से काव्यशास्त्रीय विषयों का विवेचन करता है। इसमें नाट्य-शास्त्र को भी समाविष्ट किया गया है। जिस प्रकार काव्यप्रकाश में 10 उल्लास हैं, उसी प्रकार साहित्यदर्पण में 10 परिच्छेद हैं। दोनों ग्रंथ कारिका और वृत्ति के रूप में लिखे गए हैं। रूपगोस्वामी (पन्द्रहवीं शताब्दी) ने भक्ति रस को स्वतंत्र तथा महत्त्वपूर्ण रस सिद्ध करने के लिए दो विशाल ग्रन्थ लिखे— *भक्तिरसामृतसिन्धु* तथा *उज्ज्वलनीलमणि।* जगन्नाथ (सत्तरहवीं शताब्दी) का *रसगंगाधर* एक प्रौढ़ साहित्यशास्त्रीय ग्रंथ हैं। इसमें काव्य की नई परिभाषा देकर प्राचीन परिभाषाओं की आलोचना की गई है। इस ग्रन्थ में जगन्नाथ ने अपने ही उदाहरण दिए हैं। यह ग्रन्थ आननों में विभक्त है एवं अपूर्ण है।

11. **अन्य व्यावहारिक शास्त्र**— कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* का संबंध अन्य छोटे-छोटे शास्त्रों के साथ भी है। इनमें एक धनुर्वेद है जिसे उपवेद माना गया है। इस विषय का एक ग्रन्थ *कोदण्डमण्डन* मिलता है। शार्ङ्गधर की *वीरचिन्तामणि* में युद्ध-संबन्धी विषयों पर विचार किया गया है। इसी प्रकार गजशास्त्र और अश्वशास्त्र पर भी कई ग्रन्थ उपलब्ध हैं, जैसे— *मातङ्गलीला, अश्वायुर्वेद, अश्ववैद्यक* इत्यादि। शिल्पशास्त्र अथवा वास्तुशास्त्र पर भी कुछ साहित्य मिलता है, जैसे— *मनुष्यालयचन्द्रिका* (सात अध्याय), *मयमत* (24 अध्याय), भोज कृत *समराङ्गण-सूत्रधार,* मण्डन-रचित *वास्तुमण्डन* तथा *प्रासादमण्डन*। इनमें भवन-निर्माण की कला का विवरण प्राप्त होता है। *मानसार* में मूर्तिकला का वर्णन है। रत्नविज्ञान पर भी कई ग्रन्थ मिलते हैं, जैसे— बुद्धभट्ट की *रत्नपरीक्षा*, नारायण पण्डित की *नवरत्नपरीक्षा* इत्यादि। पाकशास्त्र पर *नलपाक* नामक ग्रन्थ है।

कुछ समय पूर्व महर्षि भरद्वाज कृत *यन्त्रसर्वस्व* नामक ग्रन्थ की प्राप्ति हुई है, जिसमें विमानविद्या का विवरण है। रसायनशास्त्र का प्राचीन भारत में बहुत प्रचार था। नागार्जुन इस विद्या के बड़े आचार्य थे। *रसार्णव* तथा *रसरत्नसमुच्चय* नामक ग्रन्थों में खनिज-धातुओं से विविध रसों के निर्माण की विधियाँ वर्णित हैं। बौद्धों ने इस क्षेत्र में बहुत काम किया।

वनस्पति-विज्ञान का अध्ययन भी आयुर्वेद का क्षेत्र है। अनेक वृक्षों तथा पौधों के गुण-धर्म, उन्हें पहचानने के साधन आदि का विचार करने के लिए कई ग्रन्थ लिखे गए, जैसे— *वृक्षायुर्वेद, उपवनविनोद* आदि। संगीतशास्त्र में भी प्राचीन भारत ने बहुत प्रगति की। नाट्यशास्त्र के अतिरिक्त *संगीतमकरन्द, संगीतरत्नाकर* (शार्ङ्गदेव-रचित), *सङ्गीतदर्पण* (दामोदर कृत) तथा *रागविबोध* इस विषय के प्रमुख ग्रन्थ हैं। नृत्यशास्त्र

Chapter-12.indd 124 12-08-2016 2:14:06 PM

पर भी *अभिनयदर्पण* (नन्दिकेश्वर कृत), *श्रीहस्तमुक्तावली* आदि ग्रन्थ हैं। चित्र-कला पर पृथक् प्रकरण *विष्णुधर्मोत्तर पुराण* में मिलता है।

कामशास्त्र के क्षेत्र में वात्स्यायन का *कामसूत्र* सुविख्यात ग्रन्थ है। इसका काल तीसरी शताब्दी ई. माना जाता है। इसमें गद्य-पद्य का मिश्रण है और सात खण्ड हैं, जिनमें प्रेम, विवाह, नायिका, वेश्या, प्रणय की सफलता के उपाय आदि अनेक विषयों का वर्णन है। तेरहवीं शताब्दी में इस पर यशोधर ने जयमङ्गला व्याख्या लिखी। इस शास्त्र के अन्य ग्रन्थ हैं— *रतिमञ्जरी, रतिरहस्य* तथा कल्याणमल्ल कृत *अनङ्गरङ्ग* इत्यादि।

इस विवेचन से सिद्ध होता है कि विभिन्न शास्त्रों के क्षेत्र में भारतीय विद्वान् सभी युगों में योगदान करते रहे। उन्होंने ज्ञान और व्यवहार का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं छोड़ा। साधारण व्यवहार की बात हो या गंभीर दार्शनिक चिंतन की, सभी को सूक्ष्म नियमों के द्वारा प्रतिपादित किया गया। इससे संस्कृत साहित्य की व्यापकता सिद्ध होती है।

ध्यातव्य बिन्दु

- वैदिक काल से ही शास्त्रीय साहित्य का विकास हुआ।
- वैदिक युग में शिक्षा, व्याकरण तथा निरुक्त अलग-अलग शास्त्र थे, किन्तु लौकिक संस्कृत युग में तीनों व्याकरण में ही समाविष्ट हो गए।
- वैदिक यज्ञों में वेदिका तथा यज्ञशाला के निर्माण के क्रम में गणित तथा भवन-विज्ञान (वास्तुशास्त्र) का जन्म हुआ।
- *अथर्ववेद* में प्राप्त चिकित्सा से सम्बद्ध संकेतों से आयुर्वेद का विकास हुआ।
- वैदिक साहित्य के समाज तथा धर्म संबंधी विचारों का संकलन करके धर्मशास्त्र और *ऋग्वेद* तथा *अथर्ववेद* के दार्शनिक चिन्तनों से दर्शनशास्त्र का विकास हुआ। दर्शनशास्त्र मीमांसा, वेदान्त, सांख्य, योग, न्याय और वैशेषिक— इन छः रूपों में विकसित हुआ।
- वेदों से ही कामशास्त्र, काव्यशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि भी विकसित हुए।
- वैदिक शब्दों के कोश को *निघण्टु* कहा गया। बाद में चल कर अमर सिंह का अमरकोश, हलायुध की *अभिधानरत्नमाला*, यादवप्रकाश की *वैजयन्ती* आदि प्रसिद्ध कोशग्रन्थ हुए।
- पिंगलाचार्य के द्वारा लिखित छन्द:सूत्र छन्दशास्त्र का प्राचीनतम ग्रन्थ है, जिसमें

Chapter-12.indd 125 12-08-2016 2:14:06 PM

वैदिक और लौकिक दोनों प्रकार के छन्दों का प्रयोग है। *सुवृत्ततिलक*, *वृत्तरत्नाकर* तथा *छन्दोमञ्जरी* आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं।

- सर्वप्रथम उपलब्ध व्याकरण ग्रन्थ पाणिनि की *अष्टाध्यायी* ही है। पाणिनि, उनके सूत्रों के वार्तिककार कात्यायन और महाभाष्यकार पतञ्जलि— इन तीनों आचार्यों को व्याकरणशास्त्र में त्रिमुनि कहा जाता है।
- पाणिनि के अतिरिक्त कातन्त्र, चान्द्र, शाकटायन आदि व्याकरण सम्प्रदाय भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित हैं।
- धर्मशास्त्रों में वर्णाश्रम व्यवस्था, राजा के कर्तव्य, विवाद का निर्णय आदि विविध विषयों पर प्रकाश डाला गया है। *मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, पराशरस्मृति, नारदस्मृति, विष्णुस्मृति* आदि प्रमुख स्मृतियाँ हैं।
- राजनीति विषयक सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रंथ कौटिल्य का *अर्थशास्त्र* है। व्यावहारिक नीति पर संस्कृत में अनेक ग्रन्थ लिखे गए हैं। *कामन्दकीयनीतिसार, नीतिवाक्यामृत, चाणक्यनीतिदर्पण, युक्तिकल्पतरु, नीतिरत्नाकर* और *शुक्रनीति* इस शास्त्र के प्रमुख ग्रन्थ हैं।
- धनुर्वेद, गजशास्त्र, अश्वशास्त्र, शिल्पशास्त्र, विमानविद्या, रसायनशास्त्र, वनस्पति-विज्ञान, संगीतशास्त्र आदि व्यावहारिक शास्त्र भी मिलते हैं।
- चिकित्साशास्त्र का प्राचीनतम ग्रन्थ *चरकसंहिता* है। इसके अतिरिक्त *सुश्रुतसंहिता, अष्टांगहृदय* और *अष्टांगसंग्रह* आदि इस शास्त्र के अन्य प्रमुख ग्रन्थ हैं।
- ज्योतिष और गणित शास्त्र का *आर्यभटीय* नामक ग्रन्थ आर्यभट्ट द्वारा रचित है। इसके बाद इस शास्त्र में वराहमिहिर ने *बृहत्संहिता, बृहज्जातक* और *लघुजातक* नामक ग्रन्थ लिखे।
- दार्शनिक धारा दो भागों में विभक्त हो गई— आस्तिक तथा नास्तिक। वैदिक परम्परा को आगे बढ़ाने वाली धारा आस्तिक और विरोध करने वाली धारा नास्तिक कही गई।
- काव्यशास्त्र को अलंकारशास्त्र एवं साहित्यशास्त्र भी कहते हैं। इस शास्त्र का प्राचीनतम ग्रन्थ भरतमुनि का *नाट्यशास्त्र* है। इसके बाद भामह, वामन, मम्मट आदि काव्यशास्त्री प्रसिद्ध हैं। जगन्नाथ का *रसगंगाधर* एक प्रकार से प्रौढ़ साहित्यशास्त्रीय ग्रन्थ है।

Chapter-12.indd 126 12-08-2016 2:14:06 PM

अभ्यास-प्रश्न

प्र. 1. शास्त्रीय साहित्य का विकास वस्तुत: किस युग से आरंभ होता है?

प्र. 2. वैदिक मंत्रों के शुद्ध उच्चारण तथा अर्थों को समझने के लिए किन शास्त्रों की आवश्यकता होती है?

प्र. 3. वैदिक यज्ञों में वास्तुकला की आवश्यकता क्यों पड़ी?

प्र. 4. आयुर्वेद का आधार कौन-सा ग्रन्थ है?

प्र. 5. दर्शनशास्त्र किन-किन रूपों में विकसित हुआ?

प्र. 6. काव्यशास्त्र के आविर्भाव का कारण बताइए।

प्र. 7. राजनीति का विवेचन पहले किस रूप में होता था?

प्र. 8. *अर्थशास्त्र* किस शास्त्र से विकसित हुआ?

प्र. 9. *निघण्टु* किसे कहते हैं? इसमें किसका संकलन किया गया है?

प्र.10. *अमरकोश* की रचना किस शताब्दी में हुई थी?

प्र.11. लेखक और ग्रन्थों को सही-सही मिलाइए—

क	ख
हलायुध	वैजयन्ती
यादवप्रकश	विश्वप्रकाश
महेश्वर	अभिधानरत्नमाला
हेमचन्द्र	अभिधानचिन्तामणि

प्र.12. *शब्दकल्पद्रुम* के लेखक कौन थे?

प्र.13. व्याकरणशास्त्र संबंधी सर्वप्रथम ग्रन्थ कौन-सा है और इसके रचयिता कौन है?

प्र.14. *अष्टाध्यायी* में कितने अध्याय और सूत्र हैं?

प्र.15. पाणिनि का समय क्या माना गया है?

प्र.16. कात्यायन कौन थे और व्याकरण में उनका क्या योगदान है?

प्र.17. *महाभाष्य* का विषय क्या है?

प्र.18. *सिद्धान्तकौमुदी* की रचना किसने की?

प्र.19. पाणिनीय व्याकरण में प्रवेश के लिए कौन-सा सरल ग्रन्थ लिखा गया है?

प्र.20. व्याकरण में 'त्रिमुनि' के नाम से कौन प्रसिद्ध हैं?

प्र.21. पाणिनीय व्याकरण पर लिखित कुछ दार्शनिक ग्रन्थों के नाम लिखिए।

प्र.22. पाँच वैयाकरणों के नाम लिखिए।

Chapter-12.indd 127 12-08-2016 2:14:06 PM

प्र. 23. धर्मशास्त्र के अंतर्गत किन विषयों का विचार प्राप्त होता है?
प्र. 24. स्मृतिग्रन्थों में सर्वाधिक महत्त्व किसका है? उसकी रचना किसने की?
प्र. 25. स्मृतियों का अध्ययन महत्त्वपूर्ण क्यों है?
प्र. 26. सभी मानवों का पिता किसे कहा गया है?
प्र. 27. *मनुस्मृति* में किसका विवेचन किया गया है?
प्र. 28. तीन स्मृतिग्रन्थों के नाम लिखिए।
प्र. 29. *मनुस्मृति* और *याज्ञवल्क्यस्मृति* के अध्यायों की संख्या बताइए।
प्र. 30. *वीरचिन्तामणि* में किस विषय पर विचार किया गया है तथा उसके लेखक कौन हैं?
प्र. 31. गजशास्त्र और अश्वशास्त्र के एक-एक ग्रन्थ का नाम दीजिए।
प्र. 32. गणित के क्षेत्र में किन-किन ग्रन्थकारों का महान् योगदान रहा है?
प्र. 33. फलित ज्योतिष पर वराहमिहिर के कौन-कौन से ग्रन्थ हैं?
प्र. 34. नास्तिक दर्शन के कितने रूप मिलते हैं? वे क्या-क्या हैं?
प्र. 35. चार्वाक दर्शन का संस्थापक कौन है?
प्र. 36. बौद्ध धर्म किसके द्वारा आरम्भ हुआ?
प्र. 37. किन-किन देशों में बौद्ध धर्म का विकास हुआ?
प्र. 38. बौद्ध दर्शन की शाखाओं के नाम लिखिए।
प्र. 39. आस्तिक दर्शन के छ: रूपों के नाम लिखिए।
प्र. 40. न्यायदर्शन का प्रवर्त्तक कौन है?
प्र. 41. *तात्पर्यटीका* किसकी रचना है?
प्र. 42. जयन्तभट्ट किस प्रसिद्ध ग्रन्थ का लेखक है?
प्र. 43. अलंकार शास्त्र के अन्य नाम बताइए।
प्र. 44. अर्थशास्त्र में किन-किन विषयों का वर्णन है? पचास शब्दों में लिखिए।
प्र. 45. नीतिशास्त्र के पाँच प्रमुख ग्रन्थों के नाम लिखिए।
प्र. 46. रिक्त स्थानों को भरिए—

(क) राजनीति विषयक सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ कौटिल्य का............................है।
(ख) कौटिल्य का दूसरा नाम .... है।
(ग) भरतमुनि .... शास्त्र के रचयिता हैं।
(घ) तत्त्वचिन्तामणि .... की रचना है।
(ड) मीमांसा का आरम्भ .... के मीमांसा सूत्रों से होता है।
(च) .... और .... ने मीमांसा में दो पृथक् संप्रदाय चलाए।
(छ) .... को उपवेद माना गया है।

प्र. 47. निम्नलिखित दर्शनों का प्रवर्त्तक कौन है?

(क) वेदान्तदर्शन ....

(ख) न्यायदर्शन ....

(ग) वैशेषिकदर्शन ....

(घ) सांख्यदर्शन ....

(ङ) योगदर्शन ....

(च) मीमांसादर्शन ....

प्र. 48. कोष्ठक से लेखकों को चुनिए—

काव्यालंकार ....

काव्यादर्श ....

काव्यालंकारसूत्र ....

ध्वन्यालोक . ...

वक्रोक्तिजीवित ....

काव्यमीमांसा ....

(कुन्तक, राजशेखर, भामह, दण्डी, आनन्दवर्धन, वामन)

प्र. 49. लेखक और शास्त्रों को ठीक-ठीक मिलाइए—

लेखक	**शास्त्र**
वाग्भट	कामसूत्र
नागार्जुन	चरकसंहिता
चरक	अष्टांगसंग्रह
वात्स्यायन	योगसार
भास्कराचार्य	पञ्चसिद्धान्तिका
वराहमिहिर	लीलावती

प्र. 50. ठीक-ठीक जोड़िए—

वनस्पतिविज्ञान	रागविबोध
शिल्पशास्त्र	नवरत्नपरीक्षा
मूर्तिकला	नलपाक
रत्नविज्ञान	वास्तुमण्डल
पाकशास्त्र	मानसार
रसरत्नसमुच्चय	यन्त्रसर्वस्व
विमानविद्या	रसायनशास्त्र
संगीतशास्त्र	उपवनविनोद

Chapter-12.indd 129 12-08-2016 2:14:06 PM

प्र.51. ग्रन्थकार, ग्रन्थ और काल ठीक-ठीक मिलाइए—

ग्रन्थकार	**ग्रन्थ**	**काल**
मम्मट	रसगंगाधर	चौदहवीं शताब्दी
विश्वनाथ	काव्यप्रकाश	बारहवीं शताब्दी
जगन्नाथ	साहित्यदर्पण	सोलहवीं शताब्दी

प्र.52. ठीक-ठीक जोड़िए—

बादरायण	वेदान्तसार
वल्लभाचार्य	श्रीभाष्य
रामानुज	द्वैतसिद्धान्त
मध्वाचार्य	शुद्धाद्वैतसिद्धान्त
सदानन्द	ब्रह्मसूत्र

Chapter-12.indd 130 12-08-2016 2:14:06 PM

परिशिष्ट — I

लेखकानुक्रमणिका

अंगिरा
अथर्वा
अन्नम्भट्ट
अमरु कवि
अम्बिकादत्त व्यास
अमीरचन्द्र शास्त्री
अशोक पुरनाटुकर
अश्वघोष
आनन्दवर्द्धन
आर्यभट्ट
आर्यशूर
इच्छाराम द्विवेदी
ईश्वरकृष्ण
ईश्वरदत्त
उदयनाचार्य
उद्योतकर
उमापति द्विवेदी
उमास्वाति (उमास्वामी)
ओगेटी परीक्षित शर्मा
कणाद
कपिल
कमला पाण्डेय
कर्णपूर (कविकर्णपूर)
कल्हण
कात्यायन
कालिदास
काशीनाथ द्विवेदी
कुन्तक
कुमारिल
कुम्भिदास
कृष्णद्वैपायन (वेदव्यीस)
कृष्णप्रसाद शर्मा
कृष्णमिश्र
के.के.आर. नायर
केदारभट्ट
केशवभट्ट
केशवमिश्र
केशवचन्द्र दाश
कौटिल्य
कौण्डभट्ट
क्षमाराव
क्षेमेन्द्र
गङ्गादास
गङ्गेश उपाध्याय
गुणभद्र
गुणाढ्य
गेटे
गोवर्धनाचार्य
गौतम
चण्डेश्वर
चिन्तामणिभट्ट
जगन्नाथ पण्डितराज

जगन्नाथ पाठक
जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि'
जम्बूद कवि
जम्बूदत्त
जयदेव
जयन्तभट्ट
जयादित्य
जानकी वल्लभ शास्त्री
जी. बी. पलसुले
जीवगोस्वामी
जैमिनि
जोनराज
टी. गणपति शास्त्री
तारानाथ तर्कवाचस्पति
तिरुमलाम्बास
त्रिविक्रमभट्ट
दण्डी
दयानिधि मिश्र
दामोदर
दामोदरभट्ट
दामोदरमिश्र
दीपक भट्टाचार्य
देवसूरि
द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री
धनपाल
धनेश्वर सूरि
धोयी कवि
नन्दिकेश्वरर
नयचन्द्र सूरि
नागार्जुन
नागेशभट्ट
नारायण पण्डित
नीलकण्ठ दीक्षित
पतञ्जलि
पद्म शास्त्री
पाणिनि
पार्जिटर
पिङ्गलाचार्य
पुष्पदन्त
प्रशस्यमित्र् शास्त्री
प्रभाकर
प्रभुनाथ द्विवेदी
बाणभट्ट प्रशस्तपाद
प्रभुनाथ शास्त्री
बटुकनाथ शास्त्री
बटुकनाथ शर्मा
बच्चुलाल अवस्थी
बनमाली बिश्वाल
बिल्हण बादरायण
बिहारी
बुद्धभट्ट
ब्रह्मगुप्त
ब्रह्मानन्द शुक्ल
भट्टनारायण
भट्ट मथुरानाथ शास्त्री
भट्टि
भट्टोजि दीक्षित
भरतमुनि
भर्तृहरि
भवभूति
भामह
भारद्वाज

Parishisht-I.indd 132 12-08-2016 2:14:52 PM

भारवि
भावमिश्र
भास
भास्कराचार्य
भास्कराचार्य त्रिपाठी
भोज
मख
मण्डन मिश्र
मथुरा प्रसाद दीक्षित
मधुसूदन
मध्वाचार्य
मम्मट
मयूर (मयूरभट्ट)
महालिङ्ग शास्त्री
महेन्द्र विक्रम
महेश्वर
माघ
माधवाचार्य
मुरारि
मेधाव्रत
मेरुतुङ्ग
यशपाल
यशोधर
याज्ञवक्य
यादवप्रकाश
यास्क
रत्नाकर
रमाकान्तशुक्ल
राजगोपाल आयङ्गर
राजशेखर
राजेन्द्र मिश्र
राधाकान्त देव
राधावल्लभ त्रिपाठी
रामकरण शर्मा
रामकुबेर मालवीय
रामचन्द्र
रामजी उपाध्याय
रामभद्र दीक्षित
रामभद्राचार्य
रामशरण त्रिपाठी
रामानुज
रामावतार शर्मा
रूपगोस्वामी
रेवाप्रसाद द्विवेदी
लक्ष्मणभट्ट
लगधाचार्य
वत्सराज
वररुचि
वराहमिहिर
वल्लभाचार्य
वल्लालसेन
वसन्त त्र्यम्बक शेबडे
वाक्पतिराज
वाग्भट
वाचस्पतिमिश्र
वात्याहियन
वामन
वामनभट्टबाण
वादिराजसूरि
वाल्मीकि
वासुदेव द्विवेदी
विज्ञानभिक्षु

Parishisht-I.indd 133 12-08-2016 2:14:52 PM

विद्यापति
विन्ध्येश्वरी प्रसाद
विशाखदत्त
विश्वनाथ
विश्वनाथ केशव छत्रे
विष्णुशर्मा
वीरनन्दी
विरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य
वेङ्कटराज
वेङ्कटनाथ
वेङ्कटाचल
वेङ्कटाध्वरि
वेदव्यास (व्यास)
वेदकुमार घई
वेदान्त देशिक
शङ्कराचार्य
शबरस्वामी
शाकटाय
शाकल्य
शापेनहावर
शार्ङ्गदेव
शार्ङ्गधर
शिवगोविन्द त्रिपाठी
शिवजी उपाध्याय
शिवदास
शिवस्वामी
शुक
शूद्रक
शेषश्रीकृष्ण
शौनक
श्यामिलक

श्रीकृष्ण गोस्वामी
श्रीधर
श्रीधर भास्कर वर्णेकर
श्री भाष्य विजय सारथि
श्री नारायण रथ
श्री निवास रथ
श्रीपाद हसूरकर
श्रीहर्ष
सङ्कर्षण
सत्यव्रत शास्त्री
सदानन्द
साधुशरण मिश्र
सिद्धार्थ
सुपद्म
सुबन्धु
सोड्ढल
सोमदेव
सोमदेव सूरि
सोमप्रभसूरि
सोमेश्वर
स्फोटायन
हरिभद्र
हरिचन्द्र
हरिदत्त शर्मा
हरिदास सिद्धान्त वागीश
हरिहरप्रसाद द्विवेदी
हर्ष
हर्षदेव माधव
हलायुध
हाल
हेमचन्द्र

Parishisht-I.indd 134 12-08-2016 2:14:53 PM

परिशिष्ट — II

ग्रन्थानुक्रमणिका

अग्निशिखा
अथर्ववेद
अथर्वांगिरसवेद (अथर्ववेद)
अनङ्गरङ्ग
अनर्घराघव
अनुभूति
अभिज्ञानशाकुन्तल
अभिधर्मकोष
अभिधानचिन्तामणि
अभिधानरत्नमाला
अभिनयदर्पण
अमरकोष
अमरुशतक
अर्थशास्त्र
अवदानशतक
अवन्तिसुन्दरीकथा
अविमारक
अश्ववेद्यक
अश्वायुर्वेद
अष्टागङ्संग्रह
अष्टागङ्हृदयसंहिता
अष्टाध्यायी
आनन्दवृन्दावनचम्पू
आपस्तम्ब-धर्मसूत्र
आपस्तम्ब-श्रौतसूत्र
आयुर्वेद
आर्चतिष
आर्यभटीय
आर्यासप्तशती
आर्षानुक्रमणी
आर्षेयब्राह्मण
आश्वलायन-गृह्यसूत्र
आश्वलायन-श्रौतसूत्र
ईशोपनिषद्
उत्कलिका
उत्तरपुराण
उत्तररामचरित
उदयसुनदरीकथा
उपमितिभवप्रपञ्चकथा
उपवनविनोद
उभयाभिसारिका (भाण)
उरुभंग
ऋक्प्रातिशाख्य
ऋक्सर्वानुक्रमणी

ऋग्वेद
ऋतुसंहार
ऐतरेय आरण्यक
ऐतरेय उपनिषद्
ऐतरेय ब्राह्मण
कोदण्डमण्डन
कठोपनिषद्
कथामुक्तावली
कथासरित्सागर
कप्फणाभ्युदय
कर्णभार
कर्पूरचरित (भाण)
कर्पूरमञ्जरी
कलाविलास
काठक संहिता
कात्यायन-श्रौतसूत्र
कादम्बरी
कापिष्ठल संहिता
कामन्दकीयनीतिसार
कामसूत्र
कालिका उपपुराण
कालोऽस्मि
काव्यप्रकाश
काव्यमीमांसा
काव्यादर्श
काव्यालङ्कार
काव्यालङ्कारसूत्र
काशिकावृत्ति
किरातार्जुनीय (व्यायोग)
कीर्तिकौमुदी
कुट्टनीमत
कुमारसंभव
कुलार्णवतन्त्र
कृष्णयजुर्वेद
केनोपनिषद्
कोदण्डिमण्डन
कौथुमशाखा
कौषीतकि आरण्यक
कौषीतकि उपनिषद्
कौषीतकि ब्राह्मण
खण्डनखण्डखाद्य
गङ्गालहरी
गाहासतसई (गाथासप्तशती)
गीतकन्दलिका
गीतमन्दाकिनी
गीतगोविन्द
गीता
गोपथब्राह्मण
गोपालकचम्पू
गोल
गउडवहो
गौतमधर्मसूत्र
ग्रहगणित
घटकर्पर काव्य

Parishisht-II.indd 136 12-08-2016 2:15:34 PM

चण्डीशतक
चतुर्वर्गसंग्रह
चन्द्रप्रभचरित
चरकसंहिता
चाणक्यनीतिदर्पण
चारुदत्त
चैतन्यचन्द्रोदय
चौरपञ्चाशिका
छन्दोऽनुक्रमणी
छन्दोमञ्जरी
छन्द:सूत्र
छान्दोग्योपनिषद्
छान्दोग्यब्राह्मण
छान्दोग्यसामवेद
जयमङ्गलव्याख्या
जसहरचरिउ
जातकमाला
जानकीहरण
जीवन्धरचम्पू
जैमिनीय-उपनिषद्
जैमिनीय-ब्राह्मण
जैमिनीय-श्रौतसूत्र
जैमिनीय-सामवेद
ज्योतिर्विदाभरण
तत्त्वकौमुदीटीका
तत्त्वचिन्तामणि
तत्वार्थाधिगमसूत्र
तदेव गगनं सैव धरा
तन्त्रवार्तिक
तन्त्रराज
तर्कभाषा
तर्कसंग्रह
ताण्ड्य-ब्राह्मण
तात्पर्यटीका
तात्पर्यटीकापरिशुद्धि
तिलकमञ्जरी
तैत्तिरीयारण्यक
तैत्तिरीय-उपनिषद्
तैत्तिरीय-ब्राह्मण
तैत्तिरीय-संहिता (कृष्ण यजुर्वेद)
त्रिपुरदाह (डिम)
दमयन्तीकथा (नलचम्पू)
दशकुमारचरित
दशावतारचरित
दर्पदलन
दिव्यावदान
दूतघटोत्कच
दूतवाक्य
दैवतब्राह्मण
धनुर्वेद
धर्मशर्माभ्युदय
धूर्त्तविटसंवाद
ध्वन्यालोक
नलचम्पू (दमयन्तीकथा)

Parishisht-II.indd 137 12-08-2016 2:15:34 PM

नलपाक
नवरत्नपरीक्षा
नवसाहसाकदेवचरित
नागानन्द
नाट्यशास्त्र
नारद उपपुराण
नारदस्मृति
निघण्टु
निरुक्त
निर्झरिणी
निस्यन्दिनी
निष्कान्तितः सर्वे
नीतिप्रदीप
नीतिरत्नाकर
नीतिवाक्यामृत
नीतिशतक
नीतिसार
नीलकण्ठविजयचम्पू
नीलमतपुराण
नृसिंह उपपुराण
नृसिंहचम्पू
नेमिनिर्माणकाव्य
नैषधीयचरित
न्यायमञ्जरी
न्यायवार्तिक
न्यायसूत्र
पञ्चतन्त्र
पञ्चरात्र
पञ्चसिद्धान्तिका
पतञ्जलिचरित
पद्मप्राभृतक
पदार्थधर्मसंग्रह
परशुराम कल्पसूत्र
पराशर-उपपुराण
पर्यायकोश
पवनदूत
पादताडितक
पारिजातहरणचम्पू
पुरन्ध्री पञ्चकम्
पुरुष-परीक्षा
पृथ्वीराज-विजय
प्रक्रिया-कौमुदी
प्रतिज्ञायौगन्धरायण
प्रतिमानाटक
प्रपञ्चसार
प्रबन्धकोश
प्रबन्धचिन्तामणि
प्रबोधचन्द्रोदय
प्रश्नोपनिषद्
प्रासादमण्डन
प्रियदर्शिका
बालचरित
बालभारत
बालरामायण

Parishisht-II.indd 138 12-08-2016 2:15:34 PM

बीजगणित
बुद्धचरित
बृहत्कथा
बृहत्कथामञ्जरी
बृहत्कथाश्लोकसंग्रह
बृहतीटीका
बृहज्जातक
बृहदारण्यक
बृहदारण्यकोपनिषद्
बृहद्देवता
बौधायनधर्मसूत्र
बौधायनश्रौतसूत्र
ब्रह्मसूत्र
ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त
भगवद्गीता
भजगोविन्दम्
भट्टिकाव्य (रावणवध)
भागवतपुराण
भाति मे भारतम्
भामिनीविलास
भार्गवराघवीयम्
भारतचम्पू
भारतमञ्जरी
भारद्वाज-श्रौतसूत्र
भावप्रकाश
भाषापरिच्छेद
भोजप्रबन्ध

मत्तविलासप्रहसन
मदालसाचम्पू
मध्यमव्यायोग
मनुष्यालयचन्द्रिका
मनुस्मृति
मयमत
महानिर्वाणतन्त्र
महाभारत
महावीरचरित
माण्डूक्योपनिषद्
मातङ्गलीला
माध्यमिककारिका
मानवश्रौतसूत्र
मानसार
मालतीमाधव
मालविकाग्निमित्र
मीमांसासूत्र
मुण्डकोपनिषद्
मुद्राराक्षस
मृच्छकटिक
मेघदूत
मैत्रायणी—उपनिषद् (मैत्री)
मैत्रायणीय-यजुर्वेद
मैत्रायणीयारण्यक
मैत्रायणीसंहिता
मोहमुद्गर
यजुर्वेद

Parishisht-II.indd 139 12-08-2016 2:15:34 PM

यन्त्रसर्वस्व
यशस्तिलकचम्पू
याजुष-ज्यौतिष
याज्ञवल्क्य-स्मृति
यादवाभ्युदय
युक्तिकल्पतरु
योगवासिष्ठ
योगसार
योगसूत्र
रक्षत गंगां
रघुवंश
रतिमञ्जरी
रतिरहस्य
रत्नपरीक्षा
रत्नावली
रसगङ्गाधर
रसरत्नसमुच्चय
रसार्णव
रागविबोध
रागिणी
राजतरङ्गिणी
राजनीतिसमुच्चय
रामायण
रामायणचम्पू
रामायणमञ्जरी
रावणवध
रूक्मिणीहरण
लङ्कावतारसूत्र
लघुजातक
लघुसिद्धान्तकौमुदी
ललितविस्तर
लसल्लतिका
लीलावती
वंशब्राह्मण
वक्रोक्तिजीवित
वरदाम्बिकापरिणय-चम्पू
वसिष्ठधर्मसूत्र
वाक्यपदीय
वाचस्पत्य
वाजसनेयिसंहिता
वाराहश्रौतसूत्र
वासवदत्ता
वास्तुमण्डन
विक्रमाङ्कदेवचरित
विक्रोमोर्वशीय
विचित्रपरिषद्यात्रा
विद्धशालभञ्जिका
विद्यामाधवीय
विश्वगुणादर्शचम्पू
विश्वप्रकाश
विष्णुधर्मसूत्र
विष्णुधर्मोत्तरपुराण
विष्णुस्मृति
वीरचिन्तामणि

Parishisht-II.indd 140 12-08-2016 2:15:34 PM

वृक्षायुर्वेद
वृत्तरत्नाकर
वृत्तसंहिता
वेणीसंहार
वेतालपञ्चविंशतिका
वेदाङ्गज्यौतिष
वेदान्तसार
वैजयन्तीकोष
वैयाकरणसिद्धान्तमञ्जूषा
वैराग्यशतक
वैशेषिकसूत्र
व्यक्तिविवेक
शतपथब्राह्मण
शत्रुञ्जय
शब्दकल्पद्रुम
शाङ्करभाष्य
शाकलशाखा
शाङ्खायन-श्रौतसूत्र
शाम्बु-उपपुराण
शारदातिलक
शारिपुत्रप्रकरण
शार्ङ्गधरसंहिता
शिवपुराण
शिवमहिम्नस्तोत्र
शिवलीलार्णव
शिशुपालवध
शुक्रनीति
शुकसप्तति
शुक्लयजुर्वेद
शृंगारतिलक
शृंगारशतक
श्रीकण्ठचरित
श्रीभाष्य
श्रीहस्तमुक्तावली
श्लोकवार्तिक
श्वेताश्वतर उपनिषद्
षड्दर्शनसमुच्चय
षड्विंशब्राह्मण
सत्तसई
सद्धर्मपुण्डरीक
समयमातृका
समराङ्गणसूत्रधार
समुद्रमन्थन
सर्वदर्शनसंग्रह
सर्वानुक्रमणी (अथर्ववेद)
सङ्कल्पसूर्योदय
सङ्गीतदर्पण
सङ्गीतमकरन्द
सङ्गीतरत्नाकर
संहितोपनिषद्-ब्राह्मण
सांख्यकारिका
सांख्यप्रवचनभाष्य
सांख्यसूत्र
सामविधानब्राह्मण

Parishisht-II.indd 141 12-08-2016 2:15:34 PM

सामवेद
साहित्यदर्पण
सिंहासनद्वात्रिंशत्पुत्तलिका
सिद्धान्तकौमुदी
सिद्धान्तशिरोमणि
सुधालहरी
सुवृत्ततिलक
सुश्रुतसंहिता
सूर्य-उपपुराण
सूर्यशतक
सेव्यसेवकोपदेश
सौन्ददरनन्द
सौन्दर्यलहरी
स्वप्नवासवदत्त
हंसदूत
हनुमन्नाटक
हम्मीरमहाकाव्य
हरविजय
हर्षचरित
हास्यचूडामणि (प्रहसन)
हितोपदेश
हिरण्यकेशी धर्मसूत्र

Parishisht-II.indd 142 12-08-2016 2:15:34 PM

परिशिष्ट — III

ग्रन्थ एवं ग्रन्थकारों की कालक्रमसारिणी

ऋग्वेद		2000 ई. पू. से 1300 ई. पू.
वैदिक साहित्य		
	संहिता	
	ब्राह्मण	2000 ई. पू. से 800 ई. पू.
	आरण्यक	
	उपनिषद्	
वेदांग साहित्य	(शिक्षा, कल्प, व्याकरण निरुक्त, छन्द, ज्यौतिष)	800 ई. पू. से आरंभ
लगधाचार्य	वेदांग ज्योतिष	1400 ई. पू. से 800 ई. पू.
यास्क	निरुक्त	800 ई. पू.
पिंगलाचार्य	छन्द:सूत्र	800 ई. पू. से 700 ई. पू.
कपिल	सांख्यसूत्र	700 ई. पू.
जैमिनि	मीमांसासूत्र	600 ई. पू.
कणाद	वैशेषिकसूत्र	500 ई. पू.
चरक	चरकसंहिता	500 ई. पू. से 200 ई. पू.
सुश्रुत	सुश्रुतसंहिता	500 ई. पू.
पाणिनि	अष्टाध्यायी	500 ई. पू.
वाल्मीकि	रामायण	500 ई. पू.
व्यास	महाभारत	400 ई. पू.
आश्वलायन	आश्वलायनगृह्यसूत्र	400 ई. पू.
		ग्रन्थ एवं ग्रन्थकारों की कालक्रमसारिणी 137
कौटिल्य	(चाणक्य) अर्थशास्त्र	400 ई. पू.

Parishisht-III.indd 143 12-08-2016 2:16:24 PM

वादरायण	ब्रह्मसूत्र	300 ई. पू.
व्यास	पुराण	300 ई. पू.
कात्यायन (वररुचि)	वार्तिक (अष्टाध्यायी पर)	300 ई. पू.
पतञ्जलि	महाभाष्य,	
	योगसूत्र	185 ई. पू.
भरतमुनि	नाट्यशास्त्र	100 ई. पू. से 300 ई. पू.
भास	प्रतिभा, अभिषेक बालचरित,	100 ई. पू. से 200 ई. के बीच
	पञ्चरात्र, मध्यमव्यायोग	
	कर्णभार,	
	उरूभंग दूतवाक्य,	
	दूतघटोत्कच।	
	स्वप्नवासवदत्त,	
	प्रतिज्ञायौगन्धरायण	
	आविमारक और चारुदत्त।	
मनु	मनुस्मृति	200 ई. पू. से 200 ई. के बीच
कालिदास	रघुवंश, कुमारसम्भव,	100 ई. पू.
	ऋतुसहार,	
	मेघदूत,	
	मालविकाग्निमित्र,	
	विक्रमोर्वशीय,	
	अभिज्ञानशाकुन्तल।	
अश्वघोष	बुद्धचरित,	प्रथम शताब्दी ई.
	सौन्दरनन्द,	
	शारिपुत्रप्रकरण	
गुणाढ्य	बृहत्कथा	प्रथम शताब्दी ई.
उमास्वामी (उमास्वाति)	तत्वार्थाधिगमसूत्र	100 ई. के आस-पास
हाल (शालिवाहन)	गाहा सतसई (गाथा सप्तशती)	प्रथम या द्वितीय शताब्दी ई.
प्रशस्तपाद	पदार्थधर्मसंग्रह	द्वितीय शताब्दी ई.

Parishisht-III.indd 144 12-08-2016 2:16:24 PM

वात्स्यायन	न्यायसूत्रभाष्य	द्वितीय शताब्दी ई.
शर्ववर्मा	कातन्त्र	द्वितीय शताब्दी ई.
शबरस्वामी	शाबरभाष्य	द्वितीय शताब्दी ई.
	नारदस्मृति	दूसरी शताब्दी से पांचवी शताब्दी ई.
विष्णुशर्मा	पञ्चतन्त्र	दूसरी शताब्दी से छठी शताब्दी के बीच
अमरसिंह	अमरकोश	तीसरी शताब्दी ई. (पूर्वार्ध)
वात्स्यायन	कामसूत्र	तीसरी शताब्दी ई.
याज्ञवल्क्यस्मृति		तीसरी शताब्दी ई.
आर्यशूर	जातकमाला	तीसरी-चौथी शताब्दी ई.
शूद्रक	मृच्छकटिक	तीसरी-चौथी शताब्दी ई.
ईश्वरकृष्ण	सांख्यकारिका	चौथी-शताब्दी ई.
चन्द्रगोमी	चान्द्रव्याकरण	चौथी-पाँचवी शताब्दी ई.
आर्यभट	आर्यभटीय	पाँचवीं शताब्दी ई. (उत्तरार्ध)
विशाखदत्त	मुद्राराक्षस	पाँचवी छठी शताब्दी ई.
कुमारदास	जानकीहरण	छठी शताब्दी ई.
दण्डी	दशकुमारचरित, काव्यादर्श, अवन्तिसुन्दरीकथा	छठी शताब्दी ई.
उद्योतकर	न्यायवार्तिक	छठी शताब्दी ई.
भारवि	किरातार्जुनीय	छठी शताब्दी ई.
भर्तृहरि	वाक्यपदीय	छठी शताब्दी ई.
वराहमिहिर	पञ्चसिद्धान्तिका वृत्तसंहिता, बृहज्जातक, लघुजातक	550 ई. के आसपास
भट्टि	रावणवध या भट्टिकाव्य	500 ई. से 650 ई. के बीच
भामह	काव्यालंकार	छठी शताब्दी ई.
माघ	शिशुपालवध	सातवीं शताब्दी ई.

Parishisht-III.indd 145 12-08-2016 2:16:24 PM

शंकराचार्य	भजगोविन्दम्, सौन्दर्यलहरी, शांकरभाष्य	सातवीं शताब्दी
बाणभट्ट	कादम्बरी, हर्षचरित, चण्डीशतक	सातवीं शताब्दी का पूर्वार्ध
मयूरभट्ट	सूर्यशतक	सातवीं शताब्दी का पूर्वार्ध
सुबन्धु	वासवदत्ता	सातवीं शताब्दी का पूर्वार्ध
भर्तृहरि	श्रृंगारशतक, नीतिशतक, वैराग्यशतक	सातवीं शताब्दी ई.
ब्रह्मगुप्त	ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त	सातवीं शताब्दी ई.
महेन्द्रविक्रम	मत्तविलासप्रहसन	सातवीं शताब्दी ई.
कामन्दकि	कामन्दकीयनीतिसार	सातवीं शताब्दी ई.
प्रभाकर मिश्र	बृहतीटीका (शाबरभाष्य पर)	सातवीं शताब्दी ई.
हर्ष	प्रियदर्शिका, रत्नावली, नागानन्द	सातवीं शताब्दी ई. का पूर्वार्ध
भवभूति	महावीरचरित, मालती-माधव, उत्तररामचरित	सातवीं शताब्दी ई. के आसपास
अमरुकवि	अमरुशतक	सातवीं शताब्दी
वाक्पतिराज	गउडवहो	750 ई. के आसपास
भट्टनारायण	वेणीसंहार	सातवीं आठवीं शताब्दी ई.
दामोदरभट्ट	कुट्टनीमत	आठवीं शताब्दी ई.
हरिभद्र	षड्दर्शनसमुच्चय	आठवीं शताब्दी ई.
मुरारि	अनर्घराघव	आठवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध
वामन	काशिकावृत्ति, काव्यालंकारसूत्र	आठवीं-दसवीं शताब्दी ई.
पुष्पदन्त	शिवमहिम्न स्तोत्र	आठवीं-दसवीं शताब्दी ई.
बुद्धस्वामी	बृहत्कथाश्लोकसंग्रह	आठवीं-नवीं शताब्दी ई.
वामन	काव्यालंकारसूत्र	आठवीं शताब्दी ई.
आनन्दवर्धन	ध्वन्यालोक	850 ई.
वाचस्पति मिश्र	तात्पर्यटीका	तत्त्वकौमुदीटीका (सांख्य)

Parishisht-III.indd 146 12-08-2016 2:16:24 PM

नवीं शताब्दी ई.	तत्त्वचिन्तामणि	
शाकटायन	(पाल्यकीर्ति) शाकटायन व्याकरण नवीं शताब्दी ई.	
दामोदरमिश्र	हनुमन्नाटक	नवीं शताब्दी ई.
रत्नाकर	हरविजय	नवीं शताब्दी ई.
शिवस्वामी	कप्फणाभ्युदय	नवीं शताब्दी ई.
राजशेखर	काव्यमीमांसा, बालरामायण, बालभारत, कर्पूरमञ्जरी	नवीं शताब्दी ई.
	विद्धशालभञ्जिका	नवीं शताब्दी ई.
सिद्धार्थ	उपमितिभवप्रपञ्चकथा	नवीं शतब्दी ई.
श्यामिलक	पादताडितक	800-900 ई. के बीच
जयन्तभट्ट	न्यायमञ्जरी	दसवीं शताब्दी ई.
सोमदेव सूरि	नीतिवाक्यामृत, यशस्तिलकचम्पू	दसवीं शताब्दी ई.
धनपाल	तिलक मञ्जरी	दसवीं शताब्दी ई.
हरिचन्द्र	जीवन्धरचम्पू	दसवीं शताब्दी ई.
त्रिविक्रमभट्ट	नलचम्पू, मदालसाचम्पू	दसवीं शताब्दी ई. का पूर्वार्ध
हलायुध	अमिधानरत्नमाला	दसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध
कुन्तक	वक्रोक्तिजीवित	ग्यारहवीं शताब्दी ई.
महिमभट्ट	व्यक्तिविवेक	ग्यारहवीं शताब्दी ई.
क्षेमेन्द्र	सुवृत्ततिलक, दशावतारचरित, कलाविलास, दर्पदलन, चतुर्वर्गसंग्रह, बृहत्कथा मञ्जरी, समयमात्रिका	ग्यारहवीं शताब्दी ई.
यादवप्रकाश	वैजयन्तो	ग्यारहवीं शताब्दी ई.
कृष्णमित्र	प्रबोधचन्द्रोदय	ग्यारहवीं शताब्दी ई.
सोमदेव	कथासरित्सागर	ग्यारहवीं शताब्दी ई.
सोड्ढल	उदयसुन्दरीकथा	ग्यारहवीं शताब्दी ई.
रामानुज	श्रीभाष्य	ग्यारहवीं शताब्दी ई.
हेमचन्द्र	कुमारपालचरित,	1088 ई. से 1172 ई.

Parishisht-III.indd 147 12-08-2016 2:16:24 PM

	अभिधानचिन्तामणि	
बिल्हण	विक्रमांकदेवचरित, चौरपञ्चाशिका	ग्यारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध
भोज	रामायणचम्पू, युक्तिकल्पतरू	ग्यारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध
पद्मगुप्त	नवसाहसांकचरित	1005 ई.
केशवमिश्र	तर्कभाषा	बारहवीं शताब्दी ई.
अनुभूतिस्वरूप	सारस्वतप्रक्रिया	बारहवीं शताब्दी ई.
वत्सराज	किरातार्जुनीय, रूक्मिणीहरण, त्रिपुरदाह, समुद्रमंथन, कर्पूरचरित, हास्यचूडामणि	बारहवीं शताब्दी ई.
भास्कराचार्य	सिद्धान्तशिरोमणि, लीलावती, बीजगणित, ग्रहगणित, गोल	बारहवीं शताब्दी ई.
मम्मट	काव्यप्रकाश	बारहवीं शताब्दी ई.
जल्हण	सोमपालचरित	बारहवीं शताब्दी ई.
महेश्वर	विश्वप्रकाश	बारहवीं शताब्दी ई.
अज्ञात	पृथ्वीराजविजय	1192 ई.
कल्हण	राजतरगिंणी	1148 ई. से 1151 ई. तक
मड	श्रीकण्ठचरित	बारहवीं शताब्दी ई.
श्रीहर्ष	नैषधीयचरित	बारहवीं शताब्दी ई.
गोवर्धनाचार्य	आर्यासप्तशती	बारहवीं शताब्दी ई.
जयदेव	गीतगोविन्द	बारहवीं शताब्दी ई.
विज्ञानभिक्षु	सांख्यप्रवचनभाष्य	तेरहवीं शताब्दी ई.
गगेंश उपाध्याय	तत्त्वचिन्तामणि	तेरहवीं शताब्दी ई.
मध्वाचार्य	पूर्णप्रज्ञभाष्य	तेरहवीं शताब्दी ई.
यशोधर	जयमंगलव्याख्या (कामसूत्र पर)	तेरहवीं शताब्दी ई.
यशपाल	मोहमुद्गर	तेरहवीं शताब्दी ई.
शार्गंधर	शार्ङ्गंधर संहिता	तेरहवीं शताब्दी ई.
सोमेश्वर	कीर्तिकौमुदी	तेरहवीं शताब्दी ई.

Parishisht-III.indd 148 12-08-2016 2:16:24 PM

गंगादास	छन्दोमंजरी	तेरहवीं शताब्दी ई. से पन्द्रहवीं शताब्दी
राजशेखर	प्रबन्धकोश	1350 ई.
विद्यापति	पुरुषपरीक्षा	चौदहवीं शताब्दी ई.
नारायण पंडित	हितोपदेश	चौदहवीं शताब्दी ई.
माधवाचार्य	सर्वदर्शनसंग्रह	चौदहवीं शताब्दी ई.
विश्वनाथ	साहित्यदर्पण	चौदहवीं शताब्दी ई.
मरूतुंग	प्रबन्धचिन्तामणि	चौदहवीं शताब्दी ई.
नयचन्द्रसूरि	हम्मीरमहाकाव्य	चौदहवीं शताब्दी ई.
वेदान्तदेशिक	संकल्पसूर्योदय	चौदहवीं शताब्दी ई.
सुपद्‌म	सौपद्मव्याकरण	चौदहवीं शताब्दी ई.
रामचन्द्र	प्रक्रियाकौमुदी	चौदहवीं शताब्दी ई.
जोनराज	राजतरगिंणी	1450 ई.
श्रीवर	जैनराजतरगिंणी	1485 ई.
अनन्तभट्ट	भारतचम्पू	पन्द्रहवीं शताब्दी ई.
केदारभट्ट	वृत्तरत्नाकर	पन्द्रहवीं शताब्दी ई.
वल्लभाचार्य	अणुभाष्य	1479 ई. - 1544 ई.
बल्लालसेन	भोजप्रबन्ध	सोलहवीं शताब्दी ई.
कविकर्णपूर	आनन्दवृन्दावनचम्पू	सोलहवीं शताब्दी ई.
शेषश्रीकृष्ण	पारिजातहरणचम्पू	सोलहवीं शताब्दी ई.
जीवगोस्वामी	गोपालचम्पू	सोलहवीं शताब्दी ई.
तिरूमलाम्बा	वरदाम्बिका-परिणयचम्पू	सोलहवीं शताब्दी ई.
शुक	राजतरगिंणी	1596 ई.
कर्णपूर	चैतन्यचन्द्रोदय	सोलहवीं शताब्दी ई.
भावमिश्र	भावप्रकाश	सोलहवीं शताब्दी ई.
भट्टोजिदीक्षित	सिद्धान्तकौमुदी	सोलहवीं शताब्दी ई.
अन्नंभट्ट	तर्कसंग्रह	सत्रहवीं शताब्दी ई.
विश्वनाथ	न्यायपञ्चानन, भाषा-परिच्छेद, न्यायसूत्रवृत्ति	सत्रहवीं शताब्दी ई.

Parishisht-III.indd 149 12-08-2016 2:16:24 PM

कौण्डभट्ट	वैयाकरणभूषणसार	सत्रहवीं शताब्दी ई.
नागेशभट्ट	वैयाकरण- सिद्धान्तलघुमंजूषा	सत्रहवीं शताब्दी ई.
सदानन्द	वेदान्तसार	सत्रहवीं शताब्दी ई.
नीलकण्ठदीक्षित	नीलकण्ठविजय- चम्पू	सत्रहवीं शताब्दी ई.
जगन्नाथ	(पण्डितराज) रसगंगाधर, भामिनिविलास, गगांलहरी, सुधालहरी	सत्रहवीं शताब्दी ई.
वेंकटाध्वरि	विश्वगुणादर्शचम्पू	सत्रहवीं शताब्दी ई.
अम्बिकादत्त व्यास	शिवराजविजय	1858-1900 ई.
तारानाथतर्कवाचस्पति	वाचस्पत्य	1873-1884 ई.
राधाकान्तदेव-शब्दकल्पद्रुम		उन्नीसवीं शताब्दी ई.
क्षमाराव (पण्डिता)	कथामुक्तावली, विचित्रपरिषद् यात्रा	1890-1954 ई.

Parishisht-III.indd 150 12-08-2016 2:16:25 PM

परिशिष्ट — IV

संस्कृतपत्रिकाणाम् अनुक्रमणिका

1. *अजस्त्रा* (त्रैमासिकपत्रिका)
अखिल भारतीय संस्कृत परिषद्
अलीगंज, लखनऊ (उत्तरप्रदेश)

2. *अभिव्यक्तिः*
भारत संस्कृत परिषद्,
संकटमोचन आश्रम, रामकृष्णपुर,
सेक्टर-6, नवदेहली-22

3. *अभिसंस्कृतम्* (मासिकम्)
3/129, विष्णुपुरी,
कानपुर, उत्तरप्रदेश

4. *अमृतभाषा*
कालिदासपुरम्, शान्तिनगरम्,
पत्रालयः-हरिपुर,
मोतीगञ्ज, बालेश्वर

5. *अमृतवाणी*
अग्रवालविद्यापीठम्, हल्दीपदा,
बालेश्वर, ओड़िसा-756027

6. *अर्वाचीनसंस्कृतम्* (त्रैमासिकम्)
देववाणी परिषद्, आर-6,
वाणी विहार, नवदेहली-110059

7. *आन्वीक्षिकी*
उत्तराखण्ड संस्कृत
अकादमी हरिद्वार

8. *आरण्यकम्*
अखिल भारतीय संस्कृत परिषद्
अलीगंज, लखनऊ
(उत्तरप्रदेश)

9. *आर्ष-ज्योतिः* (मासिकपत्रिका)
श्रीमद्दयानन्द वेद विद्यालय,
119, गौतमनगर, नवदेहली-89

10. *कामधेनुः* (पाक्षिकपत्रम्)
भारतविद्यापीठ,
पत्रालय-इरैलियर
त्रिचुरम्, केरलः-680501

11. *गाण्डीवम्* (साप्ताहिकम्)
इन्दरनिवास, ए.जी. मार्गः,
मुम्बई, महाराष्ट्रम्-400004

12. *गीर्वाणसुधा* (मासिकी)
इन्दरनिवास, ए.जी. मार्गः,
मुम्बई, महाराष्ट्रम्-400004

13. *गुञ्जारव:*
कालेश्वरमन्दिर, घुमेरगली,
अहमदनगर, महाराष्ट्रम्

14. *गुरुकुल शोधभारती*
गुरुकुल कांगडी
विश्वविद्यालय हरिद्वार,
उत्तराखण्ड

15. *गैर्वाणी* (मासिकी)
संस्कृतभवन, प्रचारिणी सभा,
चित्तूर, आन्ध्रप्रदेश-510700

16. *गोरखपुरचर्चा*
बक्शीपुर, गोरखपुर
उत्तरप्रदेश-273001

17. *चन्दमामा* (मासिकी)
डाल्टन एजेन्सी, वाडापलानी,
चेई, तमिलनाडु-600026

18. त्रिस्कन्धज्योतिष:
65, ब्रह्मानन्दननगर,
दुर्गाकुण्ड, वाराणसी-210005

19. *दिव्यज्योति:* (मासिकपत्रिका)
आनन्दलाज, जाखू, शिमला,
हिमाचलप्रदेश

20. *दिशाभारती* (पाक्षिकी)
43, उत्तरांचल एन्क्लेवम,
कमालपुर, बुराड़ी, देहली-110084

21. *दूर्वा* (पाक्षिकपत्रम्)
कालिदास संस्कृत आकदमी,
उज्जैन, मध्यप्रदेश-461002

22. *नवप्रभातम्* (दैनिकम्)
शारदानगर, कानपुर
उत्तरप्रदेश-271005

23. *नैसर्गिकी*
राष्ट्रिय नैसर्गिक शिक्षानुसन्धान
संस्थानम्, 38, मानसनगरम्,
वाराणसी, उत्तरप्रदेश-271005

24. *परिशीलनम्*
उत्तरप्रदेश संस्कृत सस्थानम्
'संस्कृतभवनम्'
नया हैदराबादम्
लखनऊ, उत्तरप्रदेश-226007

25. *पारिजातम्* (मासिकम्)
105/94, प्रेमनगर,
कर्णपुर (कानपुर),
उत्तरप्रदेश

26. *पावमानी*
गुरुकुल-प्रभात-आश्रम:, टीकरी,
भोलाझालाम्, मेरठम्, उत्तरप्रदेश:

27. *पूर्णत्रयी* (अर्धवार्षिकी)
राजकीय संस्कृत महाविद्यालय
त्रिपुनीथरा, केरल:-682301

Parishisht-IV.indd 152 12-08-2016 2:17:05 PM

28. *प्रभातम्* (त्रैमासिकम्)
समन्वयकमुटीरम्,
ई-1052, राजाजीपुर
लखनऊ, उत्तरप्रदेश-226017

29. *प्रियवाक्*
संस्कृतभवनम्,
लोकनाथमार्ग,
पुरी, ओड़िसा

30. *ब्रजगन्धा* (त्रैमासिकपत्रिका)
रामाश्रय, कृष्णापुरी, मथुरा,
उत्तरप्रदेश-281001

31. *भारतमुद्रा* (मासिकी)
पूर्णाकर, त्रिचूर,
केरलः-680550

32. *भारती* (मासिकम्)
भारती-भवन, बी-14,
विजयख नगर,
जयपुर, राजस्थान

33. *भारतोदयः* (मासिकपत्रिका)
गुरुकुमहाविद्यालय,
ज्वालापुर, हरिद्वार,
उत्तरप्रदेशः-249405

34. *भास्वती* (षाण्मासिकपत्रिका)
संस्कृतविभाग, काशी विद्यापीठ,
वाराणसी, उत्तरप्रदेशः

35. *युगगतिः* (साप्तहिकपत्रिका)
बक्शीपुर,
गोरखपुर,
उत्तरप्रदेश-273001

36. *रसिकप्रिया*
84 राधापेठ, हाई रोड, मेलपुर
चेई-600004,

37. *रावणेश्वरकाननम्*
चिताभूमि चन्द्रदत्त दारा रोड,
पी.टी. विलासी, बैजनाथ, देवधर,
बिहार-814117

38. *लोकसंस्कृतम्* (पाक्षिकम्)
संस्कृतकार्यालय
श्री अरविन्द आश्रम,
पाण्डिचेरी, तमिलनाडु-605002

39. *वाक्* (पाक्षिकं समाचारपत्रम्)
11, नालापानीमार्ग, चघवसति,
उत्तरप्रदेश, देहरादूनम्-240001

40. *वाङ्मयम्*-(ऊर्धवार्षिक)
चौधरी महादेव प्रसाद
महाविद्यालय, इलाहाबाद,
उत्तरप्रदेश

41. *संस्कृत वाङ्यमी*
लखनऊ विश्वविद्यालयः,
वाराणसी, उत्तरप्रदेश

Parishisht-IV.indd 153 12-08-2016 2:17:05 PM

42. *विश्वभाषा* (त्रैमासिकपत्रिका)
विश्वसंस्कृतप्रतिष्ठान, रामनगरदुर्गम
वाराणसी, उत्तरप्रदेश:

43. *वेदविद्या*
राष्ट्रियवेदविद्या प्रतिष्ठान
उज्जैन (मध्यप्रदेश)

44. *विश्वसंस्कृतम्* (त्रैमासिकपत्रिका)
विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थानम्,
साधु आश्रम,
होशियारपुरम्,
पंजाब:-151021

45. *वैदिक वाक्ज्योति*
गुरुकुल कांगेड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार, उत्तरप्रदेश

46. *शारदा*
2, झेलमपत्रकारनगर,
पुणे, महाराष्ट्र

47. *शोधप्रभा* (वार्षिकी)
श्रीलालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय
संस्कृत विद्यापीठम्,
कटवारिया सरायम्,
नवदेहली-110016

48. *श्रीपण्डितम्* (त्रैमासिकम्)
मधुसूदनशास्त्रिभवन, भदौनी,
वाराणसी, उत्तरप्रदेश:

49. *संगमनी* (त्रैमासिकम्)
संस्कृतसाहित्यपरिषद्,
दारागंज, प्रयाग, उत्तरप्रदेश:

50. *सम्भाषण-सन्देश:*
'अक्षरम्' 8 तम: क्रोस: फेज-2
गिरिनगरम्, बेलुरु
कर्नाटकम्-460085

51. *सन्देश:* (द्वैमासिकपत्रिका)
2/132, बलागंजम्,
कानपुरम्, उत्तरप्रदेश:

52. *संविद्* (पाक्षिकम्)
भारतीयविद्याभवन
के.एस.मुन्शीमार्ग, मुम्बई, महाराष्ट्रम्

53. *संस्कृतप्रचारम्* (मासिकम्)
105, प्राध्यापकनिवास:,
हिमाचलप्रदेशविश्वविद्यालय,
समरहिल, हिमाचलप्रदेश:

54. *संस्कृतप्रतिभा* (वार्षिका)
साहित्य आकदमी,
रवीन्द्रमार्ग:, नवदेहली-110001

55. *संस्कृतमञ्जरी*
दिल्ली संस्कृत अकादमी,
दिल्ली सर्वकार, प्लाट सं. 5,
झण्डेवाला, करोलबाग,
नवदेहली-110005

Parishisht-IV.indd 154 12-08-2016 2:17:05 PM

56. *संस्कृतमन्दाकिनी*
लोकभाषा प्रचार समिति
पुरी, ओड़िसा

57. *संस्कृतविमर्शः*
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान,
56-57, इन्स्टीट्यूशनल एरिया,
पंखा रोड, जनकपुरी,
नवदेहली-110058

58. *संस्कृतसञ्जीवनम्*
मनोरमाभवन, मार्ग सं. 6 सी,
राजेन्द्र नगर, पटना,
बिहार-800016

59. *संस्कृतसम्मेलनम्*
(त्रैमासिकपत्रिका)
श्रीरामनिरंजनमुरारका संस्कृत
महाविद्यालय चौक,
पटना नगर, बिहारः

60. *संस्कृतसाकेतम्* (पाक्षिकम्)
साकेतकार्यालय,
अखिलभारतीय बवद्वत्समितिः,
अयोध्या, उत्तरप्रदेशः

61. *स्वरमंगला* (त्रैमासिकपत्रिका)
राजस्थान संस्कृत अकादमी,
वीरेश्वर भवन गणगौर बाजार,
जयपुर, राजस्थानम्

62. *संस्कृतसौरभम्*
विद्याभारती, प्रेमकुंजम्
विन्ध्यवासिनी-पथ, कदमकुआँ,
पटना, बिहार

63. *संस्कृतामृतम्* (सप्ताहिकम्)
हयातगंजम्, टाण्डा
अम्बेडकरनगर, उत्तरप्रदेश

64. *सर्वगन्धा* (मासिकापत्रिका)
माईजी मन्दिर, अशरफाबादम,
लक्ष्मणपुर, लखनुऊ,
उत्तरप्रदेश-226003

65. *सत्यानन्दम्* (मासिकी)
एड्बहीमपुर, राजमार्ग, यादवपुर,
चित्तूर, आन्ध्रप्रदेश-510700

66. *सागरिका* (पाक्षिकपत्रम्)
सागरिका समिति, गौरीनगर
सागर, मध्यप्रदेश

67. *सारस्वतम्*
बाहरी बेगमपुर, पटना
बिहार-800009

68. *सुधर्मा* (दैनिकम्)
561, रामचन्द्-अग्रहार,
श्रीकानत पावर प्रेस,
मैसूर, कर्नाटक-570004

Parishisht-IV.indd 155 12-08-2016 2:17:05 PM

69. *सुरभारती*
सुरभारती सेवा संस्थान,
167/12, पंजाबी कालोनी,
मैनपुरी, उत्तरप्रदेश

70. *हरिप्रभा*
हरियाणा संस्कृत अकादमी
पंचकुला (हरियाणा)

Parishisht-IV.indd 156 12-08-2016 2:17:05 PM

परिशिष्ट — V

अनुशंसित पुस्तकों की सूची

संस्कृत

1. अग्रवाल, हंसराज — *संस्कृतसाहित्येतिहास:*
चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी
2. मिश्र, रामचन्द्र — *संस्कृतसाहित्येतिहास:*
चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी
3. शास्त्री, द्विजेन्द्रनाथ — *संस्कृतवाङ्मयविमर्श:*

हिन्दी

1. अग्रवाल, हंसराज — *संस्कृत साहित्य का इतिहास*
चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी-1, 1965
2. उपाध्याय, बलदेव
   1. *संस्कृत साहित्य का इतिहास*
   प्रथम भाग, दशम संस्करण, शारदा-मंदिर, वाराणसी
   2. *संस्कृत साहित्य का इतिहास*
   द्वितीय भाग, शारदा मन्दिर, वाराणसी, 1973
   3. *वैदिक साहित्य और संस्कृत*
   शारदा संस्थान, वाराणसी, 1973
3. कीथ, ए. बी. (अनुवादक- डी. मंगलदेव शास्त्री)
   1. *संस्कृत साहित्य का इतिहास*
   मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1967
4. गैरोला, वाचस्पति — *संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास*
चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी-1, 1978

5. पाण्डेय, चन्द्रशेखर — *संस्कृत साहित्य की रूपरेखा*
साहित्य निकेतन, कानपुर, 1964

6. मैकडोनल, ए. ए.
अनुवादक- चारुचन्द्र शास्त्री — *संस्कृत साहित्य का इतिहास*
प्रथम भाग, वैदिक युग
चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी

7. व्यास, भोलाशंकर — संस्कृत- कविदर्शन
चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1968

8. विण्टरनिट्ज — 1. *भारतीय साहित्य का इतिहास*
प्रथम भाग, (वैदिक साहित्य)
मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली

अनुवादक- डॉ. रामचन्द्र पाण्डेय — 2. *भारतीय साहित्य का इतिहास*
द्वितीय भाग, (रामायण, महाभारत, पुराण) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली

अनुवादक- डॉ. सुभद्र झा — 3. *भारतीय साहित्य का इतिहास*
तृतीय खण्ड, प्रथम भाग,
मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली

9. सूर्यकान्त — *संस्कृत वाङ्मय का विवेचनात्मक इतिहास*
ओरिएण्ट लॉगमेन, नई दिल्ली, 1972

English

1. Keith A.B., *Classical Sanskrit Literature*
2. Krishna Chaitanya, *History of Sanskrit Literature*
3. Krishnamacharya, M., *History of Classical Sanskrit Literature,* Motilal Banarsidas, Delhi
4. Macdonell, A.A., *A History of Sanskrit Literature,* Motilal Banarsidas, Delhi, 1962
5. Winternitz. M., *A History of Indian Literature*
Vol. III, pt. I. (Classical period)
Vol. III, pt. II. (Scientific Period)

Parishisht-V.indd 158 26-08-2016 10:09:28 AM

टिप्पणी

टिप्पणी